तुम गूलरके वृक्षसे लपट जाना । हे भद्रे ! हम तुमको यह दो पात्र देते हैं, मैंने विराटरूप भगवानकी उपासना करके इनको पाया है ; इन दोनोंमें प्रसाद है ; यह तुम खाना और यह अपनी माताको देना । ऐसा कहके भृगु मुनि अन्तर्धान हो गये । अनन्तर जब उन दोनों स्त्रियोंका ऋतुकाल आया तो वृक्षके आलिङ्गन और प्रसादके पात्रोंमें उलट पलट होगया, अनन्तर भगवान भृगुने बहुत समय व्यतीत होनेके पश्चात् दिव्य दृष्टिसे यह सब बात जानली, और फिर उसी स्थान पर आये । महा तेजस्वी भगवान भृगुने अपनी पुत्रवधू सत्यवतीसे कहा, हे भद्रे ! तुमने अपनी खीर नहीं खाई और वृक्षके लपटनेमेंभी उलटा हुआ । हे सुभ्रू ! तुमको तुम्हारी माताने ठग लिया, इस लिये तुम्हारा पुत्र होगा तो ब्राह्मण परन्तु उसकी वृत्ति क्षत्रियोंकी ऐसी होगी और तुम्हारी माताका पुत्र क्षत्री होकर ब्राह्मणका धर्म्म करेगा, यद्यपि वह महा बलवान होगा परन्तु कर्म्म साधुओंका करेगा। तब सत्यवतीने अपने श्वसुरको बारबार प्रसन्न किया और कहा कि हे भगवान् ! चाहे हमारा पोता ऐसाही हो, परन्तु पुत्र ऐसा न हो। हे पाण्डव ! भृगुने कहा कि ऐसाही होगा। तब सत्यवती बहुत प्रसन्न हुई, समय आने पर सत्यवतीको पुत्र उत्पन्न हुआ; उनका नाम यमदग्नि हुआ । भृगुवंशवर्द्धन वह पुत्र परम तेजस्वी और वीर्य्यवान हुए, उन्होंने बड़े होकर सब वेदोंको पढ़ा । सूर्य्यके समान तेजस्वी यमदग्नि अपने कर्म्मोंके द्वारा अनेक ऋषियोंसे बढ़ गये । हे पाण्डव ! हे भरत कुलसिंह ! उन्होंने समस्त धनुर्वेदको पढ़ा और चारों प्रकारके शस्त्र सीखे।

११५ अध्याय समाप्त ।

अकृतव्रण बोले, महा तपस्वी यमदग्निने चारों वेद पढ़कर महा तप किया। अनन्तर वे प्रसेन नामक राजाके यहां गये ; वहां जाकर उन्होंने राजाकी पुत्री रेणुकासे व्याह किया, भार्गव-पुत्र यमदग्नि रेणुका स्त्रीको प्राप्त करके अपने आश्रम पर आये और आज्ञाकारिणी स्त्रीके सहित तप करने लगे। रेणुकाके गर्भसे परशुरामके सहित पांच पुत्र हुए, उन सबमें छोटे परशुराम थे। किसी समय जब फल खानेवाले सब लड़के बनको फल लेने चले गये, तब व्रतधारिणी रेणुका स्नान करनेको गई ; वहां पर मृत्तिकावतके पुत्र राजा चित्ररथको पद्ममाला धारण किये स्त्रियोंके सहित इच्छानुसार जलमें क्रीड़ा करते देख और उनको अत्यन्त धनवान देख रेणुकाकी इच्छा उनसे व्याभिचार करनेकी हुई। उनको देखतेही रेणुका जलहीमें स्खलित होगई,। अनन्तर डरसे कांपती हुई वह अपने आश्रमको आई, पर यह सब समाचार उनके पतिने जान लिया। महा तेजस्वी वीर्य्यवान यमदग्निने उसको स्खलित, ब्राह्मण तेज और वीर्य्यसे रहित देखकर बहुत धिक्कार दिया। उसी समय रेणुकाके बड़े बेटे रूमण्वरण आये , उनके पीछे सुषेन, वसु, और विश्वावसुभी आगये । भगवान यमदग्निने उन सबको क्रमसे रेणुकाके मारनेकी आज्ञा दी, परन्तु उन सबने माताके स्नेहसे कुछभी उत्तर न दिया। तब भगवान यमदग्निने क्रोध करके उन सबको शाप दिया। शाप सुनतेही वे सब हरिन और पक्षियोंके समान बुद्धिहीन और मूर्ख होगये। उसी समय शत्रुओंके नाश करनेवाले परशुराम आश्रममें पहुंचे, महा तपस्वी यमदग्निने उनसे कहा कि हे पुत्र! अपनी इस पापिनी माताको मार डालो और इसका कुछभी दुःख मत करो। परशुरामने उसी समय फरसा लेकर अपनी माताका सिर काट डाला। हे महाराज! यह देखकर महात्मा यमदग्निका क्रोध उसी समय

शान्त हो गया और प्रसन्न होकर बोले, हे तात! हे धर्म्मज्ञ! तुमने हमारे वचनसे यह घोर कर्म्म किया है, इस लिये तुम्हारे हृदयमें जितनी इच्छा हो उतना वरदान मुझसे मांगो। परशुरामने अपने पितासे यह वरदान मांगा कि हमारी माता जी जाय, उसको हमारे मारनेका स्मरण न रहे, हमारे भाई पूर्व्वके समान अपनी अवस्थामें आजायं, युद्धमें हमारे समान कोई वीर न हो, और हमारी आयु बहुत हो। हे भारत! महा तपस्वी यमदग्निने प्रसन्न होकर परशुरामको सब वरदान दिये। हे पृथ्वीनाथ! किसी दिन इनके पुत्र फिर ऐसेही वनको चले गये थे, उसी समय अनूप देशके स्वामी वीर कृतवीर्य्यके पुत्र वहां आये। उनके आश्रम पर पहुंचनेसे रेणुकाने उनकी पूजा करी, परन्तु वे युद्धके मदसे उन्मत्त थे, इस लिये उस पूजासे प्रसन्न न हुए। उन्होंने उस आश्रमके बड़े बड़े वृक्षोंको तोड़ डाला, भूमिको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। रेणुका गाली देने लगी, परन्तु कार्त्तवीर्य्यने अपने बलसे उनकी गाय और बछड़ोंको छीन लिया। जब परशुराम अपने आश्रम पर आये तो यमदग्निने सब कथा कह सुनाई। परशुरामने रोती हुई गऊका शब्द सुनकर महा क्रोध किया। अनन्तर विचित्र धनुष धारण करके कालके वशवर्त्ती कार्त्तवीर्य्यके पीछे दौड़े, भगवान शत्रुनाशन परशुरामने तीक्ष्ण बाणोंसे कार्त्तवीर्य्यके परिघके समान हजार हाथोंको काट डाला। हे राजन्! परशुरामने युद्धमें पराक्रम करके कृतवीर्य्यके पुत्र अर्जुनको युद्धमें मारडाला। इसके पश्चात् अर्जुनके वंशवाले क्षत्री परशुरामसे वैर रखने लगे। एक दिन परशुरामके पीछे उन लोगोंने आश्रममें आके परशुरामके पिता तपस्वी, तेजस्वी, वीर्य्यवान और युद्ध न करनेवाले यमदग्निको मारडाला। हे युधिष्ठिर! जिस समय कार्त्तवीर्य्यके पुत्र यमदग्निको मारने लगे, उस समय वे बार बार परशुरामका नाम लेकर चिल्लाने लगे। जब शत्रुनाशन अर्जुनके पुत्र अपने बाणोंसे यमदग्निको मारकर चले गये, और यमदग्निभी स्वर्गको मरकर गये, तब भृगुनन्दन परशुराम कुशा लेकर अपने आश्रम पर पहुंचे। अपने पिताको इस प्रकार मरा हुआ देख दुःखमें भरकर रोने और चिल्लाने लगे।

११६ अध्याय समाप्त।

श्रीपरशुराम बोले, हे तात! मेरेही अपराधसे उन क्षुद्र, मूर्ख कार्त्तवीर्य्यके पुत्रोंने आपको हरिनके समान बाणोंसे मारा है; हे तात! आप तो धर्म्मके जाननेवाले उत्तम मार्गमें चलनेवाले और सब प्राणियोंके हितू थे, आपकी मृत्यु इस प्रकार क्यों हुई? उन दुष्टोंने कौन सा पाप नहीं किया, जिन्होंने तप करते हुए, युद्ध न करनेवाले, बूढ़े, आपको, बाणोंसे मारडाला? वे निर्लज्ज लोग धर्म्म जाननेवाले और युद्ध न करनेवाले आपको मारकर अपने मन्त्री और बान्धवोंसे क्या कहेंगे? हे नरनाथ! इस प्रकार महा तेजस्वी परशुरामने बहुत रोकर अपने पिताका प्रिय कार्य्य करनेवाले, शत्रुनाशन परशुरामने अपने पिताको अग्निमें जलाया और सब क्षत्रियोंके नाश करनेकी प्रतिज्ञा करी। अनन्तर महा बलवान परशुरामने अत्यन्त क्रोध कर अनेक शस्त्रोंको धारण कर कालके समान रूप धारणकरके कृतवीर्य्यके वंशको नाश करने लगे। हे क्षत्रियसिंह! कृतवीर्य्यवंशी क्षत्रियोंके सङ्ग और जो क्षत्री आये थे, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ परशुरामने उनकाभी नाश कर दिया इस प्रकार महात्मा परशुरामने इक्कीसवार पृथ्वीको क्षत्रियोंसे रहित कर दिया, और समन्तक पञ्चकतीर्थमें जाकर क्षत्रियोंके रुधिरसे पांचतलावोंको भर दिया। भृगुवंशी परशुरामने उनहीं तलावोंमें अपने पितरोंका तर्पण किया; वहीं उन्होंने साक्षात् ऋचिकका

दर्शन किया। ऋचिक मुनिने परशुरामको उस कर्म्मसे रोका; तब प्रतापवान परशुरामने यज्ञ करके इन्द्रको प्रसन्न किया, और यज्ञ करानेवालोंको सब पृथ्वी दे दी! उसी यज्ञमें परशुरामने महात्मा कश्यपको एक सोनेकी चौकी दी थी, जो चालीस हाथ लम्बी और छत्तीस हाथ चौड़ी थी। अब अनन्त पराक्रमी परशुराम इसी महेन्द्राचल पर्व्वतपर रहते हैं। हे राजन्! अनन्तर कश्यप मुनिकी सम्मतिसे खण्डक वनके रहनेवाले ब्राह्मणोंमें उस चौकी-को टुकड़े टुकड़े करके बांट लिया! इस प्रकार परशुराम और जगत्के रहनेवाले क्षत्रियोंसे वैर हुआ था, और इस प्रकार महा तेजस्वी परशुरामने पृथ्वीको जीता था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पश्चात् चतुर्दशीके दिन महा तेजस्वी परशुरामने ब्राह्मण और भाइयोंके सहित धर्म्मराज युधिष्ठिरको दर्शन दिया। महाराज युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित परशुरामकी पूजा करी। हे राजेन्द्र! राजोंमें श्रेष्ठ धर्म्मराजने ब्राह्मणोंकी भी पूजा करी। परशुरामने युधिष्ठिरकी पूजाको ग्रहणकर फिर उनकी पूजा करी और कहा कि आप एक रात्रि यहां निवास कीजिये, तब सब एक रात वहां रहे। फिर दक्षिणकी ओर चले।

११७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले अनन्तर महानुभाव महाराज युधिष्ठिर पवित्र तीर्थोंमें घूमते समुद्रके तटपर ब्राह्मणोंसे सेवित अनेक तीर्थोंको देखने लगे। हे भारत! वहांसे उत्तम चरित्र-वाले पाण्डुके पुत्र राजा युधिष्ठिर अत्यन्त पवित्र समुद्रगामिनी प्रशस्ता नाम नदी पर पहुंचे। हे परीक्षितनन्दन! वहांभी उन्होंने स्नान करके पितर और देवतोंका तर्पण किया। सब ब्राह्मणोंको बहुत धन देकर समुद्रगामिनी गोदावरी की ओर चले, अनन्तर पाप रहित महाराज वीर युधिष्ठिर द्राविड़ देशमें जाकर समुद्रके तटपर अत्यन्त पुण्ययुक्त अगस्त्य तीर्थ और महा पवित्र वारी तीर्थमें पहुंचे, वहां पर उन्होंने धनुषधारियोंमें अग्रगण्य अर्ज्जुनके उन कर्म्मोंको सुना जिनको मनुष्य लोग नहीं कर सकते हैं। वहां पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरकी महर्षियोंने बहुत पूजा करी, इससे वे बहुत प्रसन्न हुए। हे पृथ्वीनाथ! हे जन्मेजय! इस प्रकार द्रौपदी और भाइयोंके सहित पृथ्वीनाथ युधि-ष्ठिरने सब तीर्थोंमें स्नान किया और अर्ज्जुनका पराक्रम सुनके बहुत प्रसन्न हुए। समुद्रके तटवाले उन तीर्थोंमें महाराज युधिष्ठिरने एक सहस्र गोदान किया; अनन्तर अर्ज्जुनके नामसे गोदानका सङ्कल्प किया। हे राजन्! समुद्रके तटके अनेक तीर्थोंको देखते देखते अत्यन्त पवित्र सूरपारक तीर्थमें पहुंचे। वहां जानेसे उनके काम पूर्ण होगये। वहांसे कुछ दूर समुद्रके तटपर चलकर उस जगत् प्रसिद्ध वनमें पहुंचे जहां अनेक देवता और अनेक धर्म्मपरायण राजोंने तप किया था। वहां दृढ़ लम्बे हाथ वाले महाराज युधिष्ठिरने धनुषधारियोंमें अग्र-गण्य ऋचिक पुत्रकी वेदीको देखा, उस पवित्र वेदीके चारों ओर अनेक ऋषि लोग बैठे थे और पुण्य करनेवाले महात्मा उनकी पूजा करते थे। वहांसे पृथ्वीनाथ महात्मा महा-राज युधिष्ठिर वसु, वायु अश्विनीकुमार, यम-राज, सूर्य्य, कुबेर, इन्द्र, विष्णु, परमेश्वर, आदित्य, शिव, चन्द्रमा, सूर्य्य, वरुण, साध्यगण ब्रह्मा, पितरोंके सहित रुद्र, सरस्वती, और रुद्रगणोंके आश्रम तथा अन्यभी जो पवित्र और मनोहर आश्रम थे, उन सबको देखने लगे। उन सब तीर्थोंमें महाराजने अनेक ब्राह्मणोंसे व्रत कराकर बहुत रत्न दान दिया और आपनेभी सब तीर्थोंमें स्नान किया और फिर सूरपारक तीर्थमें पहुंचे। वहांसे समु-द्रके तट होकर चलते और सबतीर्थोंके दर्शन

करते हुए जगत् प्रसिद्ध ब्राह्मण और मरुत-गणोंसे कहे हुए, प्रभास तीर्थमें पहुंचे। वहां जाकर अपने भाइयोंके सहित विशाल और लाल नेत्रवाले महाराज युधिष्ठिरने स्नान किया; फिर द्रौपदी और सब ब्राह्मणोंने लोमश मुनिके सहित स्नान किया; अनन्तर महाराजने पितर और देवतोंका तर्पण किया। वहां पर वह बारह दिन रहे और केवल वायुही भक्षण किया। वहां पर धर्मधारियों-में श्रेष्ठ युधिष्ठिरने बारह दिन चारों ओर अग्नि जला कर तापी। जब यह समाचार द्वारिका-पहुंचा, तब वृष्णिवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण और बलरामने भी सुना कि स्वयं महाराजही अग्नि तापकर तप कर रहे हैं, उसी समय अपनी सेनाको सङ्ग लेकर अजमीढ़ वंशोत्पन्न युधि-ष्ठिरके दर्शनको आये। वहां जाकर वृष्णि वंशियोंने देखा कि पाण्डव लोग मैलसे भरे हुए शरीरवाले पृथ्वीमें बैठे हैं। दुःखके अयोग्य द्रौपदीको दुःखमें पड़ी देख सब लोग ऊंचे स्वरसे रोने लगे। अनन्तर महापराक्रमी महा-राज युधिष्ठिरने बलराम, श्रीकृष्ण, कृष्णके पुत्र साम्ब, और सात्यकी आदि वृष्णिवंशिओंकी यथायोग्य धर्मके अनुसार पूजा की। अनन्तर उन सब लोगोंने भी उस पूजाको ग्रहण करके पाण्डवोंका सत्कार किया। फिर जैसे इन्द्रके चारों ओर देवता लोग बैठते हैं, तैसेही युधिष्ठिरको घेरकर यादवलोग बैठ गये। अनन्तर महाराजने बनवासका सब चरित्र और अर्ज्जुनकी इन्द्रलोक यात्रा कह सुनाई। यह सुनकर और पाण्डवोंको अत्यन्त दुर्ब्बल देखकर महानुभाव यादव लोग अपनी आंखोंसे आंसू बहाने लगे।

११८ अध्याय समाप्त।

राजा जन्मेजय बोले, हे तपोधन! महानु-भाव पाण्डव लोग जब प्रभास तीर्थमें पहुंचे और जब यदु वंशी उनके दर्शनको आये तो उनका क्या वार्त्तालाप हुआ? क्योंकि सब शास्त्रोंके जाननेवाले महात्मा पाण्डव और यादव लोग परस्पर बहुतही प्रेम रखते थे। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! समुद्रके तीर प्रभास क्षेत्रकी पवित्र भूमिमें वीर यादव लोग महाराजके चारों बैठे; उन सबके बीचमें गौके दूध, कुन्दके पुष्प, चन्द्रमा और मृणालके समान सुन्दर रूपवाले हलधारी वन-मालासे विराजमान श्रीबलरामजी श्रीकृष्णसे कहने लगे। बलदेवजी बोले हे कृष्ण! धर्म्म करनेसे किसीकी उन्नति और अधर्म्म करनेसे अवनति नहीं होती, क्योंकि देखो महात्मा युधिष्ठिर जटा और भोजपत्रके वस्त्र धारण करके बनवासका दुःख सह रहे हैं, और दुर्य्योधन पृथ्वीका राज्य करता है, पृथ्वी क्यों नहीं फट जाती? इसीसे मूर्ख अधर्म्मको धर्म्मसे अच्छा समझते हैं। राज्य पाकर दुर्य्योधनका बढ़ते और महाराजको दुःख पाते देख आज सब प्रजाओंमें चारों ओर यही शङ्का फैल रही है कि अब क्या करना होगा! बड़े आश्चर्य्यकी बात है कि धर्म्मराज धर्म्म करनवाले, सत्यवादी और महादानी महाराज युधिष्ठिर तो राज्यसुखसे भ्रष्ट हों, और अधर्म्मीकी वृद्धि हो; हम नहीं जानते कि भरतकुलके प्रधान पाण्डवोंको घरसे निकाल भीष्म, द्रोण, वृद्ध राजा धृतराष्ट्र किस प्रकार सुख भोग रहे हैं? पाप रहित पाण्डवोंको वनको निकाल राजाओंमें प्रधान पापी धृतराष्ट्र परलोकमें जाकर पितरोंकी सभामें बैठ कैसे कहेंगे कि हमने सब लड़कोंके सङ्ग समानही आचरण किया था? न जाने कुन्तीके पुत्रोंको वनमें निकालके वह अन्धा राजा अपनी बुद्धिसे कुछ देखता है, या नहीं? क्योंकि उसका जन्मभी राजोंहीके वंशमें हुआ है। हमको निश्चय होता है कि अब वह पुत्रोंके सहित

शीघ्रही पितृलोककी भूमिमें जाकर वहांके सुवर्णके समान फूले हुए वृक्षोंको शीघ्रही देखेंगे। जिसने ऊंचे कन्धेवाले विशालनेत्रवाले युधिष्ठिरको शस्त्र और भाइयोंके सहित निःशङ्क होकर वनको निकाल दिया है, अवश्य उस धृतराष्ट्रकी ऊपर कहो दशा होगी। जो विशालबाहु भीमसेन शस्त्रोंके विनाही शत्रुओंकी महासेना का विनाश करते हैं, जिनका शब्द सुनतेही शत्रुयोंकी सेना विष्ठा और मूत्र परित्याग करने लगती है, वेही अनेक शस्त्र और वाणोंके धारण करनेवाले वेगवान भीमसेन आज भूख, प्यास, और मार्गकी थकाईसे दीन हो रहे हैं, ये अपने पूर्व्व सुखोंको स्मरण करते हैं। हमें निश्चय है, कि ये उस वंशका सर्व्वनाश कर देंगे, क्योंकि इनके समान पृथ्वीमें कोईभी नहीं है, सो भीम शीत और वायुसे दुःखित होकर क्या युद्धमें अपने शत्रुओंका नाश न करेंगे? जिन महारथ और वेगवान भीमसेनने एक रथसे पूर्व्वदेशके सब राजोंको सेनाके सहित जीत लिया था, वेही आज मुनियोंके वस्त्र पहनकर वनमें दुःख सह रहे हैं, जिन वेगवान सहदेवने दक्षिण देशके और सिन्धु नदीके तटवासी सब राजोंको एकलेहोने जीत लिया था, वेही आज मुनियोंका वेष धारण करके वनमें दुःख सह रहे हैं, जो युद्धमें उन्मत्त महा बलवान सहदेवने पश्चिमके सब राजोंको एकही रथसे जीत लिया था, वही आज जयधारी मलिनरूपी होकर फल मूल खाय वनमें वास करते हैं, जो महारथ द्रुपदके यज्ञकुण्डसे निकली थी, सो पतिव्रता द्रौपदी दुःख सहने में अयोग्य होनेपरभी वनमें दुःख सह रही है। ये सुख करनेके योग्य दुःख सहनेके अयोग्य तीन वर्गमें मुख्य, वायु इन्द्र और अश्विनीकुमारके पुत्र पाण्डव लोग स्त्रीके सहित धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरके सङ्ग किस प्रकार दुःख सह रहे हैं? दुर्य्योधनको बढ़ते हुए देख पर्व्वतोंके सहित पृथ्वी क्यों नहीं फट जाती है?

११६ अध्याय समाप्त।

सात्यकी बोले, हे राम! अब यह समय दुःख करनेका नहीं है, और न समय वीतने पर कुछ उपाय हो सकता है, यद्यपि युधिष्ठिर हम लोगोंसे कुछ नहीं कहते हैं, तथापि यह नियम है, कि जो लोग नाथसहित होते हैं, वे अपनेसे कोई काम नहीं करते हैं, उनके कार्य्य सहायक लोग ऐसेही सिद्ध करते हैं, जैसे ययातिके कार्य्योंको शिवि आदिने करे थे, हे राम! उन लोगोंके सब कार्य्य स्वामी लोग अपनीही इच्छासे करने लगते हैं, परन्तु ये पाण्डव लोग सनाथ होने परभी अनाथके समान दुःख भोग रहे हैं, न जाने बलराम, श्रीकृष्ण, प्रद्युम्न और साम्ब और हमारे जीतेभी महा राज युधिष्ठिर भाइयोंके सहित वनमें वसते हैं, न जाने तीन लोकके स्वामी श्रीकृष्ण इनके नाथ क्यों कहाते हैं? वस अब इसी समय विचित्र कवच धारण करनेवाली यादवोंकी समस्त सेना हस्तिनापुर पर चढ़ाई करे, इसही समय वान्धवोंके सहित दुर्य्योधन यादवोंकी सेनासे मरकर यम लोकको जाय, आप अपने क्रोधसे पृथ्वीको वेष्टित कर सकते हैं जिस प्रकार इन्द्रने वृत्रासुरको मारा वैसेही सारङ्ग धनुषधारी कृष्णभी दुर्य्योधनका नाश करें जो हमारे भाई, मित्र और गुरु कृष्णके प्राणके समान अर्ज्जुन हैं, वे भी वैठे रहें; क्योंकि मनुष्य सुपुत्र और शिष्यका शत्रुके मारने वास्ते चाहते हैं, इसी लिये मैं दुर्य्योधनका उत्तम शस्त्र और सर्पके समान तथा अग्निके समान वाणोंसे शिर काटंगा, उसकी सब सेनाको अपने तीक्ष्ण खड्गसे काटकर दुर्य्योधनके सब अनुचरोंको काटकर समस्त कौरवोंका क्षय करूंगा। हे रोहिणी पुत्र! सब वीरलोग भयानक युद्धमें प्रसन्नता पूर्व्वक मेरे शस्त्रोंकी चतुरता देखें, समस्त कुरुवीर प्रलयकालकी

अग्निके समान एकले प्रद्युम्नके तीक्ष्णशस्त्रोंको नहीं सह सकते हैं! प्रद्युम्न, कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, विकर्ण और कर्णको जीत सकते हैं। मैं जयाके पुत्रके पराक्रमको जानता हूं जो दुःशासनको कर्णके समेत रणमें जीतनेको समर्थ है। जाम्बवतीके पुत्र साम्बको रणमें जीतनेको कौन समर्थ है? जिसने सम्बर दैत्यकी सैन्यको नाश किया था. कौन ऐसा वीर है, जो रणमें रथपर चढ़कर उस साम्बसे लड़े? जैसे कालके मुखमें जाकर कोई नहीं बचता ऐसेही साम्बके सन्मुख आकर कोई नहीं बच सकता। द्रोणाचार्य्य और भीष्म तथा सोमदत्तको सेनाके सहित तीक्ष्ण बाणोंसे जलानेमें कृष्णही समर्थ हैं। उत्तम बाणधारी चक्रपाणि कृष्णको सुर और असुरोंमें कौन अजेय है? अनिरुद्ध ढाल तलवार लेके धृतराष्ट्रके पुत्रोंके सिर रणभूमिमें ऐसे काटके गिरावेंगे, जैसे यज्ञभूमिमें ऋषिलोग कुशा डालते हैं। गद, उल्मुक, वाहुक, भानुनिथ, निषठ ये सब कुमार बड़ेही वीर हैं, ऐसेही सारण और चारुदेष्ण अपने कुलके अनुसार वीरताका रणमें दिखलावें। वृष्णिवंश भोजवंश और शूरसेन वंशके वीर लोग युद्धमें धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारकर यशको बढ़ावें, तब अभिमन्यु सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य करे, और धर्म्मात्माओंमें श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिरने जैसी जुएमें प्रतिज्ञा करी है, उसे पालन करें पश्चात् हमारे बाणोंसे जिनके शत्रु काटे गये हैं, वह धर्म्मराज युधिष्ठिर धृतराष्ट्रके पुत्र और कर्णसे रहित पृथ्वीका पालन करें। यही हमारा यशको बढ़ानेवाले कर्त्तव्य है।

वासुदेव बोले, हे माथुर! तुम्हारे वचनको हम लोग मानते हैं, परन्तु यह कुरुश्रेष्ठ युधिष्ठिर पराई जीती हुई पृथ्वीको लेना नहीं चाहते, यह महात्मा काम, क्रोध वा लोभसे अपने धर्म्मको नहीं छोड़ेंगे, ऐसेही भीम अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, और द्रौपदी भी धर्म्मको नहीं छोड़ेंगे। भीम और अर्ज्जुन दोनोंही युद्धमें अजेय हैं। माद्रीनन्दन नकुल और सहदेवकी सहायता पाकर क्या वह सम्पूर्ण पृथ्वीको वशमें नहीं कर सकते हैं? जब पाञ्चालपति कैकय देशके राजा, महात्मा चेदिपति और हम सबलोग रणमें लड़ेंगे तो सब शत्रु नष्ट होजायंगे।

युधिष्ठिर बोले, हे कृष्ण! मुझको राज्य अत्यन्त प्रिय नहीं है, एकले कृष्णही यथार्थ रूपसे मुझे जानते हैं, और कृष्णको मैं यथार्थ रूपसे जानता हूं। हे सात्यकी। जब यह पुरुषोत्तम युद्धका समय आया जानेंगे तब तुम युद्धमें दुर्य्योधनको जीतना, हे दशार्हवीर! आपलोग नरलोकके नाथ विशेष कर मेरे नाथ हैं। इस समय यादव लोग जायं, धर्म्ममें कोई प्रमाद न करे, मैं फिर आप लोगोंको सुखसे देखूंगा। यादव लोग सबलोगोंसे भेट करके बड़ोंको प्रणाम और बालकोंको प्यार करके अपने घरको चले गये, और पाण्डव लोगभी तीर्थमें विचरने लगे। कृष्णको विदा करके धर्म्मराज उस पयोष्णी नामको नदी पर गये जिसे विदर्भराजने सुन्दर बनाया था, और जिसका जल परम पवित्र है, भाई, सेवक और लोमश ऋषिके सहित उस तीर्थमें जाके केवल जल पीके व्रत किया। ब्राह्मणोंमें मुख्य महात्मा लोग राजा युधिष्ठिरकी स्तुति करने लगे।

१२० अध्याय समाप्त।

लोमश ऋषि बोले, हे राजन्! इस तीर्थपर राजा नृगने इन्द्र महाराजको सोम यज्ञसे प्रसन्न किया था। सुनते हैं, कि यहीं पर देवतोंके और लोकपालोंके सहित सात अश्वमेध यज्ञ करके राजा नृगने इन्द्र महाराजका प्रसन्न किया था। सातों यज्ञोंमें जितनी सामग्री थी, सब सुवर्णकी थी, जो पात्र लकड़ी

और मट्ठीके बनते थे, वे सब सुवर्णा के थे। यज्ञ मण्डप यज्ञके खम्भे, सोमरस पीनेके पात्र, शाकल्य रखनेके पात्र स्रुक सौ स्रुवा ये सब सुवर्णा हीके थे, सातों यज्ञमें यह सब सामग्री अलग अलग बनवाई गई थीं। एक एक यज्ञमें सात सात यूप और चाषाल (यज्ञस्तम्भ) बने, उनसे यज्ञकी महाशोभा हुई थी। हे युधिष्ठिर! उन यज्ञोंमें इन्द्रादिक देवता सोमपान करके और ब्राह्मण दक्षिणा पाके प्रसन्न हुए थे। एक एक यज्ञमें ब्राह्मणोंको मणी और सोना मिला था। हे महाराज! जैसे जगत्में बालूके कणिका, आकाशकेतारे और वर्षाकी वुन्द अनगिनत होते हैं, ऐसेही राजा नृगने जो दक्षिणामें धन दिया था, वह असंख्य था। यदि ऊपर लिखी वस्तुओंकी संख्या हो, तो उस दक्षिणा देनेवाले राजाकी दक्षिणाके धन-काभी प्रमाण हो। विश्वकर्म्माने जा सोनेकी गाय बनाई थीं, उन्हें देके अनेक देशोंसे आये हुए ब्राह्मणोंको राजा नृगने तृप्त किया था। हे पृथ्वीनाथ! उसके यज्ञमण्डपोंसे बहुत थोड़ी पृथ्वी खाली रही थी। हे भरतनन्दन! उन यज्ञके प्रतापसे राजा नृगको इन्द्र लोक प्राप्त हुआ, जो कोई इस नदीमें स्नान करता है, वहभी राजा नृगकी गतिको पाता हैं। तुमभी भाइयोंके सहित इसमें स्नान करके पापोंसे छूटोगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे निष्पाप जनमे-जय! राजा युधिष्ठिर पयोष्णी नदीमें भाइयोंके सहित स्नान करके वैदूर्य्य पर्व्वत और महा नदी नर्म्मदापर पहुंचे, वहांभी लोमश ऋषिने सब तीर्थोंके महात्म्य कहे, जिसको सुनके राजा युधिष्ठिर बहुत प्रसन्न हुए, एवम् ब्राह्म-णोंको बहुतसा धन दान किया। श्रीलोमश ऋषि बोले, हे राजन्! वैदूर्य्य पर्व्वतको देखके और नर्म्मदा स्नान करके राजा लोग देव-लोकको प्राप्त होते हैं! हे मनुष्योंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर। यह द्वापर और त्रेतायुगकी सन्धि है, इसमें अवश्य नर्म्मदाका स्नान करना चाहिये यह राजा सर्य्यातिके यज्ञका देश प्रकाशमान है, यहां पर साक्षात् अश्विनी-कुमारोंने विश्वा-मित्रके सहित सोमपान किया था, महेन्द्रके ऊपर यहीं भृगुवंशी च्यवनने इन्द्रपर क्रोध किया था और उसे स्तम्भ करके अश्विनी-कुमारोंको सोमपान कराया था। च्यवन ऋषिने राजपुत्री सुकन्यासे यहीं विवाह किया था।

राजा युधिष्ठिर बोले, महाराज इन्द्रको च्यवनने कैसे स्तम्भित किया था और वे इन्द्रपर क्यों क्रुद्ध हुए थे, जिस प्रकारसे अश्विनी-कुमारोंको सोमपान कराया था, यह सब वृत्तान्त आप मुझसे कहिये।

१२१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले, हे राजन्! महर्षि भृगुके पुत्र च्यवन ऋषिने इस तालावके किनारे महातप किया था, वह एकही स्थानमें तप करते हुए बहुत कालतक बैठनेसे अचल होगये थे, लताओंसे उनका शरीर छिप गया था और चोटियोंने उसके शरीर पर बांमी बना ली थीं, वामीसे छिपे हुए वह महात्मा मट्टीका पिण्डसा मालूम होते थे तौभी तप किये जाते थे, कुछकालके पीछे राजा सर्य्याति इस मनोहर तालाव पर विहार करने आये, राजा सर्य्यातिके चार हजार स्त्रियां थीं और एकही अच्छी भौंहोवाली सुकन्या नाम्नी कन्या थी। हे भारत! वह उत्तम आभूषणोंको पहरे हुए सखियोंके सहित च्यवनकी वामीपर आई, वहांपर मनोहर वनस्पतियोंको चुनती हुई सखियोंके सङ्ग विहार करने लगी। रूप, अवस्था, मद, और कामदेवसे भरी हुई उस कन्याने पुष्पोंसे युक्त एक वृक्षकी शाखाको तोड़ा, उस एकान्तमें घूमनेवाली एक वस्त्र पहने हुए सुकन्याको च्यवन ऋषिने विजुलिके

समान घूमती हुई देखा, तपोबलसे युक्त महर्षि-ने बड़ी धीमी बोलीसे कुछ कहा, सुकन्याने ऋषिकी कोमल वाणीको कुछभी न सुना, तत्पश्चात् बांमीके भीतर च्यवन मुनिकी चमकती हुई आंखोंको उस कन्याने देखा, बुद्धिके मोहसे सुकन्याने च्यवन ऋषिकी आखोंमें यह क्या है, ऐसा कहते हुए कांटे चुभो दिये, नेत्रोंके फूट-नेसे क्रोधी च्यवन ऋषिकी बड़ा क्रोध हुआ, तभी राजा सर्यातिकी सेनाका विष्टा और मूत्र बन्द होगया। सेनाके मूत्र और विष्टा बन्द होजानेसे सब लोग घबराये, राजाने सब सेनासे पूछा कि तप करनेवाले वृद्ध विशेषत: क्रोधी महात्मा च्यवनका आज किसने अपराध किया? चाहे ज्ञानसे वा अज्ञानसे जिसने अपराध किया वह शीघ्र कह दे। सैनिकोंने कहा कि महा-राज! हम नहीं जानते किसने अपराध किया है। तब राजाने बहुत क्रोधसे बन्धुवान्धवोंसे पूछा, उन्होंनेभी कहा महाराज हम नहीं जानते किसने अपराध किया है, तब सुकन्याने सेनाके सब मनुष्य तथा अपने पिताको दुःखी देखके यह वचन कहा, महाराज! मैंने वनमें घूमनेके समय एक वामीसें चमकता हुआ कोई जीव देखा था, उसे जुगनुके समान चमकता देखके पास जाके बींध दिया। सुकन्याकी बात को सुनके राजा शर्याति शीघ्रतासे बामीके पास गये, वहां जाके तपस्या और अवस्थामें बड़े च्यवनको देखा और सेनाके दुःख निवारणके निमित्त हाथ जोड़के प्रर्थना करी, कि हे महर्ष! कन्याने जो अज्ञानसे आपका अपराध किया है, उसे क्षमा कीजिये, भृगु पुत्र च्यवनने राजासे कहा कि तुम्हारी कन्याने रूप और यौवनके अभिमानसे मेरे नेत्रोंको फोड़ा तथा मेरा अपमान किया है, इस लिये तुम्हारी कन्याको लेकरही मैं क्षमा करूंगा, हे पृथ्वी-नाथ! मेरे वचनको सत्य समझो। श्रीलोमश ऋषि बोले, हे युधिष्ठिर! ऋषिके वचन सुन कर राजा शर्यातिने विना विचारे च्यवनको अपनी कन्या दे दई, उस कन्याको लेके च्यवनने अपने क्रोधको शान्त किया, राजा शर्याति अपनी सेनाके सहित नगरको चले गये। सुकन्या ऋषिको पति पाकर बड़ी प्रीतिके साथ तप और नियममें स्थित होके पतिकी सेवा करने लगी। अग्नि और अतिथियोंकी सेवाको देखके च्यवन ऋषि उससे बहुत प्रसन्न हुए।

१२२ अध्याय समाप्त!

श्रीलोमश ऋषि बोले, किसी समय घूमते हुए अश्विनी कुमार देवतोंने स्नान किये हुए सुकन्याको देखा, इन्द्रकी पुत्रीके समान मनो-हर गात्रवाली सुकन्याको देख करके अश्विनी-कुमारोंने यह वचन कहे। हे सुजघने! हम तुम्हें जानना चाहते हैं, कि तुम किसकी स्त्री हो? सुकन्याने लज्जित होके कहा, हे देवतोंमें उत्तम अश्विनीकुमारो! तुम मुझे राजा शर्या-तिकी कन्या और च्यवन ऋषिकी स्त्री समझो। अश्विनीकुमारोंने इसके कहा कि पिताने बूढ़ेके सङ्गकैसे तुम्हारा विवाह कर दिया, इस वनमें तुम विजलीके समान शोभायमान हो, तुम्हारे समान रूपवाली स्त्री देवतोंमेंभी हमने नहीं देखी, अलङ्कार और उत्तम वस्त्रोंसे रहितभी तुम इस वनकी शोभाको बढ़ाती हो, सब आभूषणोंसे युक्त उत्तम वस्त्र पहरे जैसी स्त्री शोभित होती है, उनसेभी उत्तम तुम विना आभूषणोंके शोभित हो, किस कारणसे तुम ऐसे वृद्ध पतिकी सेवा करती हो जो तुम्हारे भरणपोषणमें असमर्थ है? तुम च्यवनको छोड़ कर हम दोनोंमेंसे एकको पति बनाओ, अपने यौवनको वृथा मत गंवाओ। सुकन्या ऐसे वचन सुनके बोली, हे देव-वैद्यो! मुझे तुम अपने पति च्यवनमें प्रीति वाली समझो और कदापि ऐसे कठोर वचन मत कहो। तब अश्विनीकुमार बोले कि हम तुम्हारे पतिको रूपयुक्त जवान बना देंगे, तुम

अपने पतिको जल्दी बुला लाओ। उनके बचनको सुनके सुकन्या च्यवन ऋषिके पास गई, और अश्विनीकुमारोंके बचनको सुनाया। च्यवनने कहा कि बहुत ठीक है। अश्विनीकुमारोंने कहा कि इस तालावमें स्नान करनेको च्यवन ऋषि जायं, तत्क्षणही रूपकी लालसासे च्यवन ऋषि उस तलावमें घुस गये। अश्विनीकुमार भी उनके पीछे तलावमें घुसे; एक मुहूर्त्तके पश्चात् वह तीनों दिव्यरूपवाले जवान उत्तम कुण्डल पहने रूप युक्त होकर तालावसे निकले और सुकन्यासे बोले कि हे उत्तम वर्णवाली! हे सुन्दरी! हम तीनोंमेंसे तेरी जिसे इच्छा हो एकको पति बनाले। हे सुश्रोभने! जिस पर तेरी प्रीति हो, उसहीको पति बना। सुकन्याने सबको समान रूप और समान अवस्थावाले देखकरभी अपने पतिको ही पति वरण किया। च्यवन ऋषि रूप, यौवन और स्त्रीको पाके बहुत प्रसन्न हुए और अश्विनीकुमारोंसे बोले, जैसे तुमने मुझे रूप और युवा अवस्थासे युक्त किया है, वैसेही मैं तुमको सोमपान कराऊंगा, देवराज इन्द्रको तुम्हारे सामने पराजित करूंगा। च्यवन ऋषिके ऐसे बचन सुनके अश्विनीकुमार प्रसन्नचित्त होके स्वर्गको चले गये और च्यवन ऋषि तथा सुकन्या आनन्दसे विहार करने लगे।

१२३ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले, राजा सर्यातिने सुना कि च्यवन ऋषिको यौवन और स्वरूप प्राप्त हुआ है, अपनी सेनाके सहित च्यवन ऋषिके आश्रम पर आये। च्यवन और सुकन्याने राजा शर्याति और उनकी स्त्रियोंका बड़ा आदर किया; ऋषिसे आदर पाकर राजा शर्याति कुछ दिन तक वहां अनेक प्रकारकी उत्तम कथा सुनते कुछकाल तक रहे, च्यवन ऋषि राजा शर्यातिसे बोले, हे राजन! तुम सामग्री इकट्ठी करो मैं तुम्हें यज्ञ कराऊंगा। च्यवन ऋषिके बचनको सुनकर बड़ी प्रसन्नतासे राजाने यज्ञ करना स्वीकार किया, उत्तम दिनमें यज्ञकी सब सामग्री इकट्ठी करके राजा शर्यातिने यज्ञ मण्डप बनवाया। हे राजन्! भृगुपुत्र च्यवनने उस मण्डपमें राजा शर्यातिसे यज्ञ आरम्भ कराया। हे राजन्! युधिष्ठिर! उस यज्ञमें जो आश्चर्यसी बात हुई सो मुझसे सुनो। च्यवन ऋषिने अश्विनीकुमारोंको सोम दिया। राजा इन्द्रने च्यवन ऋषिको सोम देनेसे वारण किया। इन्द्र बोले यह दोनों अश्विनीकुमार स्वर्गमें देवतोंकी दवा करते हैं इस लिये इनको सोमदान करना उचित नहीं है। श्रीच्यवन ऋषि बोले, हे इन्द्र! यह दोनों बड़े महात्मा, बड़े उत्साही, रूप और धनसे युक्त हैं, उन्होंने मुझे देवतोंके समान वृद्धावस्था रहित किया है, हे पुरन्दर! तुम और सब देवता यज्ञभाग पावें, पर ये क्यों न पावें? यह भी तो देवता हैं। इन्द्र बोले, हे च्यवन ऋषि! यह दोनों चिकित्सा करनेवाले, कामरूपी और मनुष्य लोकमें घूमनेवाले हैं, तब किस रीतिसे सोमको पाने योग्य हैं? ज्योंही इन्द्र इस बचनको दूसरीवार कहना चाहते थे, त्योंही भृगुपुत्र च्यवनने इन्द्रका अनादर करके अश्विनीकुमारोंको सोम प्रदान किया। अश्विनीकुमारोंको सोम देते देखकर बल-नाशक इन्द्रने ऐसे बचन कहे, हे च्यवन! यदि तुम इन दोनोंको सोम दोगे तो मैं तुम्हारे घोर वज्र मारूंगा। ऐसा कहने परभी इन्द्रकी तरफ देखके च्यवनने अश्विनीकुमारोंको सोम प्रदान किया। तब इन्द्रने च्यवन ऋषिके ऊपर वज्र चलाया, च्यवन ऋषिने इन्द्रके हाथको स्तम्भित कर दिया। च्यवनने मन्त्रसे अग्निको प्रज्वलित करके देवराज इन्द्रको भस्म कर देनेकी इच्छा करी। तब उस यज्ञकुण्डसे महापराक्रमी मद नामक महा असुर उत्पन्न हुआ, इस महा असुरके शरीरको देखनेमें

सब कोई सुर और असुर असमर्थ हुए, उसका मुख निकली हुई दाढ़ोंसे महा भयङ्कर जान पड़ता था उसका एक ओठ पृथ्वी पर और एक आकाशमें लगा था, चार दाढ़ उसकी सौ सौ योजनकी थीं और दांत दस दस योजनके थे, अटारीके शिखरके समान ऊंचे तथा त्रिशूलके समान तीक्ष्ण दांत थे। पर्व्वतके समान दोनों हाथ बहुत लम्बे, नेत्र सूर्य्य चन्द्रमाके समान और मुख प्रलयकी अग्निके समान था, उसकी चपल जीभसे जान पड़ता था, कि जगत् को अभी चाट जायगा, वह राक्षस बड़े क्रोधसे इन्द्रकी तरफको दौड़ा, इसके शब्दसे सब जगत भर गया।

१२४ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले, उस भयानक रूपवाले राक्षसकी मुंह पसारे आता हुआ देखके इन्द्र भयसे बहुत व्याकुल हुए, उनके दोनों हाथ स्तम्भित होगये। तब इन्द्र च्यवन ऋषिसे ऐसा बोले कि, हे भार्गव! आजसे यह दोनों अश्विनी कुमार सोमरस पीनेके योग्य हुए, इस मेरे वचनको सत्य समझके मेरी रक्षा करो, हे विप्रर्षे! तुम्हारा वचन कदापि मिथ्या नहीं होगा, यह अश्विनीकुमार यज्ञमें भाग पाने योग्य हुए, यह तुम्हारा प्रताप प्रकाशित रहेगा, इस सुकन्याके पिताका यश जगत्में प्रसिद्ध हो, इस लिये मैंने तुम्हारे प्रतापका प्रकाश किया, हे भृगुनन्दन! तुम मेरे ऊपर कृपा करो, जैसा तुम चाहते हो वैसाही हो। इन्द्रके ऐसा कहने पर महात्मा भृगुनन्दनका क्रोध शान्त हुआ और इन्द्रको मदने छोड़ दिया। वह मद मद्यपानमें, स्त्रियोंमें जुएमें और शिकारमें जा बसा, हे राजन्! युधिष्ठिर! इस रीतिसे मदको स्थगित करके इन्द्रको अश्विनीकुमार तथा अन्य देवतोंको शान्त करके च्यवन ऋषिने अपने यशको जगतमें फैलाया और सुकन्याके सहित वनमें विहार करने लगे, उनही च्यवन ऋषिका यह तलाब है। इसमें तुम अपने भाइयोंके सहित स्नान करके पितरोंका तर्पन करो, हे भारत! इस तीर्थको देखके फिर शिकताक्ष तीर्थको चलो, सैन्धवारण्यमें चलके छोटी छोटी नदियोंके दर्शन करो, पुष्कर तीर्थमें चलके वहांके जलका स्पर्श करो। महादेवके मन्त्रको जपनेसे तुम्हें परम सिद्धि प्राप्त होगी। हे राजन्! यह द्वापर और कलियुगकी सन्धि है, यह सामने सब पापोंका नाश करनेवाला आर्चीक पर्व्वत दीखता है, इसमें बुद्धिमान मरुतगण निवास करते हैं। हे युधिष्ठिर! यहां देवतोंके अनेक प्रकारके स्थान हैं, यही चन्द्रमा तीर्थ है, जिसकी अनेक ऋषि उपासना करते हैं, वैखानस वालखिल्या और वायुभची पावकगण यहीं रहते हैं। तीन शृङ्ग और तीन झरने यहां परम पवित्र हैं, उनकी प्रदक्षिणा करके जल स्पर्श कीजिये, राजा शान्तनु, नरपति सुनक और नरनारायण ऋषि यहींसे उत्तम स्थानको प्राप्त हुए हैं। यहां देवता लोग और पितर लोग सदाही निवास करते हैं, इस आर्चीक पर्व्वतकी तुम पूजा करो। हे पृथ्वीनाथ! यहां पर अनेक ऋषियोंने यज्ञ करके सोमपान किया है, यहीं अक्षय प्रवाहवाली यमुना है, नकुल, सहदेव, द्रौपदी भीम और हम सब आपके सङ्गमें यहां चलते हैं यह इन्द्रका पवित्र झरना है, यहां धाता विधाता और वरुण ऊपरसे आते हैं। हे राजन्! यहां पर शान्त चित्तवाले परम धर्म्मात्मा कोमल वृत्तिवाले सैव लोग निवास करते हैं। हे राजन्! यही महर्षि लोगोंसे सेवित यमुना है, जिस पर अनेक प्रकारके पुण्य यज्ञ हुए हैं, यहीं पर महा धनुर्धारी राजा मान्धाताने सोमिक और साहदेवी यज्ञ करी थीं।

१२५ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मण! राजशार्दूल तीनों लोकोंमें विख्यात राजा मान्धाता युवनाश्वके पुत्र कैसे हुए थे? और किस प्रकारसे ऐसी उत्तम गतिको प्राप्त हुए थे, जिससे तीनों लोक उनके ऐसे वशमें हो गये थे, जैसे विष्णुके हों, हे ब्राह्मण! मैं उन बुद्धिमान् इन्द्रके समान यज्ञकारी राजा मान्धाताके चरित्र सुना चाहता हूं उस अतुल पराक्रमी राजाके जन्मका वृत्तान्त आप कहनेमें कुशल हैं। श्रीलोमश ऋषि बोले, हे राजन्! आप सावधान होके उस महात्मा राजाके चरित्र सुनिये, जैसे लोकमें उनका नाम मान्धाता प्रसिद्ध हुआ। इच्वाकु वंशमें युवनाश्व नामक राजा हुए थे, जिन्होंने बहुत दक्षिणावाली यज्ञ करी थी। एक हजार अश्वमेध करके औरभी बहुत सी यज्ञ करी थीं। यह राजा अपुत्र था इस लिये मन्त्रियोंको राज्य सौंपकर वनको चला गया। शास्त्रमें लिखी विधिके अनुसार योगाभ्यास करने लगा। एक समय राजा भूख और प्याससे व्याकुल हुआ, भृगु ऋषिके आश्रममें गया, उसी रात्रिमें भृगुने सौद्युम्न राजाके वास्ते पुत्रेष्टि यज्ञ करी थी, राजा युवनाश्व सौद्युम्नसे पहले आश्रम में पहुंचा, जहां मन्त्रसे पवित्र किये हुए कलशमें जल भरा रक्खा था। ऋषि लोग थककर सब सो रहे थे, राजाने जाकर उसी समय ऋषियोंसे जल मांगा, परन्तु सूखे कण्ठका कोमल शब्द ऋषियोंने न सुना, तब राजाने कलशके पास जाकर जल पिया और बहुत शान्त हुआ। जब ऋषि लोग उठे तो उन्होंने कलशको जलसे खाली देखा और सब लोगोंसे पूछा कि यह किसका निन्दित कर्म्म है? राजा युवनाश्वने कहा, कि यह कर्म्म मेरा है। भृगुने कहा कि यह तुमने अच्छा कर्म्म नहीं किया, यह जल पुत्रकेवास्ते मन्त्रोंसे शुद्ध किया गया था, मैंने तप करके पुत्रकेवास्ते यह जल रखा था, इस लिये, हे अतुल पराक्रम! तुम्हारे ऐसा प्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा जो अपने बलसे इन्द्रकोभी परास्त करेगा, क्योंकि हम अपने तपोबलको मिथ्या नहीं कर सकते हैं, यह ठीक है, कि प्रारब्ध बहुत बलवान है, मैंने जो अपने तपके बलसे जल मन्त्रित किया था, उसके प्रतापसे तुम्हारे बड़ा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न होगा, हम लोग तुम्हारे वास्ते अद्भुत पुत्रेष्टि यज्ञ करेंगे, जिससे तुम्हारे इन्द्रके समान पुत्र उत्पन्न होगा और गर्भधारणका दुःखभी तुमको प्राप्त न होगा। तब सौ वर्ष पूरे होनेके पश्चात् महात्मा राजा युवनाश्वकी बायीं कोख फटी और सूर्य्यके समान एक पुत्र उत्पन्न हुआ, परन्तु राजायुवनाश्व मरे नहीं; यह एक बड़ा अद्भुत कर्म्म हुआ, महाराज महा तेजस्वी इन्द्र उस पुत्रको देखनेके वास्ते आये। इन्द्रसे देवतोंने कहा, इसे कौन पालेगा, इन्द्रने अपनी कन अंगुली उस बालकके मुखमें दे दी और कहा कि मैं इसको पालूंगा। तबही इन्द्रादिक देवतोंने उस बालकका नाम मान्धाता रखा। इन्द्रकी कन अङ्गुलीको पीकर वह बालक बढ़ने लगा, उस बालकको ध्यान मात्रसे धनुर्व्विद्या, वेद विद्या सब प्राप्त हुई, आजगव नामक धनुष सींगके बने बाण, काटनेके अयोग्य कवच, तत्क्षण उसको प्राप्त हुये। इन्द्रने अपने हाथसे उसका अभिषेक किया, राजा मान्धाताने तीनों लोकको ऐसे वशमें किया, जैसे विष्णु तीनों लोकको वशमें रखते हैं, उसका राज्यचक्र कहींभी खण्डित नहीं था, अनेक प्रकारके रत्न उस राजर्षिको आपही मिल गये। उसके राज्यकी पृथ्वी सम्पूर्ण धनोंसे भरी थी, उसने अनेक प्रकारके यज्ञ किये, उचित धर्म्मों तथा यज्ञोंके करनेसे इन्द्रके आधे आसनको उसने प्राप्त किया, उस महा तेजस्वी राजाने सम्पूर्ण पृथ्वी समुद्र और नगरोंके सहित एक दिनमें जीती थी, उसके यज्ञ मण्डपोंसे सब पृथ्वी व्याप्त हुई कहींभी खाली न रही, सुनते हैं, कि राजा-

मान्धाताने दश हजार पद्म गोदान ब्राह्मणोंको दिये थे। बारह वर्षकी अनावृष्टिमें उसने खेती के उत्पन्न करानेकेवास्ते इन्द्रको देखते वर्षा की थी, उस राजा मान्धाताने चन्द्रवंशी गान्धार देशके राजाको मेघके समान गर्जते हुए तीक्ष्ण वाणोंसे मारा था, उस बुद्धिमान राजाने चारों प्रकारकी प्रजाकी रक्षा की थी, उसने अपने तपके तेजसे तीनों लोकोंको तपाया था, उस सूर्यके समान तेजस्वी राजाका पवित्र कुरुक्षेत्रमें यह यज्ञस्थान है। हे राजन्! यह मैंने आपसे राजा मान्धाताके चरित्र और जन्मकी कथा कही।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, ऐसे लोमशके वचन सुनके कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने फिर लोमशसे प्रश्न किया।

१२६ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ! राजा सोमक कैसा पराक्रमी और कैसा कर्म करनेवाला था, यह आप मुझसे ठीक ठीक कहिये. श्रीलोमश ऋषि बोले, हे युधिष्ठिर! धर्म परायण सोमक नामक एक राजा था, उसके समान सौ स्त्री थीं, उसने पुत्र उत्पन्न करनेके लिये बहुत यत्न किये, पर कोई पुत्र न हुआ। जब राजा बूढ़ा हुआ तब जन्तु नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ माताओंने उसे लेके पिछवाड़ेमें फेंक दिया। हे पृथ्वीनाथ! जब उस जन्तुको चौंटियोंने काटा, तब उसने भयानक शब्द किया, तब सब माताओंने बहुत दुःखी होके जन्तुको रोनेसे रोका, परन्तु राजा सोमकने अपने मन्त्रीगण और पारिषदोंके बीचमें बैठे हुए उसका शब्द सुन लिया, उसी समय क्षत्ताको भेजकर निश्चय किया कि यह काहेका शब्द है? क्षत्ताने जो ठीक वृत्तान्त था सो राजासे आकर कह दिया। राजा सोमक उस बातके सुनतेही मन्त्री और ऋत्विजके सहित शीघ्रता से उठके रनिवासमें गये और वहांसे पुत्रको लेके सभामें आबैठे। महाराज सोमक बोले, एक पुत्रवालेको धिक्कार है, एक पुत्रवालेसे बिना पुत्रका मनुष्य अच्छा। प्राणी सदा सन्देहमें रहता है, इस लिये पुत्रकी इच्छासेही सौ स्त्रियां रखो हैं, पर उनमेंसे किसीकेभी पुत्र नहीं। किसी प्रकारसे यह एक पुत्र जन्तु उत्पन्न हुआ भी है, तौभी किसी योग्य नहीं, इससे अधिक मुझे क्या दुःख होगा? मेरी और मेरी स्त्रियों-की अवस्थाभी व्यतीत होगई, इस कारण हम सबके प्राण इसी जन्तुमें लगे रहते हैं, यदि ऐसा कोई उपाय हो, जिसमें मेरे सौ पुत्र उत्पन्न हों, यदि वह कर्म कठिनभी होगा तौभी मैं अवश्य करूंगा। ऋत्विज बोला, कि ऐसा कर्म है, जिससे सौ पुत्र हो सकते हैं, हे सोमक! यदि तुम उसे कर सको तो मैं कहूं? राजा सोमक बोले, कि चाहे करने योग्य हो वा न करने योग्य हो जिससे मेरे सौ पुत्र हों, आप उस कर्मको कहिये। ऋत्विज बोले हे राजन्! आप जन्तुसे यज्ञ कीजिये तो आपके सौ पुत्र होंगे। जब चर्बीकी होमकी जायगी, तब उसके धूएंको सूंघके तुम्हारी सब स्त्रियोंके पुत्र उत्पन्न होंगे, उस यज्ञमें मरनेसे उसी स्त्रीके जिसका यह अब पुत्र है, उसीके फिर उत्पन्न होगा, और इसकी कोखमें सोनेका एक चिह्न रहेगा।

१२७ अध्याय समाप्त।

राजा सोमक बोले, हे ब्राह्मण! जो जो काम करने चाहियें सो सब आप आरम्भ कीजिये मैं पुत्रकी इच्छासे आपके वचन करूंगा, श्री लोमश ऋषि बोले, तब उस ऋत्विजने सोमक यज्ञ आरम्भ करके जन्तुको मारना चाहा, पर जन्तुओंकी माता पुत्रको छीनने लगीं और हाहा करके रो कर कहने लगीं; हा हमारा

नाश हुआ, ढहना हाथ पकड़के जन्तुको माता खींचती थीं और बायां हाथ ऋत्विज खींचता था, जैसे मृगी रोती है, इस प्रकार सब माता रोती थीं, ऋत्विजने बलसे बालकको खींच कर उसकी चर्बीसे हवन किया, स्त्रियोंने उस गन्धको सूंघके महा हाहाकार मचाया, यज्ञके प्रतापसे सब स्त्रियोंके गर्भ रह गया। दशवें महीनेमें राजा सोमकके एकसौ पुत्र उत्पन्न हुए। जन्तु सबसे बड़ा हुआ, सब माताओंको जैसा जन्तु प्यारा था वैसा और पुत्रकोई नहीं था। उसकी कोखमें सुवर्णका चिह्न था, जन्तु सब भाइयोंमें अधिक गुणवान था। राजा सोमकका ऋत्विज कुछकालके पश्चात् मर गया और राजा सोमक भी मरे। राजा सोमकने नरकमें जाके देखा कि ऋत्विज नरकमें दुःख भोग रहे हैं, राजा सोमकने ऋत्विजसे पूछा हे ब्राह्मण! तुम किस कारणसे नरकमें दुःख भ.गते हो? नरकको अग्निमें जलते हुए उस ब्राह्मणने कहा, हे राजन्! मैंने जो तुमको यज्ञ कराया था उसी कर्म्मका यह फल भोगता हूं। राजा सोमकने इस वचनको सुनके धर्म्म-राजसे कहा कि मेरे ऋत्विजको छोड़ दीजिये मैं इस अग्निमें प्रवेश करूंगा, मेरे वास्ते यह ब्राह्मण नरककी अग्निमें जल रहा है। धर्म्मराज बोले, हे राजन्! दूसरेके कर्म्मके फलको दूसरा नहीं भोग सकता है, यह तुम्हारे कर्म्मके दूसरे लोक देखो तैयार हैं। राजा सोमक बोले कि मैं इस ब्रह्मवादीको छोड़के पुण्य लोकोंमें जानेकी इच्छा नहीं रखता, देवतोंके स्थानमें मैं इस ब्राह्मणके सहितही रहनेकी इच्छा रखता हूं, हे धर्म्मराज! नरकमें वा स्वर्गमें हम दोनो साथही रहेंगे, क्योंकि हम कर्म्ममें दोनो समान हैं, पुण्य वा पापका फल हम दोनोंका समान ही होगा। धर्म्मराज बोले कि हे राजन्! यही इच्छा है तो तुमभी इसके साथ कर्म्म फलको भोगो, पश्चात् उत्तम गतिको प्राप्त होगे। लोमश मुनि बोले हे राजन्! उस कमलनेत्र राजाने अपने गुरुके सहित नरक भोग करके पाप रहित हो, नरकको त्याग किया। पश्चात् अपने कर्म्मसे मिले अति उत्तम सुखोंको प्राप्त किया, गुरुके प्यारे उस राजाने गुरुके सहित स्वर्गमें सुखभोग किया। हे राजन्! युधिष्ठिर! यह सामने उस राजाका आश्रम है, यहां पर छःरात्रि निवास करनेसे मनुष्यको उत्तम गति प्राप्त होती है, हे कुरुमुख्य! हम लोग इस आश्रम पर छःरात्रि रहके अपनी थकाई उतारेंगे।

१२८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले हे राजन्! इसही स्थानमें स्वयं प्रजापतिने इष्टि नामक यज्ञ करी थी, उस यज्ञमें पूर्ण एक सहस्र बर्ष लगा था। इस स्थानमें अम्बरीष, और नाभाग राजाने यज्ञ करके दश हजार पद्म गौ ब्राह्मणोंको दी थीं। उन्होंने तप और यज्ञसे परम सिद्धिको प्राप्त किया था, इस लिये यहदेश पुण्यकर्म्मा यज्ञकारी नहुष पुत्रके नामसे प्रसिद्ध है। हे कुन्तीनन्दन! वह ययाति राजा चक्रवर्त्ती अनन्त तेजस्वी और इन्द्रसे स्पर्द्धा करनेवाले थे, यह देश उनहीकी यज्ञ करनेका है, देखो इस स्थानमें अनेक अग्नि स्थापन करनेके स्थान शोभित हैं, मानो ये सब ययातिकी यज्ञभूमिमें स्नानकर रहे हैं, देखो यह एक पत्तेवाली शमीको शाखा और यह पद्मपत्र कैसा उत्तम है! आगे परशुरामका तालाब और नारायण-का आश्रम है, यह देखो यह महा तेजस्वी ऋचीकपुत्रने अपने तेजसे बिचरते हुए इस भूमिको चांदिके समान सुन्दर बना दिया है, यहां जो ओखली और मूसलधारिणी पिशाचीने एक श्लोक पढ़ा था सो हम आपसे कहते हैं, हे कुरुनन्दन! आप उसे सुनिये। पिशाची कहती है। हे ब्राह्मणी! क्या तू युगन्धर नामक पर्व्वत देशमें दही खाकर अच्युत स्थलमें रातको निवास करके और भतलय स्थानमें

स्नान करके यहां पुत्रके सहित रहना चाहती है। एक दिन रहकर यदि दूसरे दिन यहां रहनेकी इच्छा करेगी तो दिनमें तेरी यही दशा होगी जो मेरी है और रात्रिमें इससेभी अधिक दुर्दशा होगी। हे भरतसत्तम! हे कुन्तीनन्दन! यह कुरुक्षेत्रका द्वार है, हम लोग एक रात्रि यहां निवास करेंगे। हे राजन्! यहीं नहुषपुत्र राजा ययातिने यज्ञ करके अनेक रत्न दान किये थे। इसी स्थानमें उनसे इन्द्र प्रसन्न हुए थे, यह यमुनाके तट पर लक्षावतरण नामक उत्तम तीर्थ है, पण्डित लोग इसीको स्वर्गका द्वार बताते हैं। हे तात! इसी स्थानमें परम ऋषि ब्राह्मणोंने सारस्वत यज्ञ करे थे इस स्थानमें यूप उलुखल और यज्ञके कलश मिलते हैं। हे राजन्! इसी स्थानमें राजा भरतने अश्वमेध यज्ञ करनेके निमित्त श्याम-कर्ण घोड़ा छोड़ा था। यहींसे उन्होंने धर्म-पूर्व्वक सब पृथ्वीको प्राप्त किया था। हे पुरुष-व्याघ्र! इसी स्थानमें राजा मरुतने उत्तम यज्ञ किया था, उसीसे ऋषियोंमें मुख्य सम्वर्त्त मुनिसे भेट हुई थी। हे राजेन्द्र! आप इस जलको स्पर्श कीजिये, तब आपको सब लोक दीखने लगेंगे। जो पुरुष इस जलको स्पर्श करता है, वह सब पापोंसे छूटकर पवित्र हो जाता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब पाण्डवोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित उस जलमें स्नान किया तो महर्षि लोग उनकी स्तुति करने लगे, अनन्तर महाराजने लोमशसे कहा कि हे सत्यविक्रम! अब हम अपने तपके बलसे सब लोकोंको देखते हैं, हम यहांसे बैठे पाण्डवोंमें श्रेष्ठ सफेद घोड़ेवाले अर्जुनको देख रहे हैं। श्री लोमश ऋषि बोले, हे महा-बाहो! आप जो कहते हैं, सो सब सत्य है, इस पुण्यकर्म्मवाले पुरुषोंसे सेवित पवित्र सर-स्वती नदीको महर्षि लोग देखते हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! इसमें स्नान करनेसे आप सब पापोंसे छूट जायंगे। यहीं देव ऋषियोंने अनेक सारस्वत यज्ञ किये हैं। हे कुन्तीनन्दन! इस स्थानमें राजर्षि तथा अन्य ऋषियोंनेभी अनेक यज्ञ किये हैं। हे भरतश्रेष्ठ! यह बीस कोस लम्बी और बीस कोस चौड़ी प्रजापतिकी वेदी है, इसी स्थानमें महात्मा कुरुने यज्ञ करे थे।

१२९ अध्याय समाप्त

श्रीलोमश ऋषि बोले, हे राजन्! इस स्थान पर मरनेसे पुरुषोंको स्वर्ग प्राप्त होता था। हे राजन्! इस स्थानमें सहस्रों पुरुष मरनेको आते हैं, पहले एक यज्ञमें बहुत दक्षिणा पाकर एक ऋषिने यह आशीर्व्वाद दिया कि जो पुरुष इस स्थानमें मरेगा, वह स्वर्गको जीत लेगा। हे प्रजानाथ! यह रम्य सरस्वती नदी है और यह पवित्र दृषद्वती नदी है, यह सरस्वतीके तट-पर विनसन नामक तीर्थ है, हे वीर! यह निषाद देशका द्वार है, और उनही निषादोंके दोषसे सरस्वती पृथ्वीमें चली गई है, निषाद लोग मुझको न पहचानें। यही चमसोद्भेद तीर्थ है, जहां सरस्वती प्रगट हुई है। यहीं सरस्वतीके पास सब समुद्रगामिनी और पवित्र नदी आती हैं। हे शत्रुनाशन! यह सिन्धुका महातीर्थ है, यहीं लोपामुद्राने आकर अगस्त्य मुनिसे विवाह किया था। हे सूर्य्यके समान तेजस्वी! यह प्रभास नामक तीर्थ प्रकाशित हो रहा है, यह तीर्थ इन्द्रका परम प्यारा पवित्र और पापोंका नाशक है, वह विष्णुपद नामक उत्तम तीर्थ दीखता है, यह सब पापोंके नाश करनेवाली, रम्य, व्यासा नदी है, इसी स्थानमें पुत्रशोकसे व्याकुल भगवान वशिष्ठ मुनि अपने शरीरको पटके पृथ्वीमें गिर गये थे, फिर व्याससे होकर उठे थे, इसी लिये इस नदीका नाम विपाशा है। हे शत्रुनाशन! यह परम पवित्र काश्मीर देश है, यहां पवित्र महर्षि लोग वास

करते हैं, आप उसको भाइयोंके सहित देखिये। हे भारत ! इसी स्थानमें उत्तरके सब ऋषि, नहुष पुत्र ययाति काश्यप और अग्निका सम्वाद हुआ था, हे महाराज ! यह मानसका द्वार है, यहां श्रीमान् रामने एक वर्ष वास किया था, इस सत्य विक्रम देशका नाम वातिक खण्ड है, इसकी सीमा विदेह देशके उत्तरतक है। हे कौन्तेय ! हे पुरुषसिंह ! इस देशमें एक बहुत विचित्र बात है, कि जब युगका अन्त होनेको होता है, तब पार्व्वती और पार्षदोंके सहित कामरूपी शिवके दर्शन यहीं होते हैं। इस तलावमें कल्याण चाहनेवाले, यज्ञ करनेवाले पुरुष अपने परिवारके सहित चैत्रमें शिवका यज्ञ करते हैं, आप इन्द्रियजित और श्रद्धावान होकर इस जलका स्पर्श कीजिये, तो आपके सब पाप नष्ट हो जायंगे और उत्तम लोगोंको प्राप्त हूजियेगा, इस तीर्थका नाम उज्जानक है, जहां स्वामकार्त्तिक और अरुन्धतीके सहित भगवान वशिष्ठ मुनि शान्त हुए थे, इस तड़ागका नाम कुशवान है, इसमें सौदलका कमल होता है, यहीं क्रोध जीतनेवाली रुक्मिणी शान्त हुई थीं। हे पाण्डव ! तुमने जो समाधियोंका संक्षेप सुना है, अब उनको अपनी दृष्टिसे देखोगे। यह भृगुतुङ्ग नामक पर्व्वत है। हे राजेन्द्र ! सब पापोंके नाश करनेवाली ऋषि सेवित निर्म्मल और शीतल जलसे भरी हुई वितस्ता नदीको देखो। आगे जला, उपजला और यमुना नदीको देखो। हे भारत ! जहां यज्ञ करके उशीनर राजा इन्द्रके तुल्य होगये थे। हे पृथ्वीनाथ ! उसको देव सभामें आकर अग्नि और इन्द्रने परीक्षा करी थी, जिस समय राजोंमें श्रेष्ठ उशीनर यज्ञ कर रहे थे तबही अग्नि और इन्द्र वरदान देनेकी इच्छासे उनकी परीक्षा लेने आये। इन्द्र बाज और अग्नि कबूतर बने। अनन्तर बाजके भयसे व्याकुल, शरण चाहनेवाले कबूतररूपी अग्नि राजा उशीनरको जङ्घापर बैठ गये और भयसे व्याकुल होने लगे।

१३० अध्याय समाप्त।

बाज बोला, हे राजन् ! सब जगत्के राजा लोग आपको धर्म्मात्मा कहते हैं, तब तुमने यह कर्म्म धर्म्मविरुद्ध क्यों किया है ? हे राजन् ! मैं भूखसे बहुत व्याकुल हूं और यह कबूतर मेरा भोजन है, अतएव तुम धर्म्मके लोभसे इसकी रक्षा मत करो, तुम्हारा धर्म्म नष्ट हो चुका। राजा बोले, हे महाद्विज ! तुम्हारे भयसे व्याकुल होकर प्राण बचानेकी इच्छासे यह हमारे पास आया है, हम रक्षा क्यों न करें ? हे बाज ! इसकी प्राणरक्षा करनेमें क्या तुमको धर्म्म नहीं दीखता है ? देखो यह कबूतर सम्भ्रान्त और तड़पता हुआ मेरे पास आया है, इसका परित्याग करना अच्छा नहीं है। हे बाज ! जो पुरुष ब्राह्मण अथवा लोकमाता गौको मारता है, और जो शरणागतका त्याग करता है, इन तीनोंको समानही पाप होता है। बाज बोला, हे पृथ्वीनाथ ! आहारसे सब जगत्के जन्तु उत्पन्न होते हैं, आहारसे बढ़ते हैं, और आहारहीसे जीते हैं। अत्यन्त दुःखसे छोड़ने योग्य वस्तुको छोड़कर पुरुष कई दिन जी सकता है, परन्तु भोजनको छोड़कर जीना असम्भव है, इस लिये भोजन न पानेसे मेरे प्राण शरीरको छोड़कर प्रस्थान करेंगे। हे धर्म्मात्मन् ! मेरे मरनेसे मेरी स्त्री और पुत्र सब मर जायंगे। तुम एक कबूतरके प्राणकी रक्षा करके अनेक प्राणोंका नाश करते हो। जिस धर्म्मसे धर्म्मका नाश हो, वह धर्म्म नहीं वरन कुमार्ग है। हे सत्यविक्रम ! जिसमें किसीका विरोध नहो, वही धर्म्म कहाता है। हे पृथ्वीनाथ ! यदि धर्म्ममें दो स्थानोंपर विरोध हो, उन दोनोंका हलका और भारीपन विचारके,

शालाको चले। मार्गमें राजा जनक मिल गये उनके पुरुषोंने कहा कि हटो बचो। यह सुनकर अष्टावक्र मुनि बोले।

१३२ अध्याय समाप्त।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, अन्धेको, बहिरेको, स्त्रीको और भार ले चलनेवालेको मार्ग देना चाहिये। राजा और ब्राह्मणोंके मध्यमें ब्राह्मणहीको मार्ग देना चाहिये अर्थात् राजाहीको हटना उचित है, राजा जनक बोले, हम आपको यह मार्ग देते हैं, जिधर इच्छा हो उधर चले जाइये, इन्द्रभी ब्राह्मणोंको प्रणाम करते हैं, क्योंकि अग्नि थोड़ीभी कम नहीं होती। श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे नरेन्द्र! हम तुम्हारे यज्ञका तमाशा देखनेकी इच्छासे आये हैं, सो हमारी इच्छा है, कि आपका द्वारपाल हमको भीतर जानेकी आज्ञा दे। हे इन्द्रद्युम्नके पुत्र! हम यज्ञ देखने, विवाद करनेको आये हैं, सो यह दोनों द्वारपाल क्रोध रोगसे जले जाते हैं, और हम दोनोंको भीतर नहीं जाने देते। द्वारपाल बोला, तुम दोनों आज्ञाकारियोंको हम प्रणाम करते हैं, आप हमारे वचन सुनिये, यहां कोई बालक ब्राह्मण यज्ञशालामें नहीं जाने पाता है, जो वेदके जाननेवाले और वृद्ध ब्राह्मण हैं, वही भीतर जाते हैं।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, यदि यज्ञशालाके भीतर वृद्धेही ब्राह्मण जाने पाते हैं, तो हमको भी जाने दो, क्योंकि हमभी वृद्ध व्रतधारी और वेदसे भरे हुए हैं, हम लोग सुश्रूषा सहित जितेन्द्रिय ज्ञानी, वेदपाठी और प्रतिष्ठावान हैं, तुम हमको बालक मत समझो, क्योंकि थोड़ी अग्निभी जलानेमें समर्थ होती है।

द्वारपाल बोला, हे अष्ट! यदि तुम वेदको जानते हो तो एक अक्षरसे विराजमान अनेक रूपवाली वेदमयी वाणीको कहो? क्योंकि इसलोकमें ज्ञानी बहुत दुर्लभ हैं, तुम अपनी मिथ्या प्रशंसा क्यों करते हो?

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, तुमको नहीं मालूम होता कि अधिक बढ़नेसे कुछ लाभ नहीं होता, देखो सेंमरका वृक्ष बहुत बढ़ जाता है, परन्तु उसके फलके भीतर कोई खानेके योग्य वस्तु नहीं होती और अनेक छोटे वृक्षोंके फल कैसे उत्तम होते हैं। इस लिये थे छोटेही वृद्ध हुए।

द्वारपाल बोला, देखो छोटे बालक बूढ़ोंहीसे विद्या पढ़कर ज्ञानी होते हैं, और फिर वेही बड़ेभी हो जाते हैं। थोड़ी अवस्थामें कोई भी ज्ञान नहीं पासकता है, तब तुम बालक होकर बड़ोंके समान क्यों बातें करते हो?

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले जिसका सिर सफेद होजाता है, उसे वृद्धा नहीं कहते, जो बालकभी ज्ञानी हो, पण्डित लोग उसको वृद्धा कहते हैं। अधिक अवस्था, पके बाल, धन और बन्धुओंको पाकर कोई श्रेष्ठ नहीं होता ऋषियोंने यही कहा है, वि[illegible] है, वही हम लोगोंमें बड़[illegible] हम राजसभामें जाकर [illegible] हैं, तुम सुवर्णमालाधारी र[illegible] हमारा वृत्तान्त कह दो। हे द्वारपाल[illegible] थोड़ी देरमें देखोगे, कि हम सभामें जाकर पण्डितोंके सङ्ग विवाद करेंगे और हम अत्यन्त विवाद करके उस सूतको भी जीत लेंगे। आज विद्यासे भरे हुए ब्राह्मण लोग, पुरोहित, नगरवासी और राजा यह सब लोग हमारी विद्याको देखेंगे। चाहे हम शास्त्रार्थमें जीतें, चाहे हारें, परन्तु यज्ञशालामें जायेंगे अवश्य।

द्वारपाल बोला, हम बड़े बड़े ज्ञानी और पण्डितोंकी सभामें दश वर्षके लड़केको कैसे ले जायं? परन्तु किसी उपायसे तुमको वहां ले चलते हैं, किन्तु तुम उत्तम यत्नसे रहना। वहां जाकर अष्टावक्र बोले, हे राजन्! हे जनक! तुम सम्राट और सब ऋद्धियोंसे पू[illegible] हुए हो, तुमने यज्ञके ऐसे कर्म्म किया है, जै[illegible]

पहले राजा ययातिने किया था। हमने सुना है कि तुमने बहुत वादके जाननेवाले वन्दीको अपने घरमें रखा है, जो उससे शास्त्रार्थमें हार जाता है, उसीको तुम्हारे काम वाले पुरुष लोग शङ्कारहित होकर जलमें डुबा देते हैं! हम ब्राह्मणोंसे यह बात सुनकर यहां वाद करनेको आये हैं। कहो वह बन्दी कहां है? जैसे सूर्य्य तारोंके तेजको नाश करता है, तैसेही हम उसको शान्त कर देंगे।

राजा जनक बोले, तुम हमारे सामने बिनाही बन्दीकी बिद्या जाने कहते हो कि हम उसको जीत लेंगे! विना वादीकी विद्या जाने ऐसा कहना अनुचित है, बड़े बड़े वेद जाननेवाले लोग उससे विवाद करते हैं। जान पड़ता है, कि तुम उसके विद्याबलको नहीं जानते हो। बड़ बड़े पण्डित ब्राह्मण लोग उसके नाम ऐसे दीखते हैं, जैसे सूर्य्यके सामने तारे। औ[illegible]ग वन्दीको जीतनेकी इच्छासे आते हैं, दिन[illegible]। देखतेही उनकी सब शोभा नष्ट हो जाती है। हे तात! बड़े बड़े विद्यामत्त पण्डित उसको देखकर सभासे निकल जाते हैं, तब तुम उसके सामने कैसे ठहरोगे?

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, उसने हमारे समान पण्डितोंसे कभी विवाद नहीं किया है, इसीसे सिंह बन रहा है, और बेडर होकर बकता है। आज हम उसको अवश्य जीतेंगे। हमसे हारने पर उसकी वही दशा होगी, जैसे पहिया टूटनेसे गाड़ीकी।

राजा जनक बोले, जिसके एक एक अंशमें तीस तीस अवयव हैं ऐसे द्वादश अंशोंसे विशिष्ट, चौबीस पर्व्वयुक्त और तीनसौ-साठ अरोंसे अन्वित जो वस्तु है, उसके अर्थको जो जानता है, वही परम कवि है।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, चौबीस पर्व्व छः नाभि, बारह प्रधि और तीन सौ साठ आरोंके सहित जो नित्य चलनेवाला चक्र है, सो तुम्हारी रक्षा करे।

राजा जनक बोले, जो शरीररूपी रथमें दो घोड़े जुते हैं, जिनका गिरना बाज पक्षीके समान भान होता है, देवताओंके बीच उन दोनोंके गर्भको कौन धारण करता है? और वेभी किसे उत्पन्न करते हैं।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे राजन! वह आपके घरमें कभी न आवें, वे शत्रुओंहीके घरमें रहें, वे वायु सारथिके गर्भसे उत्पन्न होते हैं। और इन दोनों वस्तुओंसे उत्पन्नभी हुआ करते हैं।

राजा जनक बोले, कौन ऐसा जन्तु है, जो सोनेके समय आंख बन्द करके नहीं सोता? वह कौन है, जो उत्पन्न होके नहीं चलता! वह कौन है जिसको हृदय नहीं है, और वह कौन है जो वेगसे नहीं बढ़ता।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, मत्स्य सोते हुए आखोंको नहीं बन्द करता, अण्डा उत्पन्न होकर नहीं चलता। पत्थरको हृदय नहीं है, और वेगसे नदी बढ़ती है।

राजा जनक बोले, हम तुमको पुरुष नहीं समझते, तुम साक्षात् देवता हो। हमें निश्चय है, कि तुम बालक नहीं, वरन बूढ़े हो। हमने जान लिया कि तुम्हारे समान वाद करनेवाला कोई नहीं है। इस लिये हम तुमको बता देते हैं, कि वही बन्दी खड़ा है।

१३३ अध्याय समाप्त।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे उग्रसैन्यपपालक महाराज! यहां बड़े बड़े राजा लोग बैठे हैं, उनके बीचमेंसे हम वादियोंमें श्रेष्ठ वन्दीको नहीं पहचान सकते, परन्तु जैसे दूध और पानी मेंसे हंस दूधको ग्रहण करता है, तैसेही इन सबके बीचमेंसे हम वन्दीको ढूढ़ लेते हैं। आज वह हमसे वादमें नहीं बोल सकेगा, उसकी वही दशा होगी, जैसे नदी बढ़कर शान्त हो-जाती है। अरे वादी! तू हमारे सामने खड़ा रह, आज तेरी वही दशा होगी, जो प्रलय कालकी अग्निमें जलकी होती है। तू निश्चय जान कि जैसे सोता हुआ सिंह जागता है, और

जैसे विषैला सर्प अपने ओठोंको चाटता है, उस समय उन दोनोंके सिरपर लात मारे और वह अपना बचना चाहे, वैसीही दशा तेरीभी है, जैसे कोई दुर्ब्बल पुरुष अपने बलके अभिमानसे पर्व्वतमें आघात करता है, पीछेसे उसीके हाथ और नाखूनोंमें घाव होजाते हैं, परन्तु पर्व्वतको कुछभी नहीं होता, तैसेही आज तेरीभी दशा होगी। जैसे मैनाक पर्व्वतके निकटमें अन्य सब पर्व्वत और बैलके समीपमें बछड़े निकृष्ट हैं, वैसेही मिथिलाधिपके निकट अन्य सब राजा हो निकृष्ट हैं। हे राजन् जनक! जैसे सब देवतोंमें इन्द्र श्रेष्ठ है, और जैसे सब नदियोंमें गङ्गा श्रेष्ठ हैं, तैसेही सब राजाओंमें तुमभी श्रेष्ठ हो, इस लिये शीघ्र उस वन्दीको हमारे सामने बुलाओ।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकार अष्टावक्र मुनि सभाके बीचमें गर्ज्जने लगे। अनन्तर क्रोध करके वन्दीसे बोले, कि तुम हमारे वचनका उत्तर दो और हम तुम्हारे वचनका उत्तर देंगे।

वन्दी बोले, जिस प्रकार एक अग्नि बहुधारूपसे प्रज्वलित होती है और एक सूर्य्य इस सारे विश्वको प्रकाश करता है, वैसेही एक वीर अर्थात् बुद्धितत्त्व, शब्द स्पर्श आदि उपहारस्वरूप विषयोंके संहार पालनकर्त्ता जो श्रोत्र, त्वक् प्रभृति इन्द्रियां हैं, उनका राजा, नियन्ता तथा प्रभु होकर "मैं" यह इत्यादि प्रकारसे प्रकाशमान होते हुए अन्यान्य वादियोंके अभिमत तत्त्वस्वरूप अरातिको विनाशक हुआ है।

अष्टावक्र बोले, जिस प्रकार इन्द्र और अग्नि दो देवता, नारद और पर्व्वत दो देवर्षि, अश्विनीकुमार दो देवता, रथके दो चक्र और विधाताके सहारे विहित भार्य्या और पति दो जन परस्पर मित्रभावसे विचरण किया करते हैं; उसी प्रकार दो वस्तु अर्थात् बुद्धि और चैतन्य दोनों परस्पर मित्र-भावयुक्त होकर विषयानुभव प्रभृति कार्य्य निर्व्वाह किया करते हैं, केवल बुद्धिही नहीं।

वन्दी बोले, कर्म्म-हेतुसे यह सब प्रजा विविध जन्म ग्रहण करती है, तीन वेद मिलित होकर वाजपेयादि समस्त कर्म्म प्रतिपादन करते हैं; अध्वर्य्युगण तीनों कालमें यज्ञकर्म्मका अनुष्ठान किया करते हैं; स्वर्ग, मर्त्य और नरक ये त्रिविध लोक कर्म्मजनित भोग करने होते हैं; और वेदमें कर्म्मजनित त्रिविध ज्योति कही हैं; इसलिये चाहे बुद्धि वा अन्य जिस किसी पदार्थका कर्त्तृत्वादि क्यों न सिद्ध होवे, वह कर्म्मकेही अधीन है।

अष्टावक्र बोले, ब्राह्मणोंके चार आश्रम हैं; चारो वर्ण ज्ञान-यज्ञ निर्व्वाह किया करते हैं; और विराट हिरण्यगर्भ, ईश्वर तथा तुरीय-साक्षात्कार ये चार अवस्था हैं; इन चारों अवस्थाओंके वाचक अकार, उकार, मकार और अर्द्धमात्रा ये चार वर्ण अर्थात् ओम् है; इस विषयमें चार पदयुक्त वाक्य वेदमन्त्रोंमें सर्व्वदा वर्णित हुए हैं; इसलिये ज्ञानसे तुरीय-साक्षात्कार होने पर कर्त्तृत्वभोक्तृत्वादि अलीक प्रतिपन्न होते हैं, अतएव कर्म्म भी अलीक है।

वन्दी बोले; जिस प्रकार गार्हपत्य प्रभृति पञ्चाग्नि, अग्निहोत्र आदि पञ्चयज्ञ और पंक्ति छन्दके प्रत्येक चरणमें पांच अक्षर रहते हैं, उसी भांति श्रोत्र, त्वक्, नेत्र, जिह्वा, और नासिका, ये पांचो इन्द्रियां शब्दादि पञ्चविषयोंकी ग्राहक होती हैं। ये शब्दादि पञ्च-विषय-स्रोत उपादेय कहके लोकमें प्रसिद्ध हैं और शरीरान्तर्व्वर्त्ती चैतन्य प्रमाण, विपर्य्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति इन पांचोंके सहारे मानो पञ्चविध शिखामें सम्मिलित हुए हैं, यह वेदोंमें दीखता है; अतएव तुरीय-साक्षात्कार असम्भव है।

अष्टावक्र बोले, जिस प्रकार ऋषियोंकी

कहीं अग्न्याधानकी दक्षिणा छः गौ, अथर्ववेद-विहित साद्यस्क-यज्ञ अर्थात् एकाहसाध्य यज्ञ छः हैं; कालनक-ऋतु छः हैं और कृत्तिका छःजन समान रूपसे प्रसिद्ध है, उसही भांति श्रोत्रादि पांच और मन एक, इन छः इन्द्रियोंके समान रूपसे कर्त्तृत्व-भोक्तृत्वादि कहने होंगे।

बन्दी बोले, शब्दादि विषयोंके प्रत्येक विषयमें आसक्त, उक्त श्रोत्रादि छः और बुद्धिवृत्ति एक, इन सातों इन्द्रियोंकी सप्तऋषि तथा सप्त पुरुषरूप पशु भी कहा जाता है; जब इनकी भौम-विषयमें आसक्ति होती है, तब इन्हें ग्राम्यपशु कहते हैं और जब इनकी दिव्य विषयमें आसक्ति होती है, तब इन्हें वन्यपशु कहा जाता है; येही प्रत्येक सप्त ग्राम्य वा वन्यपशु एक आत्माको शब्दादि विषयों तथा तत्त्वत्-विषयजनित सुखलाभ करा देते हैं, आत्मा भी तत्त्वत् विषयजनित सुख अनुभव करता है; इस लिये जैसे एक वीणा सात तारोंसे संयुक्त होकर वाद्यध्वनि निष्पन्न करता है, वैसेही उक्त श्रोत्रादि सात तत्त्वोंके सहारे देहधारीके कर्त्तृत्वादि निष्पन्न हुआ करते हैं।

अष्टावक्र बोले, शब्दादि विषय, उक्त श्रोत्रादि सात और अहंवृत्ति एक, इन अष्टविध इन्द्रियोंमें प्रविशाधिकारी होनेसे अष्टविध कहके वर्णित हुए हैं; जिस प्रकार शणस्त्वसे बने अष्टसंख्य गौओं सैकड़ों परिमाण धारण करते हैं, वैसेही शब्दादि विषय अष्टविध होने पर भी सैकड़ों संख्यामें गिने जाते हैं। जिसकी आनन्द-कणासे सब प्राणी आनन्द लाभ करते हैं, वह परमानन्द अद्वैत-आत्मा उक्त अष्टविध इन्द्रियोंमें उपलक्षित होता है; क्योंकि द्वैत-रूप अज्ञान, समस्त विषयेन्द्रिय संयोगरूप यज्ञमें पुरुषरूप पशुबन्धनके स्थान उक्त श्रोत्रेन्द्रियादि अष्टसंख्य कोणयुक्त यूपस्वरूप होकर विद्यमान हैं; अतएव वेदमें भी श्रुत हुआ है कि, शब्दादि-विषयक अष्टविध वासना तत्त्वत-इन्द्रियाधिष्ठात्री देवतामें ही विद्यमान रहते हैं, आत्मामें नहीं रहते; और परमानन्दस्वरूप आत्मा ज्ञात होनेसे वह द्वैत-अज्ञानका विनाशक होता है. अतएव तुरीय-साक्षात्कार असम्भव नहीं है।

बन्दी बोले, जिसप्रकार पितृयज्ञमें अग्नि जलानेके लिये नवधात्मक् विहित हुआ है, प्रत्येक चरणमें नौ अक्षर रहनेसे वैसे चारि चरणमें एक बृहती छन्द होता है; और एकसे लगाय नौविध अङ्कके मेलसे सब गिनती पूरी होती है, वैसेही सत्त्व, रज और तम इस त्रिगुणात्मिका अज्ञानरूपिणी प्रकृतिके प्रत्येक गुण अपने और दूसरेके अंशमें मिलकर त्रिविध होनेसे वे नवविध होकर तत्त्वत् अंशोंकी बहुत्व तारतम्य अनुसार अनेक भांतिकी सृष्टि सम्पादन किया करते हैं, यह पण्डितोंने कहा है; इस लिये जब द्वैत-अज्ञानसे समुदाय सृष्ट होना कहा गया है, तब उसका विनाश होना स्वीकार नहीं किया जासकता; अतएव उसके रहते तुरीय-साक्षात्कारकी क्या सम्भावना है?

अष्टावक्र बोले. पण्डितोंने दशों इन्द्रियोंको जीवके सम्बन्धमें कहा है, आत्माके सम्बन्धमें नहीं; जैसे स्त्रियां गर्भविशिष्ट होकर दश महीने तक गर्भ धारण करती हैं, वैसेही आत्मा मायाके सहारे अहंवृत्ति प्रभृतिमें समन्वित होकर ही हजारहा जीव रूपसे उपलब्ध होता है, यथार्थमें वह सङ्गरहित है। इस तत्त्वज्ञानके उपदेष्टा दश जन हैं और अधिकारी भी दश जन हैं। अतएव आत्माका स्वरूप ज्ञान होनेसे यह माया प्रकृति अलीक कहके बोध होगी, इसलिये इसकी सत्ताही असम्भव है। इस परमार्थ ज्ञानके उपदेशक वा अधिकारी कोई कोई होते हैं, और इसके द्वेषी भी कोई कोई हुआ करते हैं।

वन्दी बोले, एकादश इन्द्रियां शब्दादि विषयोंमें अवस्थान करती हैं, इसलिये ये शब्दादि विषय भी एकादश संख्यामें गिने जाते हैं। जीवरूप पशुके बन्धनके निमित्त ये ग्यारह विषय ग्यारह यूपस्वरूप हुए हैं; उक्त शब्दादि ग्रहणजनित हर्ष विषादादि ग्यारह प्रकारके विकार स्वर्गमें देवताओंको भी रोदन कराया करते हैं; इसलिये द्वैत-प्रकृतिका कार्य्य जो विषयेन्द्रिय संयोग है, इससे छुटकारा पाकर स्वरूप-ज्ञान अर्थात् तुरीय-साक्षात्कार होना मनुष्योंके पक्षमें सुदूर-पराहत है।

अष्टावक्र बोले, बारह महीनेका सम्वत्सर होता है और प्रत्येक चरणमें बारह अक्षर रहनेसे वैसे चारि चरणमें जगतीछन्द होता है, ऐसा वर्णित है; किन्तु ध्यानवन्त योगी लोगोंने इन्द्रियोंके अपने अपने विषयगमनके व्यावर्तक बारह व्रत कहे हैं, और प्राकृत यज्ञ द्वादशाहमें पूरा करना होता है, यह भी कहे हैं। अर्थात् जिस प्रकारसे माससङ्घातसे सम्वत्सर और अक्षरसङ्घातसे जगती छन्द अतिरिक्त नहीं है, उसी भांति मूढ़ लोगोंकी विवेचनामें इन्द्रिय सङ्घातसे अतिरिक्त एक शुद्ध चैतन्य रहना बोधगम्य नहीं होता; किन्तु ध्यानवन्त योगी लोग धर्म्म सत्य, तप, दम, अमात्सर्य्य, ह्री, तितिक्षा, अनसूया, दान, शास्त्रबुद्धि, धृति और क्षमा इन बारह प्रकारके व्रतोंका अनुष्ठान करते हुए चित्तशुद्धि लाभ करके उसके सहारे जिस प्रकार बारह दिन प्राकृत यज्ञका विहित काल कहके निर्दिष्ट होने पर भी इन बारह दिनोंका साधारण दिनोंके अन्तर्भूत और साधारण दिनोंके अतिरिक्त भी स्वीकार किया जाता है, वैसेही इन्द्रिय-सङ्घातके अन्तर्भूत और इन्द्रिय सङ्घातसे अतिरिक्त शुद्ध चैतन्यरूप अद्वैत-ब्रह्म उपलब्धि करते हैं।

वन्दी बोले, पण्डितोंने त्रयोदशी तिथिको श्रेष्ठ कहा है और पृथिवीको त्रयोदश द्वीप युक्त कहे हैं, अर्थात् ऐसी बात नहीं है कि, यह तत्त्वज्ञान केवल धर्म्म, सत्य प्रभृति द्वादश प्रकारके उक्त महाव्रत अनुष्ठित होनेसे ही होगा; बल्कि यह देश कालकी अपेक्षा करता है; अतएव कोई कोई पण्डितोंने कहा है, तत्त्वज्ञान ब्रह्मलोकस्थ जीवोंको सर्व्वकालमें होसकता है और मर्त्य लोकमें सत्ययुगमें होनामें सम्भव है।

लोमश मुनि बोले, महाराज! यह आधा श्लोक कहके वन्दी चुप होगये। अनन्तर अष्टावक्रने उसके अपराद्ध श्लोकको इस प्रकार कहके पूरा किया—

शुद्ध चैतन्यरूप अद्वैत-ब्रह्म अग्नि, वायु और सूर्य्यकी भांति असङ्ग होके भी जो मन, बुद्धि, अहङ्कार और उससे अतिरिक्त दश इन्द्रियां, इन त्रयोदश तत्त्वोंके विषय भा[illegible] यज्ञमें प्रवृत्त होते हैं, वह केवल [illegible]प्रकाश आच्छादक इन्द्रजालिक अज्ञान कल्पित बोध मात्र होता है, यथार्थमें सत्य नहीं है; क्योंकि पूर्व्वोक्त धर्म्मादि बारह प्रकारके व्रत अनुष्ठित होनेसे वे इस अज्ञानको अतिक्रम करके मन, बुद्धि प्रभृति उक्त त्रयोदश तत्त्वको संहार कर देते हैं। अतएव यह तत्त्वज्ञान अवश्यही पुरुषके यत्नसाध्य होता है, देशकालकी अपेक्षा नहीं करता।

तिसके अनन्तर उस समय सभासदोंने यज्ञदीक्षित वरुणके पुत्र उस वन्दीको चुप और नीचे मुख किये चिन्तायुक्त और अष्टावक्रको वादविचारमें वाक्निपुणता प्रकाश करते देख महाकोलाहल ध्वनि किया।

जब इस प्रकार महाराज जनकको यज्ञशालामें शब्द उठा और यज्ञ समाप्त हुई। तब सब वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंने प्रीतिके सहित हाथ जोड़ कर अष्टावक्रकी पूजा करी।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, इसी वन्दीने पहले

अनेक ब्राह्मणोंको वाद में जीत कर जलमें डुबा दिया है, इस लिये यह भी उसी दशाको प्राप्त हो, अर्थात् जलमें डुबा दिया जाय ।

बन्दी बोले, मैं राजा वरुणका पुत्र हूं मेरे पिताने द्वादशवर्षकी यज्ञ करी है। हे जनक ! तुम्हारेही यज्ञके समय वहांभी यज्ञ हुआ है, इसी लिये मैंने अनेक ब्राह्मणोंको वहां भेजा है, वे सब लोग वरुणकी यज्ञ देखनेको गये थे, और फिर चले आते हैं, हम पूजने योग्य अष्टावक्र मुनिकी पूजा करते हैं, जिनके प्रतापसे हम पुनः अपने पिताके पास जाते हैं।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, जो सब ब्राह्मण समुद्रके जलमें डुबाये गये हैं, वे लोग पण्डित होकर भी बन्दीके वाक्य-कौशल्य अथवा वितर्क-कौशलसे ही पराजित हुए हैं; मैंने बन्दी कर्त्तृक कृतकार्णवमें मज्जित उनको वाक्य-मेधाके सहारे जिस प्रकार उद्धार किया है, वैसेही सदसद्विवेकशील पण्डित लोग मेरे उन वचनोंकी परीक्षा करें। जिस प्रकार सदसद्वृत्तज्ञ अग्नि स्वभावसेही दाहक होकर भी अपने तेजसे सत्याभिसन्धी लोगोंके शरीरको जलाती है, वैसेही सदसद्विवेकशील पण्डित लोग मन्दवादी बालक वा पुत्रके वाक्य को भी परीक्षा करके ग्राह्य वा अग्राह्य किया करते हैं। हे महाराज जनक ! बोध होता है, आप श्लेष्मात्मक वृक्षके फल या पुत्र व्यवहारसे तेजहीन होकर मेरा वचन सुनते हैं, अथवा स्तुति करनेवालोंको स्तुतिसे आपका अन्तः-करण आमोदित हुआ है; इस निमित्तसे ही आप अंकुशाहत हाथी की भांति उत्तेजित होकर भी मेरा वचन नहीं ग्रहण करते हैं।

राजा जनक बोले, हे ब्राह्मण ! हम तुम्हारी देवरूपी वाणीको सुनते हैं, तुम्हारी वाणीके समान कोई पुरुष नहीं कह सकता है, तुमने जो बन्दीको विवादमें जीत लिया है, इस लिये हम बन्दीको तुम्हें देते हैं, तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे राजन् ! इस बन्दीके जीते रहनेसे मुझे कोई लाभ नहीं है, इस लिये इसको मेरे पिताके समान जलमें डुबा दीजिये।

बन्दी बोला, हम राजा वरुणके पुत्र हैं, इस लिये जलमें डूबनेसे कुछ भय नहीं करते, अब अष्टावक्रभी अपने पिता कहोड़को जो बहुत कालसे नष्ट होगये हैं, देखेंगे।

श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर वे सब ब्राह्मण लोग महात्मा वरुणसे पूजित होकर जनककी सभामें खड़े होगये।

श्रीकहोड मुनि बोले, हे जनक ! पुरुष लोग इसी लिये अनेक कर्म करके पुत्रकी इच्छा करते हैं, देखो जो कर्म हम न कर सके, सो हमारे पुत्रने किया। हे जनक ! दुर्बलको बलवान, मूर्खको पण्डित और अज्ञानीको भी ज्ञानी पुत्र होसकता है। चाहे बलवानका निर्बल, पण्डितका मूर्ख और बुद्धिमानका निर्बुद्धि पुत्र क्यों न हो, तौभी न होनेसे अच्छा है।

बन्दी बोले, हे राजन् ! तेज फरसा लेकर स्वयं यमराज युद्धमें आपके शत्रुओंके सिर काटें और तुम्हारा कल्याण हो। हे राजन् ! तुम्हारी यज्ञमें और क्या (वेदके एक प्रकारके मन्त्र) सामवेदके मन्त्र, अच्छो प्रकारसे गाये जाते हैं, और देवता लोग प्रसन्न होकर साक्षात् रूपसे पवित्र भागोंको ग्रहण करके सोमपान करते हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन् ! जब सब ब्राह्मण लोग अत्यन्त तेजको धारण करके प्रगट हुए तब राजा जनकने आज्ञा दी कि, इस बन्दीको समुद्रमें डुबा दो, राजा जनकको आज्ञासे बन्दीने उन सब प्रतापी विप्रोंके सामने समुद्रमें प्रवेश किया। अनन्तर सब ब्राह्मणोंने विधिपूर्ब्बक अष्टावक्रकी पूजा करी। और अष्टावक्रने अपने पिताकी पूजा करी, अनन्तर

अपने मामा खेतकेतुके सहित अपने आश्रम को चले गये। अनन्तर अष्टावक्रके पिताने अष्टावक्रको गोदमें लिया, फिर कहा कि तुम समङ्गा नदीमें स्नान करो, उस नदीमें स्नान करते ही अष्टावक्रके सब अङ्ग समान होगये। हे युधिष्ठिर! उसी दिनसे यह समङ्गा नदी पवित्र होगई है, इसमें स्नान करनेसे पाप नष्ट हो जाते हैं। आपभी अपनी स्त्री और भाइयोंके सहित इसमें स्नान कीजिये। हे कुन्तीनन्दन! इस नदीमें आप स्त्री, भाई, और ब्राह्मणोंके सहित स्नान करके हमारे सङ्ग भक्ति सहित पवित्र होकर दूसरे पवित्र तीर्थोंको चलिये।

१३४ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! इस नदीका नाम पहले मधुविला था, वही अब समङ्गा नामसे प्रसिद्ध हुई है, यह कर्दमिल नामक तीर्थ है, यहीं राजा भरतका अभिषेक हुआ था, यहीं समङ्गा नदीमें स्नान करके वृत्रासुरके मारनेके पश्चात् अलक्ष्मीवान इन्द्र सब पापोंसे छूटे थे। हे भरतकुलसिंह! यह मैनाक पर्व्वतके कोनमें विनसन नामक तीर्थ है, यहीं पहले समयमें अदितिने पुत्र होनेके निमित्त ब्रह्मौदन पकाकर खाया था। हे पाण्डवो! आपलोग इस पर्व्वतराजके ऊपर चढ़िये, तब सब पापों और अलक्ष्मीसे छूटियेगा। हे राजन युधिष्ठिर! यह सब ऋषियोंका प्यारा कनखल तीर्थ है, यह महानदी गङ्गा बह रही है, पहले समयमें भगवान सनतकुमार मुनि यहीं सिद्ध हुए थे, हे अजमीढ़ वंशोत्पन्न युधिष्ठिर! तुम इसमें स्नान करनेसे सब पापोंसे छूट जाओगे। यह पवित्र तलाव है, यह भृगुतुङ्ग पर्व्वत है, हे कुन्तीनन्दन! यह तुष्णी गङ्गा है, यहां तुम मन्त्रियोंके सहित स्नान करो, यह स्थूलसिरा नामक मुनिका रमणीय आश्रम है, हे कुन्तीनन्दन! यहां अभिमान और क्रोधको छोड़ दो। हे पाण्डव! यह श्रीमान रैभ्य मुनिका आश्रम है, जहां भरद्वाज मुनिके पुत्र यवक्रीत मारे गये थे, राजा युधिष्ठिर बोले, प्रतापवान भरद्वाज मुनि कैसे थे? और उनका पुत्र यवक्रीत क्यों मारा गया था? हम इस सब चरितको सुनना चाहते हैं, क्योंकि देवतुल्य ऋषियोंके कर्म्म सुननेसे आनन्द होता है।

श्रीलोमश मुनि बोले, भरद्वाज और रैभ्य दोनों मित्र थे, वे आनन्दसे इस स्थानपर रहते थे, रैभ्यके अर्व्वावसु और परावसु नामक दो पुत्र थे। हे भारत! भरद्वाजके एक यवक्रीत नामक पुत्र था, रैभ्य विद्वान और पुत्रवान थे, इन दोनोंकी बालकपनसेही बहुत कीर्त्ति जगत्में प्रसिद्ध थी। पापरहित यवक्रीतने जब अपने पिताको अत्यन्त तपस्वी और सत्कार रहित तथा रैभ्यको पुत्रवान और ब्राह्मणोंसे पूजित देखा तो अत्यन्त सन्ताप करने लगे। फिर क्रोधमें भरकर तेजस्वी यवक्रीतने वेद जाननेके निमित्त घोर तपस्या करी। उस महातपस्वीने जलती हुई अग्निमें अपने शरीरको तपाया, तब उनके तपसे इन्द्रको भय हुआ। हे युधिष्ठिर! अनन्तर इन्द्र यवक्रीतके पास आकर बोले कि तुम किस लिये इस घोर तपको कर रहे हो? यवक्रीत बोले, हे देवपूजित! हमको विनाही पढ़े सब वेद आजायं, इसलिये हम इस घोर तपको करते हैं। हे पाकशासन! हम केवल पढ़नेहीके निमित्त इस परिश्रमको कर रहे हैं। हे कौशिक! हम तपके बलसे सब विद्याओंको जानना चाहते हैं, क्योंकि वेदोंको गुरुमुखसे पढ़नेमें बहुत समय लगता है, इसीलिये हमने यह परम यत्न किया है।

इन्द्र बोले, हे ब्राह्मण! जिस मार्गसे तुम जाना चाहते हो, वह मार्ग नहीं है, इससे वह विद्या अच्छी नहीं होगी, जाओ तुम गुरुसे पढ़ो।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे भारत! ऐसा कहकर इन्द्र चले गये, और अनन्तपराक्रमी

यवक्रीत फिर भी घोर तप करने लगे। हमने सुना है कि, यवक्रीतने बहुतकाल तक घोर तप किया और उनके तपसे इन्द्रादिक देवता तप्त होने लगे। उनको इस प्रकार घोर तप करते देख इन्द्रने आकर फिर रोका और कहा कि, जो तुम चाहते हो सो होना असम्भव है, तुम अपने पितासे वेद पढ़ो, तब सबका अर्थ जान जाओगे।

यवक्रीत बोले, हे देवराज! यदि तुम मेरी इच्छा पूर्ण न करोगे, तो मैं फिर भी महा नियम धारण करके घोर तप करूंगा। हे देवराज! यदि तुम मेरी इच्छाको पूर्ण न करोगे तो हम अपने शरीरोंको काट कर अग्निमें होम कर देंगे।

श्रीलोमश मुनि बोले, जब इन्द्रने जाना कि ये तपसे निवृत्त नहीं होंगे, तब बुद्धिमान इन्द्रने एक यक्ष्म रोगी, कई सौ वर्षके बूढ़े तपस्वी ब्राह्मणका वेष बनाया और जिस तीर्थमें यवक्रीत स्नानादि करते थे, उस स्थानमें गंगाके बालूसे पुल बनाने लगे, जब यवक्रीतने इन्द्रका कहना न माना तो इन्द्रने गंगाको बालूसे पूर्ण कर दिया, इन्द्र यवक्रीतको दिखाकर रोज-गंगामें एक मुट्ठी बालू छोड़ते थे, इस प्रकार मुनिश्रेष्ठ यवक्रीतने इन्द्रका यत्न देखकर उनसे हंसकर कहा कि हे ब्राह्मण! तुम यह क्या यत्न करते हो? क्या यह तुम्हारा यत्न निरर्थक न होगा?

इन्द्र बोले, हे तात! इसमें तैरनेसे बटोही पुरुषोंको बहुत दुःख होता है, इस लिये हम इस गङ्गाको बालूसे बांध देंगे। तब उत्तम मार्ग होजायगा।

श्रीयवक्रीत मुनि बोले, हे तपोधन! इस गंगाके महा वेगको तुम नहीं बांध सकोगे, तुम इस न होने योग्य कामको मत करो।

इन्द्र बोले, जैसे तुमने नहोने योग्य कामका आरम्भ किया है, तैसेही हमनेभी इस कामका आरम्भ किया है।

श्रीयवक्रीत मुनि बोले, हे देवराज! जैसे तुम्हारा काम निरर्थक है, तैसेही यदि मेरा कामभी निरर्थक हो, तो जितनी तुम्हारी शक्ति हो, उतना यत्न करो।

श्रीलोमश मुनि बोले, यवक्रीतने जो जो वरदान मांगे, सोई सोई इन्द्रने दिये, इन्द्रने कहा कि हे महा तपस्वी! तुमको इच्छानुसार सब वेदोंका ज्ञान हो जायगा। हे यवक्रीत और जो कुछ तुम चाहोगे सोई सिद्ध होगा। इस प्रकार इन्द्रसे वरदान पाकर यवक्रीत अपने पिताके पास गये।

यवक्रीत बोले, हमको और हमारे पिताको सब वेदोंका अर्थ दिखाई देता है, हम इन्द्रसे वरदान पाकर सबसे अधिक होगये।

श्रीभरद्वाज मुनि बोले, हे तात! इच्छानुसार वरदान पानेसे तुमको अभिमान हुआ, इस अभिमानसे तुम्हारा शीघ्रही विनाश होगा। इस देवतोंकी कही हुई कथाका यहीं उदाहरण दिया जाता है। हे पुत्र! पहले समयमें एक वीर्य्यवान वालधी नामक ऋषि हुए थे उन्होंने पुत्रके शोकसे व्याकुल होकर घोर तप किया था, अनन्तर उसने इन्द्रसे यह वरदान मांगा था, कि हमारा पुत्र मनुष्योंसे, अधिक आयुवाला हो, परन्तु देवतोंने इस वरदान को न दिया, और कहा कि मनुष्य अपने धर्म्मोंसे रहित नहीं हो सकता है, इस लिये तुम्हारा पुत्र निमित्त आयुवाला होगा।

वालधी मुनि बोले, हे देवतो! जो यह पर्व्वत स्थिर है, वही मेरे पुत्रकी निमित्त आयुवाला हो। श्रीभरद्वाज मुनि बोले, कुछ दिन पश्चात् वालधी मुनिको पुत्र हुआ, जब उस पुत्रने यह सब कथा सुनी तो बड़ा अभिमान और मुनियोंका निरादर किया, इस प्रकार वह मुनियोंका निरादर करता हुआ

पृथ्वीमें घूमने लगा, एक दिन महा तेजस्वी बुद्धिमान धनुषाक्ष मुनिसे भेंट हुई, उनकाभी इसने वैसेही निरादर किया, तब धनुषाक्षने क्रोध करके उसको शाप दिया कि तू भस्म होजा, पर वह भस्म नहीं हुआ। जब वीर्य्यवान धनुषाक्ष मुनिने देखा कि यह न मरा। तो उसके निमित्त परमायु पर्व्वतको भैंसोंसे नष्ट कराया, निमित्त शरीर नष्ट होनेसे उसका प्राणभी नष्ट होगया, अपने पुत्रको मरा हुआ देख उसके पिता रोने लगे, तब सब मुनियोंने उनको रोते हुए देख जो कुछ कहा सो हम तुमसे कहते हैं, कोई पुरुषभी प्रारब्धको नाश नहीं कर सकता है, इसीसे धनुषाक्ष मुनिने पर्व्वतको भैंसोंसे नाश कराया है, इस प्रकारसे तपस्वियोंके बालक लोग अभिमानसे भरकर शीघ्रही नाश हो जाते हैं। हे पुत्र! यह रैभ्य और उनके दोनों पुत्र महा तपस्वी हैं, तुम इनसे उचित व्यवहार नहीं करते हो, तुम उनसे अच्छा व्यवहार करो, वे महा तपस्वी और महा क्रोध करके तुम्हें नाश करनेमें समर्थ हैं।

यवक्रीत बोले, आप दुःख न कीजिये, हम ऐसाही करेंगे, जैसे आप हमको मान्य हैं, तैसेही रैभ्यभी हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले पितासे ऐसे मीठे वचन कहकर यवक्रीत सुखसे और आनन्दसे घूमने लगे, परन्तु अन्य ऋषियोंको दुःख देने लगे।

१३५ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, इस प्रकार आनन्दसे घूमते हुए एक दिन यवक्रीत वैशाख महीनेमें रैभ्य मुनिके आश्रममें गये, उस फूले वृक्षोंसे शोभित परम रमणीय आश्रममें रैभ्य मुनिके बेटेकी बहूको किन्नरोके समान घूमते हुए देखा, निर्लज्ज यवक्रीतने कामके वशमें होकर उस लज्जावतीसे कहा कि तू हमारे पास आ! वह स्त्री यवक्रीतके चरित्रको जानती थी, इस लिये उसके शाप भयसे डरकर और रैभ्यके तेजका ध्यान करके, वैसाही होगा, कहके जाने लगी; तिसके अनन्तर महनी मनमें वितर्क करके उसे निर्जनमें गोपन भावसे रखा। हे शत्रुनाशन! उसी समय रैभ्य मुनि भी अपने आश्रममें आगये उन्होंने परावसुकी स्त्री और अपने पुत्रकी बहूको रोते हुए देख, उसको शान्त करके मीठे वचनसे सब समाचार पूछा। उस सुन्दरीने यवक्रीतका सब हाल उनसे कह सुनाया, और जो उसने कहा था सो भी सुना दिया। यवक्रीतका यह सब समाचार सुनकर रैभ्यका चित्त महा क्रोधसे जलने लगा। महाक्रोधी रैभ्य मुनिने अपनी एक जटा उखाड़के अग्निमें मन्त्रोंसे हवन करी, उसके हवन होतेही एक सुन्दरी स्त्रीरूपिणी कृत्या उनके पुत्रवधूके समान रूपवाली उस हवन कुण्डसे उत्पन्न हुई, तब मुनीश्वरने दूसरी जटा उखाड़के फेर अग्निमें हवन करी, तब हवन-कुण्डसे एक विकराल दर्शन और भयानक नेत्र-वाला राक्षस उत्पन्न हुआ, उन दोनोंने रैभ्य मुनिसे कहा कि हम तुम्हारा कौनसा कार्य्य सिद्ध करें? रैभ्य मुनिने क्रोध करके कहा कि तुम यवक्रीतको मार डालो। वे दोनों यव-क्रीतको मारनेको चले, जब वे यवक्रीतके पास पहुंचे, तो महात्मा रैभ्यकी बनाई हुई स्त्रीने यवक्रीतका कमण्डल ले लिया और उसको मोहित कर दिया, अनन्तर जूठे मुंह कमण्डल रहित यवक्रीतको देखकर वह राक्षस त्रिशूल लेकर उनकी ओर दौड़ा, जब यवक्रीतने उस राक्षसको हाथमें त्रिशूल लिये और अपने मार-नेकी इच्छासे आते हुए देखा तो वहांसे उठ कर तलावकी ओर भागे, वहां जाकर उन्होंने तालावको जलसे रहित देखा, तब वहांसे दौड़ कर नदी पर गये, उसकोभी सूखी हुई पाया, इस प्रकार सब जगह घूम कर और घोर शूलधारी राक्षससे पीड़ित होकर अत्यन्त भयसे अपने पिताकी यज्ञशालामें

घुसे। हे राजन्! उसके द्वार पर रक्षा करनेवाला एक अन्धा शूद्र बैठा था, उसने यवक्रीतको बलसे पकड़ा, तब ये वहीं खड़े रह गये। जब राक्षसने यवक्रीतको शूद्रसे पकड़ा हुआ देखा, तो एक त्रिशूल उसकी छातीमें मारा, उसके लगनेसे यवक्रीत मर गये। यवक्रीतको मार कर राक्षस पुनः रैभ्य मुनिके पास आया, और उनकी आज्ञासे उस स्त्रीके सहित वहीं रहने लगा।

१३६ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे कुन्तीनन्दन! जब भरद्वाज मुनि सन्ध्याकर्म्म करके उठे, तब हाथमें कुशा लेकर अपने आश्रमको गये, पहले जब भरद्वाज मुनि अपने आश्रम पर आते थे, तब सब अग्नि उनको देख कर खड़ी हो जाती थीं परन्तु उस दिन पुत्रके मरनेके कारण कोई अग्नि नहीं उठीं। महातपस्वी भरद्वाजने अग्निहोत्रमें विकार देखकर उस घरकी रक्षा करनेवाले शूद्रसे पूछा कि हे शूद्र! आज यह सब अग्नि हमारा दर्शन करके क्यों नहीं प्रसन्न होती हैं? और तुमभी सब दिनके समान प्रसन्न नहीं दीखते, कहो आश्रममें कुशल तो है? मन्दबुद्धि मेरा पुत्र रैभ्यके आश्रममें तो नहीं गया था। तुम सब समाचार शीघ्र कहो। हमारा मन शुद्ध नहीं होता है।

शूद्र बोला, वह मन्दबुद्धि तुम्हारा पुत्र अवश्य रैभ्य मुनिके आश्रमम गया था, और उसको बलवान शूलधारी राक्षसने मार डाला, वह पड़ा है, वह पीड़ित होकर इस अग्निशालामें आया था, परन्तु मैंने बलसे उसको निवारण किया, वह पवित्र और जलकी इच्छासे यहां आया था, परन्तु मेरे पकड़नेसे उसकी सब आशा नष्ट होगई, तब उस शूलधारी राक्षसने वेगसे दौड़कर उसको मार डाला। भरद्वाज मुनि उस शूद्रके ऐसे अप्रिय वचन सुनकर अपने मरे हुए पुत्रको उठाकर बहुत दुःखसे रोने लगे।

भरद्वाज बोले, हे तात! तुमने ब्राह्मणोंके निमित्त बड़ा भारी तप किया था और यह इच्छा करी थी कि हमको बिनाही पढ़े ब्राह्मणोंके सब वेद आजायं, और तुम अत्यन्त शीलवान होने परभी महात्मा ब्राह्मणोंका अपराधही करते रहे, हे तात! हमने तुमसे कहा था कि, रैभ्यके आश्रमको मत जाना, परन्तु तुम उसी काल और यमराजके समान आश्रमको देखनेको गये, और वह दुष्टबुद्धि महा तेजस्वी रैभ्य मुझ बूढ़ेका एकही पुत्र है, यह जानता हुआभी महाक्रोधके वशमें होगया। हे पुत्र! अब मैं तुम्हारे शोक और रैभ्यके कर्म्मसे अपने प्यारे प्राणको त्यागता हूं, जैसे मैं पुत्रके शोकसे व्याकुल होकर शरीर छोड़ता हूं तैसेही रैभ्यका बड़ा पुत्र रैभ्यको शीघ्रही नाश करेगा। वे पुरुष बहुत सुखी हैं, जिनको पुत्र नहीं उत्पन्न हुआ है, जिन्होंने पुत्रशोकको नहीं देखा, वे सुखसे घूमते हैं, जिनका हृदय पुत्र शोकसे व्याकुल हो गया है, वे अपने प्यारे मित्रोंकोभी शाप देते हैं, तब उनकी बराबर पापी और कौन होगा? तुमको मरा हुआ देखकर मैंने अपने प्यारे सखाको शाप दिया है। ऐसी भारी आपत्ति मेरेसिवा और किसको पड़ेगी?

श्रीलोमश मुनि बोले, भरद्वाज मुनिने बहुत विलाप करके अपने पुत्रका दाहकर्म्म किया, अनन्तर उसी जलती हुई अग्निमें आपभी प्रवेश कर गये।

१३७ अध्याय समाप्त।

लोमश मुनि बोले, हे महाराज! उसी समय महा प्रतापवान रैभ्यके यजमान बृहद्युम्न राजाने यज्ञका आरम्भ किया, बुद्धिमान बृहद्युम्नने अर्वावसु और परावसु रैभ्यके पुत्रोंको यज्ञमें परस्पर सहायक बनाया।

हे कुन्तीनन्दन! वे दोनों अपने पिताकी आज्ञासे यज्ञ सम्पादनके लिये गये; आश्रममें रैभ्य और परावसुकी स्त्री रही। अनन्तर एक रोज रातको अकेले परावसु अपने आश्रमको आये, आश्रममें एकले अपने घरमें अपनी स्त्रीको देखने गये, तब उन्होंने देखा कि काले हरिणका चमड़ा ओढ़े उनके पिता बनमें बैठे हैं, उन्होंने उस घोर अंधियारी रात्रिमें निद्रामें होकर अपने पिताको न पहचाना, उन्होंने जाना कि यह कोई हरिण घूमता फिरता है, परावसुने अपने शरीरकी रक्षाके लिये उस हरिणको मार डाला। हे भारत! जब उन्होंने जाना कि यह हमारे पिता थे, तब उनका सब प्रेतकर्म्म करके उसी यज्ञमें गये और अपने छोटे भाईसे कहा कि, हे तात! हमने हरिनके भ्रमसे पिताको मारडाला और तुम इस यज्ञके भारको कदापि नहीं सम्भाल सकोगे। इसलिये तुम हमारे ब्रह्महत्याका प्रायश्चित्त करो क्योंकि मैं एकला भी इस यज्ञके कर्म्मको समाप्त कर सकता हूं

अर्वावसु बोले, तुम बुद्धिमान राजा बृहद्युम्नकी यज्ञका कर्म्म करो और मैं इन्द्रियोंको वशमें करके तुम्हारे निमित्त ब्रह्महत्याका प्रायश्चित्त करता हूं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! इस प्रकार उस ब्रह्महत्याके पापसे पार होकर अर्वावसु मुनि पुनः उस यज्ञमें आये, जब परावसुने अपने भाईको यज्ञमें आते हुए देखा तो आनन्दसे गद्गद होकर राजासे बोले, कि हे राजन्! इसने ब्रह्महत्या करी है, इसलिये यह यज्ञमें न आने पावे, यदि यह तुमको देख लेगा, तो निःसन्देह तुमको बहुत दुःख होगा।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे प्रजानाथ! राजा बृहद्युम्नने पुरोहितके ऐसे वचन सुनकर सब पुरुषोंको आज्ञा दी कि यह यहां न आने पावे, पुरुषोंसे वारित होनेके समय अर्वावसुने बार बार कहा कि मैंने कोई ब्रह्महत्या नहीं की है, परन्तु किसीनेभी न सुना और सब कहने लगे कि तू हत्यारा है। तब उसने पुनः कहा कि यह ब्रह्महत्या मेरे भाईने करी थी, परन्तु मैंने प्रायश्चित्त करके उनकोभी इस पापसे छुड़ा दिया। तबभी किसीने न सुना, तब महा तपस्वी अर्वावसु क्रोधसे व्याकुल और चुप होकर बनको चले गये, वहां जाकर घोर तपसे सूर्य्यकी आराधना करने लगे। वहां उन्होंने अत्यन्त गुप्त सूर्य्यके मन्त्रका पाठ किया, अनन्तर साक्षात् अग्निनाशी सूर्य्यने शरीर धारण करके उनको दर्शन दिये।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे नरनाथ! अर्वावसुके उस कर्म्मसे सब देवता प्रसन्न हुए, अनन्तर देवतोंने उन्हें श्रेष्ठ और परावसुका प्रत्याख्यान किया। फिर अग्नि आदिक देवतोंने उसको वरदान दिये, तब उसने यह वरदान मांगा कि हमारे पिता जीजायं, हमारे भाई निरपराध हों, पिताको उनके मारनेका स्मरण न रहे, हम और हमारे भाई पापसे छूटें भरद्वाज और यवक्रीत जीजायं, तथा हम वेदको प्रतिष्ठा करें, उस ब्राह्मण श्रेष्ठको देवतोंने यही वरदान दिये। हे युधिष्ठिर! तब वे सब लोग जीगये। अनन्तर अग्नि आदिक देवतोंसे यवक्रीत बोले कि, हे देवश्रेष्ठ! हमने विधिवत वेद पढ़ा और अनेक व्रतभी करे तब ऐसे तपस्वी मुझको रैभ्यमुनिने इस प्रकार क्यों मारा? सब देवता लोग बोले, हे यवक्रीत मुने! तुम ऐसी बात मत कहो, तुमने बिना गुरुके सुखपूर्व्वक वेदोंको पढ़ा है, और उन्होंने बहुत क्लेशसे गुरुको प्रसन्न करके बहुत कालमें वेदोंको पढ़ा है।

श्रीलोमश मुनि बोले कि हे राजशार्दूल! इस प्रकार सबको जिवाकर और यवक्रीतसे ऐसा कहकर इन्द्रादिक देवता स्वर्गको चले गये। यह उन्होंका पवित्र आश्रम है, इसके वृक्ष सदा फूले और फले रहते हैं, आप यहां एक रात्रि बसिये तो सब पापोंसे छूट जाइयेगा।

१३८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले,हे भारत! यह उशीर-वीज, मैनाक और श्वेतपर्व्वतको देखो, हे कौन्तेय! तुम काल पर्व्वतके पार हुए हो, हे भरतर्षभ! यह गङ्गाकी सात धारा शोभित हो रही हैं! यह विरजस तीर्थ है यहां सदाही अग्नि जलती रहतीहै, इस अद्भुत तीर्थको पुरुष नहीं देख सकता, यहांपर तुम स्वस्थचित्त होकर समाधि लगाओ और इन तीर्थोंको देखो, यह देवतोंके खेलनेका स्थान है, यहां चरणका चिह्न लगा है, इस कोभी देखो, हे कुन्तीनन्दन! तुम काल शैल पर्व्वतके पार हुए हो, अब हम लोग श्वेतगिरि और मन्दराचलमें प्रवेश करते हैं जहां माणवर यक्ष और कुवेर रहते हैं, यहां अठ्ठासी हजार शीघ्रगामी यक्ष लोग रहते हैं, और उनसे चौगुने यक्ष और किंपुरुष रहते हैं, वे लोग यक्षराज मणिभद्रके सङ्ग अनेक रूप शस्त्रोंकी धारण करके रहते हैं, उनकी यहां पर बहुत बढ़ि बढ़ी हैं, उनकी गति वायुके समान है; जो इन्द्रकोभी स्वर्गसे गिरा सकते हैं। हे कुन्तीपुत्र! ये पर्व्वत बलवान राक्षस और यक्षोंसे रक्षित हैं। तुम यहां समाधि करो। हे कुन्तीनन्दन! जो कुवेरके मन्त्री हैं, तथा रौद्र मैत्र और राक्षस हैं, हमलोग उन सबसे मिलेंगे, तुम अपने बलको ठीक करो, देखो यह चौबीस कोस ऊंचा कैलास पर्व्वत है, यह बदरिकाश्रम है जहां सब देवता लोग आते हैं, हे राजन्! हमारे तप और भीमसेनके बलसे रक्षित होकर आप इस कुवेरके स्थानको देखिये। जहां असंख्य यक्ष, राक्षस किन्नर, नाग, सुपर्ण और गन्धर्व्व रहते हैं। वरुण, युद्धजेता यमराज, गङ्गा, यमुना, पर्व्वत, वायु अश्विनीकुमार, देवता, नदी और सब तालाब तुम्हारा कल्याण करें। हे देवि! हे गङ्गे! हम तुम्हारे शब्दको सोनेके पर्व्वतसे सुनते हैं, तुम इन पर्व्वतोंमें अजमोढ़ वंशोत्पन्न महाराज युधिष्ठिरकी रक्षा करो। हे सुभगे! हे पर्व्वत-राजपुत्री! यह महाराज उन पर्व्वतोंमें प्रवेश करना चाहते हैं, तुम इनको कल्याण दो। लोमश मुनिने इस प्रकार समुद्रगामिनी गङ्गाकी प्रार्थना करके राजासे कहा कि अब आप सावधान हो जाइये। युधिष्ठिर बोले, आज लोमश मुनिको अपूर्व्व भ्रम हुआ है, जान पड़ता है, कि यह देश बहुत दुःखसे प्रवेश करने योग्य है, इस लिये सब लोग सावधान होकरके रहें।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महाराजने भीमसेनको आज्ञा दी, हे भीम! हे महाबली! तुम बहुत यत्नसे द्रौपदीकी रक्षा करो, क्योंकि अर्ज्जुनके जानेके पश्चात् द्रौपदी भयके समयमें तुम्हारीही शरण लेती है, इसके पश्चात् महाराजने नकुल और सहदेव का माथा संघ कर और शरीरको स्पर्श करके कहा कि तुम लोग कुछ मत डरो, सावधान होकर चलो।

१३८ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम! इन स्थानोंमें अनेक बलवान राक्षस लोग छिपे हुए रहते हैं, यहां अग्नि और तपके सहित चलना चाहिये। हे कुन्तीनन्दन भीम! यहां बलके आश्रयसे भूख और प्यासको परित्याग करो, तुम अपने बल और कुशलताका आश्रय करो, हे कौन्तेय! तुमने कैलासयात्राके प्रति लोमश मुनिके बचन सुने, अब बुद्धिसे विचार करो कि द्रौपदी किस प्रकार चल सकैगी? अथवा सहदेव धौम्य, सारथि, पुरनिवासी, सब नौकर, रथ घोड़े और क्लेश सहनेवाले सब ब्राह्मणोंके सहित तुम लौट जाओ। हे विशालनेत्र भीम! हम तीनों अर्थात् हम नकुल और लोमश मुनि आहारको जीतकर व्रत करते हुए चले जायंगे, जबतक हम लौटकर आवें, तबतक तुम सावधान होकर द्रौपदीकी रक्षा करते हुए गङ्गाद्वारमें रहकर हमारा मार्ग देखना।

भीमसेन बोले, हे महाराज! राजपुत्री कल्याणी द्रौपदी थकाईसे दुःखित होने परभी केवल अर्जुनके देखनेकी इच्छासे जाती है, और आपभी बिना अर्जुनके देखे घबरा रहे हैं, वह अर्जुन निद्राके स्वामी और युद्धोंमें अपराजित हैं, तब मुझे सहदेवको और द्रौपदीको आप क्यों छोड़ते हैं? ब्राह्मण और नौकरलोगोंको चला जाना चाहिये, सारथी नगरके रहनेवाले या और जिसको आप चाहें लौटा दीजिये, मैं इस राक्षसोंसे भरे हुए घोर पर्व्वतमें आपको कदापि नहीं छोड़ सकता हूं, हे पुरुषव्याघ्र! यह पतिव्रता राजपुत्री द्रौपदी और सहदेव आपको छोड़ कर कदापि नही लौट सकते हैं, क्योंकि यह आपके भक्त हैं, मुझे अर्जुन बहुत प्यारे हैं, इस लिये मैं कदापि नहीं लौटकर जाऊंगा। हम सब अर्जुनके देखनेको उत्कण्ठित हैं, इसलिये लौट नहीं सकते, यह अनेक कन्दराओंसे भरा हुआ पर्व्वत यदि रथमें बैठकर चलने योग्य न होगा तो पैरोंही चलेंगे, हे राजन्! हम द्रौपदीको अपने कन्धेपर बिठाके लेचलेंगे, आप कुछ सन्देह मत कीजिये, हमारी बुद्धिमें आता है, कि जहां द्रौपदी नहीं चल सकेगी, तहां ऐसाही करेंगे। आप कुछ सन्देह मत कीजिये, बालक नकुल और सहदेव जहां दुःखसे जाने योग्य मार्गमें नहीं जा सकेंगे, तहां इनको भी मैं ले चलूंगा। राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम! तुम्हारे बलकी वृद्धि हो, तुम जो यशस्विनी द्रौपदी हो सहदेवको ले चलनेको कहते हो, इस लिये हम आशीर्व्वाद देते हैं, कि तुम्हारा यह बल, कीर्त्ति और धर्म्म बढ़े, तुम नकुल सहदेव और द्रौपदीको ले चलना चाहते हो, इससे तुम्हें कहीं थकाई और निरादर नहीं होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सुन्दरी द्रौपदी हंसकर महाराजसे कहने लगी कि हे कुन्तीनन्दन! आप मेरे लिये कुछ दुःख न कीजिये मैं आपही चलूंगी।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे कुन्तीनन्दन! उस गन्धमादन पर्व्वत पर तपस्याके बलसे जा सकते हैं, हम सब तपस्याके बलसे चलेंगे। हे कौन्तेय! हम, तुम, भीमसेन, नकुल सहदेव और द्रौपदी चलकर अर्जुनको देखेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समयमें सब लोग प्रसन्नतापूर्व्वक ऐसा कह रहे थे, उसही समय हिमाचल पर एक पुरुषोंका समूह दीख पड़ा, जिसमें अनेक हाथी, घोड़े, किरात, तङ्गण, पुलिन्द, देवता थे। उस झुण्डमें अनेक आश्चर्य्य दीखते थे, वह देश राजा सुबाहुका था। जब सुबाहुने पाण्डवोंको देखा, तो उनकी बहुत पूजा और सन्मान किया और अपने राज्यकी सीमा तक परम प्रीतिसे पाण्डवोंके सङ्ग गया। पाण्डव लोगभी उसकी पूजासे बहुत प्रसन्न हुए और उसके राज्य भरमें सुखसे रहे, अनन्तर जब प्रातःकाल हुआ तो पाण्डव लोग पैरों होसे हिमाचलको चले, इन्द्रसेन आदि सारथी नगर निवासी तथा रसोइया, द्रौपदीकी दासी, तथा और सब नौकरोंको कुलिन्द देशके राजा सुबाहुकी रक्षामें छोड़ दिया। महावीर्य्य महारथ पाण्डव लोग पैरोंही चले, वे लोग धीरे धीरे प्रसन्नता पूर्व्वक द्रौपदीके सहित उस देशसे निकल गये।

१४० अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम! हे नकुल, सहदेव और द्रौपदी! तुम सब हमारी बातोंको सुनो, जो कर्म्म पुरुषका किया हुआ है, उसका नाश नहीं होता, देखो इस बनके जन्तु लोग कैसे घूम रहे हैं? हम लोग अत्यन्त क्लेशित और दुखित होने परभी परस्पर बात चीत करते हैं, और असमर्थ होने परभी अर्जुनके

देखनेकी इच्छासे चले जाते हैं, इसीसे जैसे अग्नि लगनेसे रूई जलती है, तैसेही मेरा शरीरभी जला जाता है, अब तकभी वीर अर्ज्जुन लौटकर नहीं आये। हे वीर! मैं जो दुःखसे व्याकुल हो रहा हूं, सो द्रौपदी केशाकर्षण आदि क्लेशोंको स्मरण करके जला जाता हूं, मैं नकुलसे बड़े महा पराक्रमी, अजेय, महाधनुर्धारी अर्ज्जुनको न देखनेसे जला जाता हूं। हे वृकोदर! मैं तुम लोगोंके सहित रम्य वन तड़ाग और तीर्थोंमें अर्ज्जुनके देखनेहीको घूमता हूं। हे वृकोदर! पांच वर्ष हुआ कि सत्यसन्ध अर्ज्जुनको हमने नहीं देखा, उन स्यामसुन्दर, निद्राकेस्वामी सिंहके समान तेजस्वी,महाबाहु, सब शस्त्रोंको, जाननेवाले युद्धमें निपुण, असमान धनुषधारी अर्ज्जुनको न देखनेसे हमारा शरीर जला जाता हैं,वह अर्ज्जुन युद्धमें इस प्रकार घूमते हैं, जैसे प्रलयकालमें क्रोध करके यमराज। वह मतवारे हाथी और सिंहके समान कन्धेवाले महावीर हैं, वह महावीर धन और पराक्रममें इन्द्रके समान हैं, नकुल सहदेव से बड़े सफेद घोड़ेवाले और महा पराक्रमी हैं, वह महा दुःखमें पड़े हैं,वह उग्र धनुर्धारी अर्ज्जुन अजेय हैं, उनके न देखनेसे हमारा शरीर जला जाता है, वह सदाही क्षमा करनेवाले और बुरी बात सुनकर भी शरणागत और कोमल मार्गवाले पुरुषको सुखदेनेवाले हैं। यदि छल और मायासे उनको कोई मारना चाहे तो साक्षात् वज्रधारी इन्द्रको भी काल और विषके समान हो जाते हैं, वह महापराक्रमी, महावीर प्रतापवान, लज्जावान अर्ज्जुन शरण आये हुए शत्रुको भी निर्भय कर देते हैं। वह हम सब लोगोंके आगे युद्धमें शत्रुओंके मारनेवाले, सब रत्नोंके लानेवाले और सबके सुखदायक हैं, उसही महापराक्रमीके प्रतापसे हमारे घरमें पहले अनेक रत्न थे, जो सब अब दुर्य्योधनके हुए हैं। हे वीर पाण्डव! जिसके बाहुबलसे हमारी रत्नमयी सभा तीनों लोकोंमें विख्यात हुई है, जो पराक्रममें कृष्णके समान और युद्धमें कार्त्तवीर्य्यके समान हैं, उस युद्धमें अजेय अर्ज्जुनको हम नहीं देखते हैं, जो अर्ज्जुन महापराक्रमी शत्रुनाशन, अजेय, बलराम, कृष्ण और तुम्हारे समान बलवान है, उसको हम नहीं देखते, जो बाहुबल और प्रभावमें इन्द्रके तुल्य, बेगमें वायुके तुल्य और क्रोधमें सनातन मृत्युके समान है,, जिसका मुख चन्द्रमाके तुल्य है, हम सब लोग उसी पुरुषसिंह अर्ज्जुनके देखनेको गन्धमादन पर्व्वतमें प्रवेश करते हैं,। हे वीर! हे महाबाहो! अब हम लोग उस उत्तम पर्व्वतको देखेंगे। जहां विशाल बदरिकाश्रम तथा नरनारायणका स्थान है, उस पर्व्वतमें सदा गन्धर्व्वलोग निवास करते हैं, हमलोग महातप करते हुए पैरोंही राक्षसोंसे सेवित परम रमणीय कुबेरकी पोखरको देखेंगे। हे वृकोदर यह देश वाहनों पर चलनेका नहीं है, इस देशमें दुष्ट लोभी और क्रोधी पुरुष नहीं आसकते हैं, हे भीम! हम सब लोग शस्त्रोंको धारण करके महाव्रतधारी ब्राह्मणोंके सहित अर्ज्जुनके ढूढ़नेको जायंगे। हे कुन्तीनन्दन। जो अपवित्र पुरुष इस देशमें आता है, उसे मक्खी, मच्छर, सिंह व्याघ्र और अनेक सांप मिलते,हैं, परन्तु हम लोग अर्ज्जुनके देखनेकी इच्छासे भोजन करके और आत्माको अपने वशमें करके गन्धमादन पर्व्वत पर जायंगे।

१४१ अध्याय समाप्त।

लोमश मुनि बोले, हे पाण्डवो! तुम सब लोगोंने नदी, पर्व्वत, नगर, जङ्गल श्रीमान तीर्थ और सुन्दर जलोंको देखा हैं, अब यह मार्ग दिव्य गन्धमादन पर्व्वतको जाता है, इस लिये तुम लोग सावधान और पवित्र होजाओ क्योंकि अब पुण्य कर्म्म वाले दिव्य ऋषि और देवतोंके स्थानमें चलना होगा। हे राजन्! महानदी अलकनन्दा बह रही है, हे सौम्य! इसमें

सदाही देवता और ऋषिलोग स्नान करते हैं यह वदरिकाश्रमसे आती है, यह सदाही महात्मा बालखिल्या और आकाशगामी महात्मा गन्धर्वोंसे पूजित और सेवित है, इसी स्थान पर उत्तम स्वरवाले मरीचि, पुलः भृगु और अङ्गिरा सामगान करते हैं, इस स्थान पर देवतोंमें श्रेष्ठ इन्द्र मरुत और अश्विनीकुमारोंके सहित सन्ध्या करते हैं, इस नदी पर दिन रातमें अपने समय पर सूर्य्य चन्द्रमा, नक्षत्र और ग्रह सब आते हैं, हे महाभाग! इसहीके जलको शिवने सिर पर धारण किया है। यही नदी गङ्गाद्वारमें गई है, इसहीसे लोक स्थिर है, हे तात! आप सब लोग मनको वशमें करके इस भगवती गङ्गाके तट पर जाकर प्रणाम कीजिये, महात्मा लोमशके वचन सुनकर सब पाण्डवोंने नियम पूर्व्वक आकाशगङ्गाको प्रणाम किया। धर्म्म करनेवाले पाण्डवलोग गङ्गाको प्रणाम करके प्रसन्नचित्तसे सब ऋषियोंके सहित अगाड़ी चले, आगे उन सब लोगोंने दूसरे मेरु पर्व्वतके समान सफेद और सब ओरको फैला हुआ एक हड्डियोंका ढेर देखा, पाण्डवोंने उसको देखने की इच्छा करी। तब वचनके जानने वाले महात्मा लोमश कहने लगे, कि हे पाण्डवो! तुम लोग हमारी बातको सुनो, यह जो श्रीमान् कैलासके शिखरके समान ढेर देखते हो, सो महात्मा नरक दैत्यकी हड्डी हैं, यह पर्व्वतके पत्थरके ऊपर पड़ी हैं, इस लिये पहाड़के समान दीखती हैं, यहां पुरातन देव परमात्मा विष्णुने इन्द्रके हितकी इच्छासे नरकासुरको मारा था, उस महामनस्वीने दश हजार वर्षतक घोर तपस्या करके अपने बल और विद्यासे इन्द्रके पदको चाहा था, वह दैत्य तपोबल और महाबाहुबलसे दिन दिन बलवान होता जाता था, और सबको दुःख देता था, हे पापरहित! जब इन्द्रने उसके तप और पराक्रमको देखा तो भयसे व्याकुल होकर घवड़ा गये, उन्होंने सर्व्वव्यापी परमेश्वर श्रीमान अविनाशी विष्णुका ध्यान किया, उसी समय विष्णु वहां प्रगट होकर प्रकाशमान होने लगे, तब सब देवता और ऋषियोंने उनकी स्तुति करी, जलते हुए भगवान अग्नि उनको देखकर तेजसे रहित होगये, वे उनके तेजसे डर गये, वर देनेवाले सब देवतोंके स्वामी विष्णुको देखकर वज्रधारी इन्द्रने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और अपने भयका प्रयोजन कह सुनाया, विष्णु बोले, हे इन्द्र! तुमको जो नरक नामक दैत्यराजसे भय हुआ है, सो हम जानते हैं, वह अपने तपके कर्म्मसे इन्द्रके स्थानको चाहता है, सो हे देवेन्द्र! आप थोड़ो देर शान्त हूजिये मैं उसको अत्यन्त तपसे सिद्ध होने परभी मार डालंगा, अनन्तर महातेजस्वी विष्णुने उस राक्षसको हाथसे एक तमाचा मारकर उसके सब तेजको नाश कर दिया, वह मर कर पर्व्वतके समान पृथ्वीपर गिर पड़ा, यह हड्डियोंका ढेर उसी मरे हुए मायावीका है, अब हम विष्णुका दूसरा चरित्र तुमसे कहते हैं, जिस प्रकार समस्त पृथ्वो नष्ट होकर पातालमें डूब गई थी, और विष्णुने एक दांतवाले शूकरका रूप धारण करके उसका उद्धार किया था।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! आप इस कथाको हमसे विस्तारपूर्व्वक कहिये। किस प्रकार चार सौ कोस तक पृथ्वी, समुद्रमें डूब गई थी और किस प्रकारसे भगवान विष्णु ने उसका उद्धार किया था? समस्त अन्नोंके उत्पन्न करनेवाली महाभागिनी स्थिर जगतको धारण करनेवाली भगवती पृथ्वी किस प्रकार सौ योजन नीचे चली गई थीं, और हे द्विजसत्तम! भगवान विष्णुका अपार पराक्रम किसने प्रकाश किया था? हम इस सब कथाको विस्तार सहित सुनना चाहते हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! तुमने जो कथा हमसे पूछी सो सब हम कहते हैं,

तुम सुनो, हे तात! पहले समयमें जब भयङ्कर सतयुग वर्त्तमान था, तब भगवान आदिदेव विष्णुने यज्ञका अधिकार स्थापन किया था उस समय न कोई मरता और न कोई उत्पन्न होता था, परन्तु बुद्धिमान विष्णुके उस नियम समयमें पक्षी, पशु, गाय और बकरी बहुत बढ़ गये, हे पुरुषशार्द्दूल! इसी प्रकारसे हजारों, लाखों, करोड़ों पुरुषभी जगत्‌में बढ़ गये। जैसे वर्षामें पानी बढ़ता है, तैसेही प्रजाभी बढ़ने लगी। हे तात! जब ऐसा भयङ्कर समय आया, तब अत्यन्त बोझसे पीड़ित पृथ्वी चार सौ कोस नीचेको चली गई। पृथ्वी अत्यन्त भारसे दुःखित होकर दुःखित चित्तसे वरदान देनेवाले भगवान विष्णुके शरणमें गई।

पृथ्वी बोली, हे भगवान्! मैं आपकी कृपासे बहुत दिनतक यहीं रहनेकी इच्छा करती हूं, क्योंकि बोझसे अत्यन्त व्याकुल होनेके कारण, अब उस कामको नहीं कर सकती हूं। हे भगवन्! आप हमारे इस भारको उतारनेमें समर्थ हैं। हे नाथ! मैं तुम्हारी शरण हूं तुम मेरी रक्षा करो। भगवान अविनाशी विष्णुने पृथ्वीके वचन सुनकर प्रसन्न हो इन अक्षरोंको कहा।

श्रीविष्णु भगवान बोले, हे पृथ्वी! हे रत्नोंको धारण करनेवाली! तुम जो भारसे पीड़ित हुई हो, इसलिये कुछ शोच मत करो, हम तुम्हारे भारको अभी उतारते हैं, तब तुम हलकी होजाओगी।

श्रीलोमश मुनि बोले, पर्व्वतकुण्डल धारिणी पृथ्वीको बिदा करके महा तेजस्वी भगवान विष्णुने एक दांतवाले शूकरका रूप धारण किया; उनके नेत्र जलती हुई अग्निके समान भयङ्कर होगये। और उनके मुखसे धुआं निकलने लगा, उन्होंने अपने प्रकाशमान एक दांत पर पृथ्वीको रख लिया, अनन्तर अविनाशी विष्णुने चार सौ कोस पृथ्वीका उद्धार किया। जब भगवान विष्णुने पृथ्वीका उद्धार किया तब सब देवता और तपोधन ऋषिलोग घबराने लगे, उस समय आकाश, पाताल और मर्त्यलोकमें हाहाकार होने लगा, उस समय देवता और मनुष्य कोई भी नहीं बैठा था, तब अनेक देवता और ऋषि लोग सुखसे बैठे हुए, तेजसे भरे ब्रह्माके पास गये, उन देवराज सर्व्व लोकसाक्षी ब्रह्माके पास जाकर सब देवता हाथ जोड़कर बोले, कि समस्त लोक और चराचर भयसे व्याकुल हुए हैं, हे देवनाथ! सब समुद्र उथल पुथल हो रहे हैं, यह पृथ्वी चारसौ कोस चली गई है, यह क्या कारण है? और किसके प्रभावसे समस्त जगत् व्याकुल होरहा है? आप इन सबका कारण हमसे कहिये।

ब्रह्मा बोले, हे देवतो! तुम लोगोंको राक्षसोंसे कभी और कहीं भी भय नहीं है, जगत्‌के भयका कारण हमसे सुनो। जो श्रीमान् सर्व्वव्यापी अविनाशी विष्णु हैं, उनके प्रभावसे यह समस्त जगत् इस अवस्थाको प्राप्त हुआ है। परमात्मा विष्णुने समस्त पृथ्वी का सौ योजनसे उद्धार किया है, तुम लोग सब संशयोंको छोड़ दो, इसी कारण इस जगत्‌में संक्षोभ हुआ है।

देवता बोले, हे भगवन्! विष्णु कौनसे स्थानमें प्रसन्न होकर पृथ्वीका उद्धार कर रहे हैं। आप उस स्थानको हमसे कहिये हम लोग वहां जायंगे। ब्रह्मा बोले तुम लोग जाओ, वे नन्दनवनमें खड़े हैं, वह देखो यहींसे भगवान श्रीमान् विष्णुका तेज दीखता है, यह लोकपूजित भगवान् विष्णु वराह-रूप धारण करके पृथ्वीका उद्धार कर रहे हैं, इनका रूप इस समय प्रलयकालकी अग्निके समान दीखता है। हे देवतो! इनके हृदयमें श्रीवत्सचिन्ह शोभित है, श्रीलोमश मुनि बोले, तब सब देवता ब्रह्माके वचन सुन और उनको प्रणामकर उनके सहित विष्णुके पास जाकर वहां वराहमूर्त्तिका दर्शन करके ब्रह्माको आगे कर सम्भाषण करते

हुए यथायोग्य स्थानसें गये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,हे जनमेजय! लोमश मुनिके बचनको सुनकर पाण्डव लोग प्रसन्न होकर उनकी आज्ञानुसार आगेको चले।

१४२ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमशमुनि बोले, शूरवीर पाण्डव लोग धनुष, तूणीर, बाण, और खड्गको धारण करके तथा अंगुलियोंमें पञ्जा पहनके चले, वे सब धनुषधारियोंसें श्रेष्ठ महातेजस्वी पाण्डव लोग सब ब्राह्मणोंको प्रणाम करके द्रौपदीके सहित गन्धमादनको चले, उन्होंने पर्वत पर तालाब, नदी, शिखर, झरने और बहुत छायावाले वृक्षोंको देखा, उन सब देशोंमें अनेक देव ऋषि निवास करते थे, वहां सदा फूलनेवाले वृक्ष शोभित थे, वीर पाण्डवोंने केवल मूल और फलहीका आहार करना आरम्भ किया, अनन्तर अनेक जातिके पक्षी और हरिणोंको देखते हुए नीचे और ऊंचे देशमें घूमते हुए पर्वत पर पहुंचे, उस पर्वतमें ऋषि, सिद्ध, देवता और किन्नर वास करते थे, तथा वह देश अप्सरोंको अत्यन्त प्रिय था। हे प्रजानाथ! जिस समय महात्मा वीरपाण्डव लोग गन्धमादन पर्वत पर पहुंचे; उस समय महावर्षा और भारी आंधी आई। उस आंधीसे पत्तोंके सहित ऐसी धूल उड़ी, कि जिससे पृथ्वी और आकाश भर गया। उस समय धूल उड़नेसे न कोई किसीको देख सकता था और न एक दूसरेसे बात कर सका। हे जनमेजय! उस समय आखोंके आगे केवल अन्धेरा दीखता था, उस वायुके संग पत्थरके किनके उड़के आंखोंमें भरे जाते थे, वायुके वेगसे अनेक वृक्ष टूट टूटकर पृथ्वीमें गिरते थे, तथा औरभी पत्थर आदि का घोर शब्द होने लगा। उस समय वायुसे मोहित पाण्डवोंको ऐसी शङ्का उत्पन्न हुई कि, क्या स्वर्ग पृथ्वीमें गिरेगा? क्या पृथ्वी फट जायगी? क्या इस पर्वतके दो टुकड़े हो जायंगे? पाण्डव लोग भयसे व्याकुल होकर वृक्ष, बिल और नीचो पृथ्वीको हाथोंसे टटोलने लगे। अनन्तर महाबल भीमसेन द्रौपदीके सहित अपनी धनुषको धारण करके एक वृक्षके नीचे खड़े हुए, महाराज और धौम्य मुनि उस महा बनमें छिप कर बैठ गये, सहदेव अग्नि लेकर पर्वतमें छिप गये, नकुल, महा तपस्वी लोमश तथा और ब्राह्मण लोग भयसे व्याकुल होकर इधर उधर पृथ्वीके नीचे छिप रहे। जिस समय वह घोर वायु कुछ मन्द हुआ और वह अन्धकार शान्त हुआ, तब बड़ी बड़ी धाराओंसे घोर वर्षा आई। उस वर्षामें मेघोंका चटचट शब्द ऐसे वेगसे हुआ, जैसे वज्र गिरता है। अनन्तर महा प्रकाशवाली बिजली मेघोंमें घूमने लगी, उसके पश्चात् वायुसे प्रेरित होकर चारों ओर पत्थरोंकी धारा बरसने लगी। उन पत्थरोंसे सब पर्वत पूर्ण हो गया। हे प्रजानाथ! उसके थोड़ी देर पश्चात् समुद्रतक जाने वाली अनेक नदी फेन और तरङ्गोंके सहित चारो ओरसे बहने लगीं। उन नदियोंमें भारी भारी तरङ्ग और फेन बहने लगे। उस समय नदियोंके तेजसे वृक्षोंके टूटनेका महा शब्द हुआ। थोड़ीही देरमें वायु वर्षा नदी और शब्द सब समाप्त हो गये, और सूर्य्य उदय होगया। हे जनमेजय! तब वे सब लोग इकट्ठे हुए और वायु धीरे चलने लगा। वीर पाण्डव लोग धीरे धीरे गन्धमादनकी ओर फिर चले।

१४३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! जब महात्मा पाण्डव लोग एक कोस चले तो पैरों चलनेमें अयोग्य पाञ्चालराजपुत्री तपस्विनी द्रौपदी अत्यन्त कोमला होनेके कारण तथा उस वायु और वर्षाके दुःखसे अत्यन्त थक गई। उस समय वह कमलनैनी दुःखसे कांपने लगी

और अपने सुन्दर हाथोंसे अपने जाघोंको दबाने लगी। द्रौपदीने गजके सुण्डके समान दोनों जाघोंको मिला दिया, अनन्तर केलेके समान कांपती हुई पृथ्वीमें गिर पड़ी। उस सुन्दर मुखारबिन्दवाली द्रौपदीको टूटी हुई लताके समान गिरते हुए देख बलवान नकुलने दौड़कर संभाला। नकुल बोले हे राजन! हे भारत! यह कमलनैनी पाञ्चालराजपुत्री द्रौपदी अत्यन्त थककर पृथ्वीमें गिरना चाहती है, आप इसको देखिये, हे महाराज! यह कोमल चालवाली द्रौपदी इस दुःखके योग्य नहीं थी, अब अत्यन्त थक गई है, आप इसको धीर्य्य दीजिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, नकुलके बचन सुन महाराज, भीमसेन और सहदेव वेगसे दौड़े। महाराजने द्रौपदीके मुखका रङ्ग बदला हुआ और उसको अत्यन्त दुःखिनी देख बहुत दुःख किया और उसको अपनी गोदमें बैठाकर रोने लगे। राजा युधिष्ठिर बोले, हाय यह सुरक्षित स्थानोंमें उत्तम पलङ्ग पर सोनके और सुख करनेके योग्य सुन्दर वर्णवाली द्रौपदी किस प्रकार पृथ्वीमें गिर गई? इस सुख भोगने योग्य द्रौपदीके सुकुमार चरण और कमलके समान मुख मेरे दोषसे काला होगया है, मुझ निर्बुद्धिने जुवेमें मत्त होकर यह क्या काम किया, जो द्रौपदीको सङ्गले इस हारणोंसे भरे हुए जङ्गलको चला आया। महाराज द्रुपदने यह समझा था, कि यह कमलनैनी, कल्याणी पाण्डवोंकी स्त्री होकर सुख पावैगी, परन्तु मुझ पापीके कुकर्म्मोंसे आज वही द्रौपदी उन सब बातोंको लजाकर और अत्यन्त थककर पृथ्वीमें पड़ी सो रही है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जहां धर्म्मराज युधिष्ठिर इस प्रकार रो रहे थे, तहां धौम्य आदि सब ब्राह्मण लोग आये, वे सब लोग महाराजको आशीर्व्वाद देकर और प्रशंसा करके उनको समुझाने लगे और विघ्नके नाश करनेवाले, अनेक मन्त्रोंको पढ़कर उत्तम क्रिया करने लगे। जब महा ऋषियोंने शान्तिके अर्थ वेदके मन्त्र पढ़े, पाण्डवोंने बार बार शीतल ठण्डे हाथोंसे छाया और ठण्डे पानीके सहित बहुत हवा करी, तब द्रौपदीको कुछ सुख प्राप्त हुआ और धीरे धीरे चैतन्य होगई। अनन्तर पाण्डवोंने दीन तपस्विनीको उठाकर मृगछाला पर लिटा दिया, और सब लोग चारों ओर बैठ गये! नकुल और सहदेव द्रौपदीके उत्तम लक्षणयुक्त लाल कमलवाले चरणोंको धनुषकी ठेठवाले हाथोंसे धीरे धीरे मलने लगे, और महाराज युधिष्ठिर उसको समझाने लगे और भीमसेनसे ऐसा बोले, हे भीम! हे महाबाहो! अगाड़ीके बहुत पर्व्वत दुःखसे जाने योग्य और हिमसे भरे हुए हैं, उनमें द्रौपदी कैसे चल सकेगी? भीमसेन बोले, हे राजेन्द्र! आप कुछ शोच न कीजिये, मैं आपको द्रौपदीको नकुल और सहदेवको अपनी पीठपर चढ़ाकर ले चलूंगा। हे पापरहित! मेरा पुत्र घटोत्कच जो हिडिम्बाके गर्भसे उत्पन्न हुआ है, वह मेरे समान बलवान महा वीर्य्यवान है, सो आपकी आज्ञासे हम सबको ले चल सकता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराज! धर्म्मराज भीमसेनका बचन सुनकर उनका समादर करके बोले कि "ऐसाही होवे" तब धर्म्मराजकी आज्ञा मान भीमने अपने राक्षसपुत्र घटोत्कचका स्मरण किया, महात्मा घटोत्कच पिताके स्मरण करतेही आपहुंचा और हाथ जोड़कर सब पाण्डवोंको प्रणाम किया। महाबाहु घटोत्कचने ब्राह्मणोंको प्रणाम करके आशीर्व्वाद पाया। अनन्तर महापराक्रमी अपने पिता भीमसेनसे बोला, मैं आपकी आज्ञानुसार सेवा करनेको आया हूं। हे महाबाहो! आप हमको शीघ्र आज्ञा दीजिये, हम निःसन्देह सब कामोंको करेंगे, भीमसेनने अपने राक्षस

पुत्रकी वचन सुन उसको अपने शरीरमें लपटा लिया।

१४४ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भीम! यह राक्षसोंमें श्रेष्ठ बलवान, सत्यवादी, हमारा भक्त घटोत्कच हमारा औरस पुत्र (अपने वीर्य्यसे उत्पन्न) है। अब यह हम लोगोंको शीघ्र ले चले, हे भीम! हे महापराक्रमी हम तुम्हारे बाहुबलसे रक्षित होकर सुखसे गन्धमादनको चलेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषसिंह भीमने अपने भाईकी आज्ञा सुनकर शत्रुनाशन घटोत्कचको आज्ञा दी। भीमसेन बोले, हे हिड़म्बानन्दन! हे तात! हे आकाशमें चलनेवाले! देखो यह अपराजिता तुम्हारी माता अत्यन्त थक गई है, और तुम सुखसे इच्छानुसार चल सकते हो, इस लिये तुम हम सब लोगोंको कन्धे पर बिठाकर आकाश मार्गसे चलो, तुम्हारा कल्याण हो, तुम धीरे धीरे चलना, जिसमें द्रौपदीको दुःख न हो।

घटोत्कच बोला, हम अकेलेही महाराज, धौम्य, द्रौपदी, नकुल और सहदेवको ले जा सकते हैं और जिस परभी आप हमारे सहायक हैं, तब क्या सोच है? हे पापरहित! हमारे संगके सैकड़ों शूरवीर लोग आकाशमें चलने और इच्छानुसार रूप बनानेमें समर्थ हैं, वे हमारे संग सब ब्राह्मणोंको ले चलेंगे। अनन्तर महावीर घटोत्कचने द्रौपदी और पाण्डवोंको अपने कन्धे पर बिठाया और सबने ब्राह्मणोंको अपने ऊपर चढ़ा लिया, महात्मा महातेजस्वी लोमश योगमार्गसे दूसरे सूर्य्यके समान प्रकाशित होते हुए आपही आकाशमें चलने लगे। राक्षसराज घटोत्कचकी आज्ञासे और राक्षसोंने सब ब्राह्मणोंको अपने कन्धे पर चढ़ा लिया, और सब लोग चल दिये। अनेक रमणीय वन और बागोंको देखते हुए ये सब लोग बदरीनारायणकी ओर चले। वे लोग अत्यन्त वेगसे चलने लगे। इन लिये पाण्डवोंको दूसरा मार्गभी थोड़ा जान पड़ा। उन्होंने मार्गमें अनेक रत्नोंकी खान, राक्षसोंसे भरे हुए देश, धातुओंसे रङ्गे हुए पर्व्वत, किन्नर, बन्दर, विद्याधर, किंपुरुष और गन्धर्वोंसे भरे हुए देशोंको देखा, उन्होंने वीर, चमरी, बन्दर, हरिन, सूअर, नीलगाय और भैंसोंसे भरे हुए जङ्गलोंको देखा, अनेक नदी, जल, अनेक प्रकारसे हरिण, बन्दरोंसे शोभित वनको देख, मतवारे पक्षियोंके सहित अनेक वृक्षोंको देखते हुए अनेक देशोंको नांघते हुए उत्तरके देशमें घूमते हुए बहुत आश्चर्य्यवाले कैलासपर्व्वतको देखा, उसी पर्व्वतके नीचे नर और नारायणके आश्रमको देखा। उस स्थानमें अनेक फूले फले वृक्ष लगे थे, पाण्डव उस मनोहर सुन्दर उत्तम छायावाले परम शोभायुक्त स्थानको देखकर बहुत प्रसन्न हुए, वह स्थान चिकने, कोमल, सुन्दर सुन्दर बड़ी बड़ी और ऊंची शाखाओंसे शोभित, मीठे और तीव्र फलोंसे भरे हुए दिव्य वृक्षोंसे शोभित महर्षिझुण्डसे सेवित महा मतवारे पक्षियोंके समूहोंसे पूजित था। उस देशमें कोई मच्छर किसीको नहीं काटता था, और अनेक फल मूल तथा जुतरही घाससे पूर्ण था, जहां नित्यही गन्धर्व्व लोग निवास करते थे, जहां स्वभावसे समानभूमि सुन्दर स्थान और हिमसे शीतल कण्टकरहित पृथ्वी थी, वहां वे सब पाण्डव लोग ब्राह्मणोंके सहित राक्षसोंके कन्धोंसे धीरे धीरे उतरे। हे राजन्! अनन्तर पाण्डवोंने श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके सहित नर नारायणके रमणीय आश्रमको देखा। वह स्थान अन्धकार, भूख, शीत गर्मी, दोष और शोकसे रहित था, वह स्थान परम पवित्र और सूर्य्यकी किरणोंसे भरा था। हे महाराज! ब्राह्मणोंकी लक्ष्मीसे युक्त और ब्रह्मर्षियोंसे सेवित था, उस स्थानमें

कोईभी पापी नहीं जा सकता। जहां अनेक बलि होम और दिव्य चन्दनादिकी सुगन्धि आरही थी, जहां दिव्य फूल शोभायमान थे, जहां अनेक बड़ी बड़ी अग्निशाला स्रुवा और वर्व्वत विराजमान थे, जहां बड़े बड़े जलके कलश और अनेक यज्ञकी सामग्री रखी थीं, जो स्थान सब पुरुषोंकी शरण देनेवाला, वेद शब्दसे पूरित,परम रमणीय, थकाईका नाश करनेवाला शोभासे भरा वर्णन करनेके अयोग्य, देव समान फल मूल खानेवाले हरिणचर्म्मधारी महात्मा सूर्य्य और अग्निके समान, तपसे आत्मदर्शी, मोक्षके जाननेवाले, यत्न परायण, ब्रह्माके समान महाभागी, वेदवादी, ब्रह्मऋषियोंसे शोभित था। बुद्धिमान महाराज महा तेजस्वी पवित्र राजा युधिष्ठिरने सब ब्राह्मणोंकी पूजा करी वहांके वासी दिव्य ज्ञानवाले ब्राह्मणोंने जब जाना कि महाराज युधिष्ठिर आये हैं, तब बहुत प्रेमके सहित सब लोग उनके पास आये, अग्निके समान तेजस्वी महात्मा वेदपाठी लोग ब्राह्मण लोग महाराजको प्रीतिके सहित आशीर्वाद देने लगे, और पवित्र फल मूल और जलसे उनका सत्कार करने लगे, धर्म्मराज युधिष्ठिरने उनकी दी हुई पूजाको आनन्दके सहित ग्रहण किया। हे पापरहित! अनन्तर वेद-वेदाङ्गके जाननेवाले सहस्रों ब्राह्मण द्रौपदी और अपने भाइयोंके सहित महाराजने उस इन्द्रके समान पवित्र दिव्य गन्धोंसे भरे हुए मनोहर नारायणके आश्रममें प्रवेश किया। वहां धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने देव ऋषियोंसे पूजित, गङ्गाके तटपर विराजमान नर और नारायण मुनिके आश्रमको देखा। पुरुषसिंह पाण्डव लोग उस आश्रमको देखकर बहुत प्रसन्न हुए, वहां मीठे दिव्य फल और ब्रह्मर्षियोंको देखा, महात्मा पाण्डव लोग उस स्थानको देखकर ब्राह्मणोंके सहित उसी स्थानमें रहने और आनन्दसे क्रीड़ा करने लगे। वहांसे वे लोग अनेक पक्षियोंसे युक्त सोनेके शिखरवाले मैनाक पर्व्वत और सुखदायक हन्दसरको देखने लगे, उस मनोहर, सब समय फूलनेवाले पुष्पोंसे शोभित, फल और फूलोंसे नीचे हुए वृक्षोंसे विराजमान सहस्रों कोकिलोंके शब्दसे शोभित, चीकने पत्तोंवाले तथा शीतल छायावाले, मनोहर वृक्षोंसे विराजमान वनमें द्रौपदीके सहित विहार करने लगे, पाण्डव लोग विचित्र सुन्दर जलसे भरे हुए, उत्तम कमलोंसे सब ओर शोभित सुन्दर तलावोंको देखते हुए विहार करने लगे। हे राजन्! द्रौपदीके सहित पाण्डवोंको प्रसन्न करनेके निमित्त सुगन्धवाला शीतल वायु चलने लगा। महात्मा पाण्डव लोग सबको पवित्र करनेवाली, शीतल, निर्म्मल कमलोंसे युक्त, मणिरचित घाटवाली दोनों ओर वृक्षोंसे शोभित, दिव्य फूलोंसे भरी हुई, मनको प्रीतिको बढ़ानेवाली गङ्गाको बदरिकाश्रमके नीचे देखने लगे। उस अत्यन्त दुःखसे जाने योग्य, देवऋषियोंसे शोभित देशमें भागीरथीके पवित्र जलसे पाण्डव लोग पितरोंका तर्पण करने लगे। कुरुकुलोत्पन्न कुन्तीनन्दन पाण्डव लोगोंने अत्यन्त पवित्र होकर उस स्थानमें देवता और ऋषियोंका तर्पण किया और वेदमन्त्रोंको जपा। पुरुषसिंह वीर महा तेजस्वी पाण्डवलोग द्रौपदी और ब्रह्मणोंके सहित उस स्थानमें विहार करने लगे।

१४५ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषसिंह वीर पाण्डव लोग उस स्थानमें अत्यन्त पवित्र होकर अर्जुनके देखनेकी इच्छासे छःदिन रहे। एक दिन पूर्व्व और उत्तरका वायु बहने लगा। तब इच्छानुसार एक सहस्र दलका कमल वायुमें उड़ता हुआ वहां पहुंचा। उस सुन्दर और दिव्य गन्धयुक्त पवित्र कमलको वायुसे उड़ा हुआ और पृथ्वीमें पड़ा हुआ द्रौपदीने देखा,

सुन्दर सुगन्धयुक्त सुन्दर कमलको सुन्दरी द्रौपदीने देखकर बहुत प्रसन्नतासे भीमसेनसे कहा। हे भीम! इस उत्तम हमारे प्यारे दिव्य गन्धयुक्त कमलको तुम देखो। हे शत्रुनाशन! मैं यह कमल धर्मराजको देना चाहती हूं। तुम हमारी प्रसन्नताके निमित्त इसको ले आओ। हम लोग आश्रममें ले जायंगे। हे कुन्तीनन्दन! यदि मैं तुम्हारी प्यारी हूं, तो तुम ऐसे बहुतसे कमल मुझको ला दो, मैं इन सबको अपने आश्रम काम्यक वनको ले जाऊंगी। सुन्दर कटाक्षवाली अनिन्दिता द्रौपदी ऐसे कह उस कमलको लेकर महाराजके पास चलो गई, पुरुषसिंह भीमसेन अपनी प्यारी रानीका अभिप्राय जान जिधरसे वायु आता था, उधरहीको चले, उन्होंने यह विचारा कि जिधरसे वायु आता है, उधरही यह कमल होगा। भीमसेन फूल लेनेकी इच्छासे शीघ्रता सहित चलने लगे, उन्होंने सोनेकी पीठवाली धनुष और सर्पके समान विषभरे बाण लिये, सिंहके समान क्रोधमें भरकर वहांसे मतवाले हाथीके समान चले। उस महा धनुषधारी और महाबाणवाले भीमको सब प्राणी देखने लगे। न उन्हें थकाई, न ग्लानि, न भय और न कुछ सन्देह होता था। कभी कभी शीतल वायुभी उनकी सेवा करने लगा। आह्लादसे भरे हुए द्रौपदीका प्रिय चाहनेवाले, शोक और भयसे रहित बलवान भीम चलते चलते एक पर्व्वतके ऊपर पहुंचे। वहां न्यायशील भीमसेनने नीली शिलावाले अनेक वृक्ष लता और गुच्छोंसे शोभित पर्वतको देखा, वहां अनेक किन्नर लोग निवास करते थे। जहां अनेक धातुओंसे रङ्गे हुए उत्तम उत्तम वृक्ष लगे थे, उस पर्व्वतका नाम गन्धमादन था, वह सर्व्वत रमणीय होनेसे ऐसा सुन्दर जान पड़ता था, मानो सब भूषणोंके सहित यह पृथ्वीका हाथ ऊपरको उठा है, अनन्तपराक्रमी भीम उन सब चीजोंको देखते और अभिप्रायोंको हृदयमें विचारते कोयल और भौरोंके शब्दको सुनते सब ऋतुमें फूलनेवाले फूलोंकी सुगन्धिको सूंघते उसकी शोभामें आंख, कान और मनको लगाये मतवारे हाथीके समान झूमते हुए चलने लगे। तब अनेक पवित्र फूलोंकी गन्धोंको लेकर गन्धमादनको शीतल वायु उनकी सेवा करने लगा, उससे उनका सब परिश्रम दूर हुआ और सब रोवें खड़े होगये। महा पराक्रमी भीमने गन्धर्व्व, यक्ष, देवता और ब्रह्मर्षियोंसे सेवित गन्धमादन पर्व्वतको देखा, वहांसे भी शत्रुनाशन भीम फूल लेनेको आगे चले। वहांसे आगे चलकर भीमने अनेक धातुओंकी रेखाओंसे शोभित सोने और चांदियोंके रङ्गवाले शिखरोंको ऐसा देखा, मानो यह सब पर्व्वतको अंगुली लगी हैं। उस पर्व्वत पर अनेक वृक्ष शोभित थे, नीचे भागमें जो बादल आते जाते थे, उससे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह पर्व्वत पंख लगाए नाच रहा है। उसमें जो झरनोंके पानीके कणका लग गये थे, उससे उनकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, मानो अनेक मोतियोंके हार लटक रहे हैं, उसमें अनेक गुहा और सुन्दर झरने शोभायमान थे, अनेक नाचती हुई अप्सराओंके पायजेबका शब्द और नाचते हुए मोरोंकी ध्वनि आनन्द बढ़ा रही थी, जिसको शिला दिग्गजोंके दांत घिसनेसे फट गई थीं, वहां जो नदियोंके जल बह रहे थे, उससे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह इस पहाड़का दुपट्टा नीचे गिर गया है, चारों ओर सावधान उत्तम अन्न मुखमें खड़े थे, उस पहाड़के हरिन निर्भय होकर भीमसेनका तमाशा देखने लगे। उस पहाड़के अनेक कुञ्ज भीमके वेगसे चलायमान होगये। श्रीमान् भीमसेन भी प्रसन्न होकर वहां आनन्द करने लगे। युवा सिंहको मारनेमें समर्थ सुन्दरनखवाले सोनेके समान रङ्गवाले विशाल देह मतवारे

हाथीके समान बलवान, मतवारे हाथीके समान वेगवान, मतवाले हाथीके समान लाल नेत्रवाले और अपने बलसे मतवारे हाथीको रोकनेवाले भीमसेन उस पहाड़ पर वेगसे चलने लगे। उस स्थानमें भीमसेनको पतिके सहित एकाग्र बैठी हुई अदृश्य यक्ष और गन्धर्व्वोंकी स्त्री देखने लगीं। पाण्डुनन्दनको देख वह लोग कहने लगीं, क्या यह साक्षात रूपका अवतार है? इस प्रकार दुर्य्योधनके दिये हुए अनेक दुःखोंको स्मरण करते हुए, और बनवासमें द्रौपदीके प्रियकार्य्यका निश्चय करते हुए, रमणीय गन्धमादन पर्व्वत पर भीमसेन बिहार करने लगे, एक समय उन्होंने बिचारा कि अर्ज्जुन स्वर्गको गये हैं, और मैं फल लेनेको इधर आया हूं, इस समय महाराज युधिष्ठिर क्या करेंगे, निश्चय पुरुषोंमें श्रेष्ठ महाराज प्रेम और थोड़ा बल होनेके कारण नकुल और सहदेवको न छोड़ेंगे। हमको किस प्रकार यह फूल शीघ्र मिलेगा? पुरुषसिंह भीमसेन ऐसा बिचारकर गरुड़के समान वेगसे चलने लगे। उनकी दृष्टि और मन पर्व्वतके फूलोंमें लगे रहे, द्रौपदीके बचन ग्रहण करके अपने चरणोंसे पृथ्वीको कंपाते हुए अनेक हाथियोंके झुण्डोंको वायुके समान वेगसे डराते हुए, महाबलसे सिंह व्याघ्र और हरिणोंको मारते हुए, अनेक वृक्षोंको तोड़ते और चीरते हुए वेगसे लता और बल्लिरियोंको खींचते हुए मतवारे हाथीके समान एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे पर्व्वतों पर जाने लगे। जैसे बिजलीके सहित मेघ गरजता हो, वैसेही भीम भी बहुत गर्ज्जते हुए चलने लगे। उस शब्दसे जाग करके बड़े बड़े सिंह और भैंसे जमुहाते हुए गुहाओंको छोड़ छोड़ भागने लगे। उस शब्दसे डरकर अनेक मतवाले हाथी हथिनियोंके सहित उस बनको छोड़ दूसरे बनोंको जाने लगे। उस शब्दको सुनकर सूअर, हरिण, भैंसे, व्याघ्र, सियार, नीलगाय तथा और भी बनमें रहने वाले जन्तुओंके झुण्ड घोर शब्द करने लगे। चकवा चकवी, मोर चकोर, हंस, जलमुरग, तोते, कोकिल और सारस चेतनारहित होकर इधर उधरको भागने लगे। बहुतेरे सिंह, व्याघ्र, हाथी और हथिनी मदसे भरकर भीमकी ओर दौड़े; उनको भीमने बाणोंसे मारा। बाणोंके लगनेसे वे सब भयसे व्याकुल होकर विष्ठा और मूत्र परित्याग करने लगे, और मुंह फैलाकर घोर शब्द करने लगे। तब श्रीमान भीमसेनने क्रोध और बलसे भरकर हाथीसे हाथी और सिंहसे सिंहको लड़ाना आरम्भ किया। बलवान पाण्डुनन्दनने अनेक जन्तुओंको तमाचोंसे मार डाला। सिंह, व्याघ्र और रीछ भीमसेनसे पीड़ित और भयसे व्याकुल होकर उनको छोड़कर भागने लगे और विष्ठा मूत्र परित्याग करने लगे। उन सबको छोड़कर श्रीमान् महाबली पाण्डुनन्दन अपने शब्दसे दिशाओंको पूर्ण करते हुए एक बनमें पहुंचे। महाबाहु भीमसेनने उस गन्धमादनके बनमें एक रमणीय बहुत योजन तक विस्तृत केलेके बनको देखा। महाबलवान भीमसेन उस बनके जन्तुओंको घबराते हुए, उस बनमें घुस गये। महाबलवान भीमसेन वृक्षोंको ताड़ते हुए इस प्रकार चले, जैसे मतवाला हाथी चलता है। उनके चलनेसे ताड़के समान अनेक केलेके वृक्ष टूट टूट कर गिरने लगे। नृसिंहके समान अभिमानी महातेजस्वी बली भीमसेन वेगसे उन सब वृक्षोंको इधर उधर फेंकने और घोर शब्द करने लगे। अनन्तर बड़े बड़े जङ्गली जन्तु उस बनसे निकल कर भागने लगे। भैंसे, हरिन, बन्दर, और सिंह वहांसे भाग भाग कर तालाबोंमें घुसने लगे। उन सबके और भीमसेनके घोर शब्दसे बनके रहनेवाले हरिन और पक्षी व्याकुल हो गये। उस हरिन और पक्षियोंके शब्दको सुनकर जलमें रहनेवाले अनेक पक्षी भींगे पंखोंसे

उड़ने लगी। भरतकुलसिंह भीम उन जलके पक्षियोंको देख उनहीके पीछे चले, और थोड़ी-दूर जाकर एक सुन्दर और बहुत बड़े तालाव पर पहुंचे। उस तालावके चारों ओर सोनेके रङ्गवाले केलेके वृक्ष लगे थे; वे जब वायुसे हिलते थे, तब ऐसा जान पड़ता था, मानों ये सब इस तालावके पंखे हैं, और इसकी सेवा करते हैं। महाबलवान भीमसेन इस अनेक कमलभरे तड़ागको शीघ्रही पार होकर जंजीररहित मतवाले हाथीके समान क्रीड़ा करने लगे। महातेजस्वी भीम कुछ देर उस तालावमें क्रीड़ा करके फिर वेगसे अनेक वृक्षों-से भरे हुए व.की ओर चले। अगाड़ी जाकर बहुत बलसे अपने शंखको बजाया और उस शङ्ख और भीमसेनके घोर शब्द तथा तालकी ध्वनिसे पर्व्वतकी गुफा गुञ्जार हो उठी। उस वज्रके समान घोर शब्द सुनकर पर्व्वतकी गुफाओं में सोये हुए सिंह उठे और घोर शब्द करने लगे। हे जन्मेजय! सिंहोंके शब्दको सुनकर हाथी डरसे व्याकुल होगये, और शब्द करने लगे। इन शब्दोंसे पर्व्वत पूरित होगया। उस हाथियोंके शब्दको सुनकर और अपने भाई भीमसेनको आता जान, महाकपीश्वर हनुमानने विचारा, कि भीम स्वर्गको न चले जायं, इसलिये स्वर्गके मार्गको अपनी पूंछसे रोककर बैठ रहे। केलेके वृक्षोंसे पूरित मार्गको अपने भाईकी रक्षाके निमित्त रोका और आपभी वहीं बैठ कर विचार करने लगे, कि भीम इस ओर न आवें और यदि आवें भी तो शाप अथवा धर्षणा प्राप्त हों। ऐसा विचारकर महाबाहु हनुमानने जमुहाई ली, और उसी केलेके वनमें सो रहे। हनुमानकी जमुहाईका ऐसा शब्द हुआ, जैसे कहीं बिजुली गिरती है। पश्चात् उन्होंने वज्रके समान अपनी पूंछको फटकारा। उस पूंछके शब्दसे पर्व्वतकी गुफाओंसे वज्रके समान घोर शब्दसे, पर्व्वत हिलने लगी, और अनेक शिखर टूट टूट कर पृथ्वी पर गिरने लगी। उस पूंछके शब्दसे मतवाले हाथियोंका शब्द मन्द होगया। यह घोर शब्द समस्तवन और पर्व्वतोंमें फैल गया। उसको सुनतेही भीमसेन के सब रोवें खड़े होगये और उसको ढूंढ़नेको प्रसन्नचित्त भीमसेन उस केलेके वनमें घूमने लगे। अनन्तर महाबाहु भीमसेनने उस बनके बीचमें एक भारी शिलापर सोते हुए वानरराज हनुमानको देखा। उनका तेज, रङ्ग, शब्द और चञ्चलता बिजलीके समान थी; वे कन्धेके ऊपर सिरधरे सोते थे; उनके सिरके बाल बहुत छोटे छोटे थे; कन्धा और शरीर अत्यन्त मोटा होनेके कारण कमर बहुत पतली थी; बड़े बड़े रोवोंसे भरी हुई पंछ जो उनके सिर से ऊंची खड़ी थी, वह ध्वजाके समान जान पड़ती थी; उनके ओठ बहुत पतले तथा जिह्वा और मुखका रङ्ग लाल था; भौंह चलायमान दांत और दाढ़ निकले हुए और अगाड़ीसे तेज तथा मुखके भीतरके सफेद दांतोंसे उनका मुख किरण सहित चन्द्रमाके समान बिराजमान था; बालों सहित गला ऐसा दिखाई देता था मानो फूला हुआ अशोक वृक्ष है। उस सोनेके कदली वनमें महातेजस्वी हनुमान अपने तेजसे प्रकाशमान होते हुए, ज्वालाके सहित अग्निके समान विराजमान थे। वह पिङ्गल वर्णवाले नेत्रोंसे शत्रुनाशन भीमको ओर देख रहे थे। उस महाघोर बनमें बुद्धिमान महाबाहु भीम-सेनने भारी शरीरवाले बानरोंमें श्रेष्ठ हनुमान-को स्वर्गका मार्ग रोके हुए हिमाचलके समान देखा। उनको देख महाबलवान भीमसेन भय-रहित होकर उनके समीप पहुंचे और वज्रके समान घोर शब्दसे गर्ज्जे। उस शब्दको सुन कर हरिन और पक्षी भयसे व्याकुल हो गये। महासाहसी हनुमानने भी अपने पिङ्गल वर्णके नेत्रोंको कुछ खोलकर भीमकी ओर

देखा और निरादरके सहित कहने लगे। हनुमान बोले, मैं रोगसे पीड़ित होकर सुखसे सोरहा था, तुमने मुझे क्यों जगा दिया? तुम जाननेवाले हो; इसलिये तुम्हें जन्तुओं पर दया करना उचित है, तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न हुए प्राणी धर्म्मको नहीं जानते, परन्तु मनुष्य लोग बुद्धिमान होते हैं, इसी लिये वे लोग जन्तुओं पर दया करते हैं; तुम्हारे समान बुद्धिमान लोग मन वचन और कर्म्मसे निन्दित तथा धर्म्मनाशक कार्य्योंमें कैसे प्रवृत्त हो सकते हैं? जान पड़ता है, कि तुम धर्म्मको नहीं जानते हो, तुमने पण्डितों की सेवा नहीं की, तुम मूर्ख और मन्दबुद्धि हो, इसीसे वनके जन्तुओंको दुःख देते फिरते हो, कहो तुम कौन और किस लिये इस मनुष्यरहित घोर वनमें आये हो? हे पुरुषसिंह! कहो अब कहां जाना चाहते हो? यह पर्व्वत जानेके योग्य नहीं है, यह स्वर्गका मार्ग है; इसमें कोई पुरुष विना सिद्धगतिके नहीं जासकता है, हे समर्थवीर! हम कृपा करके तुमको आगे जानेसे रोकते हैं, तुम हमारे वचनको सुनो और धैर्य्य धरो, तुम यहांसे आगे किसी प्रकार नहीं जा सकते हो। हे पुरुषसिंह! हम तुमको स्वागत करते हैं, यह अमृतके समान फल और मूल खाओ, अब अगाड़ीको मत जाओ, नहीं तो वृथा ही प्राण नाश होजायंगे। हे नरश्रेष्ठ! हमारे इस हितकर वचनको तुम ग्रहण करो।

१४६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले बुद्धिमान वानरराज हनुमानके वचन सुनकर, शत्रुनाशन महावीर भीमसेन कहने लगे। भीम बोले तुम कौन और किस लिये बन्दरका वेष बनाये यहां बैठे हो? हम ब्राह्मणोंसे नीचे क्षत्रिय हैं, हम चन्द्रवंशी कौरवकुलमें कुन्तीके गर्भसे राजा पाण्डुके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए हैं, वायुपुत्र तथा भीमसेन नामसे प्रसिद्ध हैं। कुरुकुलवीर भीमके वचन सुन हंसकर हनुमान कहने लगे।

हनुमान बोले हम बन्दर हैं, तुमको इच्छानुसार मार्ग नहीं देंगे, तुम यहींसे लौट जाओ नहीं तो हमारा तुम्हारा विरोध हो जायगा।

भीमसेन बोले, हे वानर! चाहे विरोध हो वा मैत्री हो सो हम तुमसे कुछ नहीं पूछते हैं, तुम हमको मार्ग दो नहीं तो हमसे दुःख पाओगे।

हनुमानजी बोले, हम रोगसे अत्यन्त पीड़ित हैं, इसलिये नहीं उठ सकते, यदि तुमको अवश्य जाना है, हमको लांघकर चले जाओ।

भीमसेन बोले, निर्गुण परमात्मा सब प्राणोंके जाननेवाले परमेश्वर शरीरमें वास करते हैं, हम उनका निरादर करके तुमको लांघ नहीं सकते, यदि हम प्रमाणोंसे उस भूतभावन परमेश्वरको न जानते होते, तो तुमको और इस पर्व्वतको ऐसे लांघ जाते, जैसे हनुमानने समुद्रको लांघा था।

हनुमान बोले, हे नरश्रेष्ठ! हम आपसे पूछते हैं कि जिसने समुद्रको लांघा था, वह हनुमान कौन हैं? यदि आपको समय हो तो कहो।

भीमसेन बोले, हमारे भाई रामायनमें विख्यात श्रीमान् वानरोंके राजा बुद्धि और साहससे भरे हुए प्रशंसनीय गुणोंसेयुक्त हनुमान हमारे भाई हैं, उन्होंने रामकी स्त्री सीताके निमित्त चारसौ कोसके चौड़े समुद्रको एक छलाङ्गमें लांघा था; वे महातेजस्वी वानरराज हमारे भाई हैं; हम तेज, पराक्रम और बलमें उनहीके समान हैं, इसी लिये तुमको युद्धमें जीत सकते हैं; तुम हमारी आज्ञासे हट जाओ, हमको मार्ग दो या हमारा पराक्रम देखो। यदि तुम हमारी आज्ञाको न मानोगे तो हम तुमको अभी मारडालेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेनको बल और वीर्य्यसे अत्यन्त उन्मत्त देख हृदयमें हंसकर हनुमान कहने लगे, हे पापरहित! आप प्रसन्न हूजिये, हमको पूंछ उठानेकी शक्ति नहीं है, इस लिये मेरे ऊपर कृपा करके पूंछ हटाकर आप चले जाइये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बल अभिमानसे भरे हुए भीमसेनने हनुमानको हीनबल और हीन-पराक्रम जाना और अपने मनमें विचारा, इस चुद्रबलवाले, बन्दरकी पूंछ पकड़कर अभी यमके घरमें पहुंचा दूंगा। महाकपि हनुमानकी पूंछको हंसकर अभिमानके सहित बायें हाथसे उठाने लगे, परन्तु उसे हिला भी न सके। अनन्तर महाबलवान भीमसेनने दोनों हाथोंसे इन्द्रायुधके समान पूंछको उठाना चाहा, परन्तु न उठा सके, बहुत बल करनेसे भीमसेनकी आंखें और मुंह फैल गये, भौंह फटने लगीं, परन्तु हनुमान की पूंछ न उठी। श्रीमान् भीमसेनने बहुत यत्न किया तौभी न उठा सके। तब लज्जासे नीचे मुंख करके हनुमानके पास खड़े होगये, और हाथ जोड़ प्रणाम कर कहने लगे, कि हे कपिशार्दूल! आप प्रसन्न होइये, हमारी कुबाणियोंको चमा कीजिये, यदि हमसे छिपाने योग्य नहो और हम सुनने योग्य हों; तो आप कहिये आप सिद्ध हैं? या देवता हैं? अथवा गन्धर्व्व हैं? यद्दा गुह्यक हैं? आपने यह बानरका रूप क्यों धारण किया है? हे पापरहित! हम शिष्यके समान आपके शरणागत हैं।

श्रीहनुमानजी बोले, हे शत्रुनाशन! हमारे जाननेको जो आप इच्छा करते हैं, सो हम सब कहते हैं, आप सुनिये। हे कमलनयन! हम केशरीबानरकी स्त्रीके गर्भसे जगतके आयु वायुके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए हैं, हमारा नाम हनुमान बानर है, सूर्य्यके पुत्र सुग्रीव और इन्द्रके पुत्र वालि थे,वे दोनों सब बानरोंके राजा थे,बानरोंके यूथपाल इन दोनोंकी और मेरी सेवा करते थे, हे शत्रुनाशन! ये सब महा पराक्रमी थे, हमारा और सुग्रीवका ऐसा प्रेम था जैसा अग्नि और वायुका है; राजा वालि किसी कारणसे सुग्रीवसे अप्रसन्न होगये, तब सुग्रीवने बहुत दिनतक मेरे सहित ऋष्यमूक पर्व्वत पर निवास किया, उसी समय विष्णुके अवतार दशरथके पुत्र महावीर महापराक्रमी रामचन्द्र पृथ्वीमें घूम रहे थे। धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ राम अपने पिताका प्रिय काम करनेसे इच्छासे स्त्री, भाई और धनुषके सहित दण्डकारण्यमें रहते थे; जनस्थानसे उनकी स्त्रीको छल और बलसे राचसराज दुरात्मा बलवान रावण चुरा कर ले गया। हे पापरहित! उस समय सुवर्ण और रत्नोंके हरिणका रूप बना कर मारीचने पुरुष-सिंह रामको छल लिया था।

१४७ अध्याय समाप्त।

श्रीहनुमानजी बोले, जब रामकी स्त्री चुराई गई, तब वे उसको ढूंढ़ने हुए ऋष्यमूक पर पहुंचे, वहां एक शिखर पर बैठे हुए बानरसिंह सुग्रीवको देखा, अनन्तर महात्मा रघुवंशीराम और सुग्रीवका प्रेम होगया, उन्होंने वालिको मारकर सुग्रीवको राज्य दिया। सुग्रीवने राजा होकर सैकड़ों सहस्रों बानर सीताके ढूंढ़नेको भेजा, हे महाबाहो! हे पुरुषसिंह! मैं भी उसी समय करोड़ों बानरोंके सहित सीताके ढूढ़नेको दक्षिणकी ओर गया, तब महात्मा सम्पाति नामक वृद्ध गिद्धने कहा कि सीता लङ्कामें है, तब मैं उत्तम कार्य्य करनेवाले रामचन्द्रका कार्य्य करनेको सौ योजनके चौड़े समुद्रको लांघ गया। हे भरतकुलश्रेष्ठ! तब मैंने अपने पराक्रमसे मकरोंके स्थान समुद्रको पार होकर देवतोंकी पुत्रीके समान जनकराज पुत्री सीताको लङ्कामें देखा। मैं रामकी प्यारी विदेहराज-नन्दिनी दिव्य रूपवाली सीता से

मिल कर अटारी महल और फाटकोंके सहित लङ्काको जलाकर और वहां रामका नाम सुनाकर पुनः लौट आया। कमलनेत्र रामने मेरे बचन पर विश्वास करके अत्यन्त बुद्धिसे समुद्रका पुल बांधा और करोड़ों बानरोंको संग लेकर समुद्र को पार गये, फिर अपने पराक्रमसे सब राक्षसोंका नाशकर युद्धमें लोकोंके दुःख देनेवाले राक्षसोंके राजा रावणको भाई, पुत्र और बान्धवोंके सहित मार डाला, फिर लङ्कामें राक्षसराज बिभीषणको राजा बनाया, बिभीषण धार्म्मिक भक्त और अपने दासोंके ऊपर कृपा करनेवाले थे। तब रामने नष्ट वेदकी श्रुतिके समान अपनी स्त्रीको प्राप्त किया। अनन्तर महायशस्वी राम अपनी पतिव्रता स्त्रीके सहित शीघ्रतासे अयोध्यापुरीमें पहुंचे, शत्रुओंसे जीतनेको अयोग्य अयोध्यामें रघुनन्दनने निवास किया, जिस दिन कमलनेत्र राजोंमें श्रेष्ठ महाराज रामचन्द्र राजगद्दी पर बैठे, उसी दिन मैंने उनसे यह वरदान मांगा था, कि हे शत्रुनाशन राम! जब तक आपकी यह कथा पृथ्वीमें रहै तभी तक मैंभी जीता रहूं, तब उन्होंने कहा कि ऐसा ही हो। हे शत्रुनाशन भीम! तबसे मुझे सीताकी कृपासे सब सुखकी वस्तु यहीं प्राप्त हो जाती हैं। राम ग्यारह सहस्र वर्ष राज्य करके स्वर्गको चले गये। हे पापरहित! तबहीसे अप्सरा और गन्धर्व्व रामके चरित्रको गाकर मुझे प्रसन्न किया करते हैं, हे कुरुनन्दन! इस मार्गमें कोई मनुष्य नहीं जा सकता है, इसी लिये तुम्हारे निमित्त मैंने रोका है। हे भारत! मैंने विचारा कि यह देवतोंका मार्ग है, इसमें कोई मनुष्य नहीं जासकता है, तुम्हें कोई दुःख न दे, तुम जिस लिये आये हो वह तालाव यही है।

१४८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, प्रतापवान महाबाहु भीमसेनने हनुमानके बचन सुन कर उनको प्रीतिके सहित प्रणाम किया और प्रसन्न चित्त हो मीठे बचनसे ऐसा कहने लगे, जगतमें हमारे समान धन्य पुरुष कोई नहीं है, क्योंकि हमने आपका दर्शन किया, आपने जो हमको दर्शन दिया, सो बहुत कृपा करी, हे बीर! हम एक इच्छा और रखते हैं, आपने जिस समय जल जन्तुओंके स्थान समुद्रको लांघा था, उस समय जो अनुपम रूप धारण किया था, वही हम देखता चाहते हैं, उसके देखने से हम बहुत प्रसन्न होंगे, और आपके बचनका विश्वासभी करेंगे।

भीमसेनके वचन सुन तेजस्वी हनुमान हंस कर कहने लगे, उस रूपको देखनेमें तुम अथवा और कोई पुरुष समर्थ नहीं है, क्योंकि वह समय और वह अवस्था दूसरी थी। वह सब अब नहीं है, सत्ययुगमें त्रेतामें और तथा द्वापरमें औरही हो जाता है। यह समय नाश होनेका है, अब हमारा रूप वैसा नहीं है। पृथ्वी, नदी, वृक्ष, पर्व्वत, सिद्ध देवता और ऋषि लोग युग युगमें समयके अनुसार बर्त्ताव करते हैं, समयके अनुसारही बल और शरीर उत्पन्न और नाश होते हैं, हे कुरुनन्दन! उस बल और शरीरको धारण करके अब हम नहीं रहते हैं, इस युगके अनुसार बर्त्ताव करते हैं, क्योंकि काल बड़ा कठिन है, इससे तुम उस रूपके देखनेकी इच्छा मत करो।

भीम बोले, हे वीर! तुम हमसे युगोंकी संख्या और उनके अलग अलग धर्म्म, उस समयके पुरुषोंका बीर्य्य कार्य्य उत्पत्ति, बिनाश और सुख दुखोंका बर्णन करो।

हनुमान बोले, हे तात! सबसे पहले कृत युग (सतयुग) था, उसमें जो पुरुष उत्पन्न होते थे, वे सब कृतार्थही थे, इसीसे उसका नाम कृतयुग था, वह सब युगोंमें उत्तम था,

उसमें सब लोग सनातन धर्म्महीको करते थे, उस युगमें धार्मिक दुःखी नहीं होता था, और न किसीकी सन्तान मरती थी। देव, दानव, यक्ष गन्धर्व्व, राक्षस, और सर्प इनमें इतर विशेष भाव न था, अर्थात् ये सब ही सब लोगोंके साथ बात चीत करते थे। हे तात! उस सत्ययुगमें वेचना और लेनाभी नहीं था, न ऋग, यजु और सामवेदोंके वर्ण थे, न पुरुषोंकी कोई क्रिया थी और सङ्कल्प मात्रहो फल प्राप्त होते थे। शस्य फलादिके लिये मनुष्यसाध्य कर्षणादि की अपेक्षा नहीं करनी पड़ती थी। सन्न्यास धर्म्म था, उस सतयुगके आदिमें न कहीं रोग न इन्द्रियोंके बलकी हानि थी, न कोई कहीं रोता था, न किसीको अभिमान वा विकार था, न कोई किसीसे लड़ता था, न किसीसे लड़ाई झगड़ा होता था, न कोई किसीसे वैर करता था, न कोई आलसी और न कोई चुगली करनेवाला था, उस समय न भय, न दुःख न ईर्षा और न डाह था, इसीसे योगीश्वर लोग परम ज्ञानको प्राप्त करके मोक्षको पाते थे। उस समयमें सब जगतकी आत्मा नारायणका सफेद रङ्ग था, उस सतयुगमें ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र निज वर्णोचित लक्षणोंसे संयुक्त थे, सब लोग अपना अपना कर्म्म करते थे, सब लोग समान आश्रय, समान आचार, समान ज्ञान, समान कर्म्म और समान समान धर्म्मवाले थे, सब लोग एकही देवकी उपासना करते थे, अलग अलग धर्म्म होने परभी सब लोग एकही वेदके आश्रयसे एकही धर्म्मको करते थे. चारों आश्रमोंके उचित कर्म्म करके और समयके अनुसार धर्म्म करके सब लोग मोक्षको प्राप्त करते थे, सतयुगमें चारो वर्णोंका सनातन धर्म्म चारो चरणोंसे पृथ्वीमें था। हे तात यह सतयुग सतरज और तमोगुणसे रहित था, हमने सतयुगके धर्म्म कहे अब त्रेतायुगके सुनो।—

त्रेतायुगका मुख्य धर्म्म यज्ञ करना था, इसमें एक चरण धर्म्म कम हो गया था और विष्णुका रङ्ग लाल हो गया था, सब पुरुष क्रिया और धर्म्म करते थे इसहीसे सत्य वक्ता होते थे, उस युगमें अनेक प्रकारकी क्रिया, धर्म्म और यज्ञ होते थे, त्रेतामें सङ्कल्प सिद्ध होते थे, क्रिया और दानके फलभी ठीक ठीक होते थे, उस त्रेतायुगमें सब लोग अपने अपने धर्म्मकी क्रियाओंको करते थे, सब जप और दानमें निपुण थे सत्यसे कभीभी नहीं हटते थे।

द्वापर युगमें धर्म्मके दो चरण रह गये थे, और विष्णुका रङ्ग लाल होगया था। इसी द्वापर युगमें कोई द्विवेदी कोई एक वेदी, और कोई एक दमसे वेद शून्य हो गया था, इस प्रकार अलग अलग शास्त्र होनेसे सबकी क्रियाभी अलग अलग हो गई थी, सब लोग तप और दानमें प्रवृत्त हो गये थे, उस समय रजोगुण अधिक हो गया था, कोई एक वेदकोभी नहीं पढ़ सकता था, इसीसे वेदोंके अनेक टुकड़े हो गये, इस युगमें सतोगुणका नाश हो गया था, इसीसे कोई कोई सत्य बोलनेवाला रह गया था, सत्यनाश होनेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न हो गये, इसी युगमें प्रारब्ध वशसे अनेक काम आदि और दैवी उपद्रव उत्पन्न हो गये, उनसे अत्यन्त पीड़ित हो कर कोई पुरुष तपस्या, कोई स्वर्ग और काम सिद्ध होनेके लिये अनेक प्रकारके यज्ञोंको करने लगे। हे कुन्ती नन्दन! इस प्रकार द्वापर युगमें प्रजासे धर्म्म नष्ट हो गया। अब हम कलियुगके धर्म्म कहते हैं।

कलियुगमें धर्म्मका एकही चरण शेष है, इस युगमें विष्णुका रङ्ग काला हो गया है, आगे वेदकी क्रिया और धर्म्म सब नष्ट हो जायंगे। छः प्रकारकी इति (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूसे, टोड़ी, राजोंकी युद्ध आदि) होंगी। अनेक

प्रकारके रोग और क्रोधादिक दोष उपद्रव, मानसिक दुःख और भूख प्यास अधिक हो जायंगे। युग बदलनेसे धर्म्म बदलता है, धर्म्म बदलनेसे लोक बदल जाता है, लोकके नाश होनेसे जगत्के चलानेवाले नियमोंका नाश होजाता है, यह सब होनेसे प्रार्थना भी निष्फल हो जाती है, इस कलियुगको आये थोड़ाही समय बीता है, अभी यह युगके बदलनेका समय है। हे शत्रुनाशन! तुम जो हमारे उस रूपको देखनेकी इच्छा करते हो, सो ऐसे निरर्थक कामके करनेकी कौन पुरुष इच्छा करता है? हे महाबाहो! तुमने जो हमसे युगोंका नियम पूछा था, सो हमने तुमसे सब कहा, तुम्हारा कल्याण हो, तुम यहांसे चले जाओ।

१४९ अध्याय समाप्त।

———

भीमसेन बोले, हम आपके पहले रूपको बिना देखे किसी प्रकारसे नहीं जायंगे, यदि आप हमारे ऊपर कृपा करते हैं, तो उस रूपको हमें दिखलाइये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेनके ऐसे वचन सुनकर, बानरराज हनुमानने हंसकर उनको वह रूप जो उन्होंने समुद्र लांघते समय बनाया था दिखला दिया। अपने भाई भीमसेनकी प्रियकामनासे हनुमानने अपने शरीरका बहुत विस्तार किया, हनुमानका शरीर बहुत बढ़नेसे वह केलेका वन टूटने लगा और सब पर्व्वत कांपने लगे, उस समय अत्यन्त शरीर बढ़नेसे हनुमान दूसरे पर्व्वतके समान शोभित होने लगे, उस समय हनुमानके लालनेत्र, तेज दांत, टेढ़ी भौं और लम्बी पूंछसे दशो दिशा व्याप्त होगई, कुरुकुलनन्दन भीमसेनने अपने भाई हनुमानका ऐसा रूप देखकर बहुत आश्चर्य्य किया और बारबार प्रसन्न होने लगे भीमसेनने सूर्य्यके समान तेजस्वी सोनाके पहाड़के समान शरीरवाले और जलते हुए आकाशके समान हनुमानको देखके अपने नेत्रोंको बन्द कर लिया। तब भीमसेनको आश्चर्य्य दिलाते हुए हनुमान कहने लगे, हे पापरहित भीम! तुम हमारे इतने ही रूपको देख सकते हो, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम और भी अपने शरीरको बढ़ावें? हे भीम! शत्रुओंके युद्धमें तेजके सहित शरीर बढ़ता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे राजन्! जनमेजय! भीमसेन उस अद्भुत भयानक और बिन्ध्याचलके समान हनुमानके रूपको देखकर भ्रान्त होगये और शरीरके सब रोयें खड़े होगये तब भीमसेन प्रसन्नचित्तसे हाथ जोड़कर हनुमानसे कहने लगे हे महाबीर! हे नाथ! हमने आपका यह बड़ा भारी शरीर देखा, अब आप इसे फिर छोटा कर लीजिये क्योंकि मैं आपके इस प्रमाणरहित शरीरको देखनेमें समर्थ नहीं हूं, इसका तेज सूर्य्यके समान और विस्तार जीतनेमें अयोग्य सूर्य्य मैनाक पर्व्वतके तुल्य है, हे वीर! मेरे हृदयमें इस बातका बहुत आश्चर्य्य होता है कि आपके संग रामचन्द्र रावणके पास कैसे गये थे, क्योंकि आप अकेलेही अपने बाहुबलसे समस्त लंका को बाहन और बीरोंके सहित नाश कर सकते थे! हे वायुपुत्र! जगतमें कोई वस्तु ऐसी नहीं है जो आपको न मिल सके, अकेले आपहीसे लड़नेकी रावणकी शक्ति नहीं थी।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, बन्दरोंमें श्रेष्ठ हनुमान भीमके ऐसे बचन सुन गम्भीर और मोठी बानीसे बोले हे महाबाहो! तुम जो कहते हो सो सब ठीक है, हे भीम! हे भारत! वह नीच राक्षस रावण हमसे लड़नेमें समर्थ नहीं था; परन्तु यदि मैंही लोक कण्टक रावणको मार डालता तो रघुनन्दनकी कीर्त्तिका नाश हो जाता; इसीसे मैंने उसको छोड़ दिया था, बीर राम राक्षसोंमें नीच रावणको बान्धवोंके सहित मार कर सीताको

अपनी पुरीमें लाये और और अपनी कीर्त्तिको स्थापन किया। हे महाबुद्धिमान्! अब तुम चले जाओ, तुम अपने भाईकी सेवा करना तुम्हारा मार्गमें कल्याण होगा, वायु तुम्हारी रक्षा करे, हे पुरुषश्रेष्ठ! यह सौगन्धिक बनका मार्ग है, आगे जाकर यक्ष और राक्षसोंसे रक्षित कुवेरके बागीचोंको देखोगे। तुम वहां जाकर जल्दी अपने हाथसे फूल मत तोड़ना, क्योंकि पुरुषोंको उचित है कि देवतोंको विशेष करके माने, हे भरत कुलसिंह! देवता लोग बलि, होम, नमस्कार, मन्त्र और भक्तिसे प्रसन्न होते हैं, हे तात! साहस मत करो, अपने धर्म्मको पालो, अपने धर्म्ममें स्थित हो कर परम धर्म्मको जानते रहो और उसे प्राप्त करो, कोई पुरुष विना धर्म्मको जाने, और विना बूढ़ोंकी सेवा किये वृहस्पतिके तुल्य होने परभी धर्म्म ओर अर्थको नहीं पासकता। अधर्म्म जहां धर्म्मके नामसे प्रसिद्ध होताहै और धर्म्म जहां अधर्म्मके नामसे पुकारा जाता है उसको अच्छी तरह जान लेना चाहिये, मूर्ख लोग उसमें मोहित हो जाते हैं। आचारसे धर्म्म उत्पन्न होता है, धर्म्मसे वेद स्थित है, वेदसे यज्ञ और यज्ञोंसे देवता स्थित हैं, वेदोक्त विधिसे देवता लोग अपना निर्वाह करते हैं और बृहस्पति तथा शुक्रकी कही नीतिसे मनुष्य अपना निर्वाह करता है, राजसेवा व्योपार और उपदेश करनेको आजीविकासे द्विजाति लोग अपना निर्व्वाह करते हैं, वेद दण्डनीति और व्यापार इन तीन विद्याओंके जाननेवाले संसारमें अपनी आजीविका करते हैं, यदि वेद विद्या और व्यापार विद्या नष्ट हो जांय तो संसारमें कोई प्राणी न जीवे और जबनीति नाश हो जाय तो यह संसार मर्यादारहित हो जाय, वाणिज्य और धर्म्म यदि इस संसारमें न हो तो सब प्रजा-नाशको प्राप्त हो जाय, यही तीनों विद्या मिल कर धर्म्मको उत्पन्न करती हैं और धर्म्मसे प्रजा-स्थित है। द्विजातियोंका परम धर्म्म सत्य है; यज्ञ करना, वेद पढ़ना, और दान करना यह साधारण धर्म्म है। यज्ञ करना, वेद पढ़ाना यज्ञ कराना और दान लेना यह ब्राह्मणके विशेष धर्म्म हैं, प्रजापालन क्षत्रियका, व्यापारसे प्रजाका पालन करना वैश्यका और द्विजातिकी सेवा करना शूद्रोंका विशेष धर्म्म है, शूद्र लोगोंको मांगना, व्रत होमका करना तथा गुरु कुलमें रहके वेद पढ़ना मना है, हे कुन्तीपुत्र! तुम्हारा धर्म्म क्षत्रीय अर्थात प्रजाका पालन करना है, तुम जितेन्द्रिय होकर अपने धर्म्मको पूरा करो, वेदको जाननेवाले बुद्धिमान महात्मा इन्दोंसे सलाह करके प्रजापालन करना राजाका धर्म्म है, और बुरे व्यसनवाला राजा नष्ट होता है, बन्धन और कृपाको जब राजा प्रजामें फैलाता है तब संसारमें मर्यादा स्थित रहती है, इस कारणसे देशमें किलोंमें शत्रु और मित्रोंकी सेनाओंमें अपने आप्त दूत भेजके जानना चाहिये कि किसकी बढ़ती और किसकी घटती है। राजोंका उपाय, बुद्धि, मन्त्र, बल, कृपा, और क्रोध चतुरता यही कार्य्यको सिद्ध करनेवाले होते हैं। साम; दान, भेद, दण्ड और त्यागसे राजाको अपने सब कार्य्योंको सिद्ध करना चाहिये। राजाको उचित है कि कहीं अपना बिस्तार दिखलावे और कहीं छोटा बन जाय; हे भरतसत्तम! मन्त्रोहीके आधीन सब नीति हैं दूतभी मन्त्रके आधीन हैं इस वास्ते विद्यामानोंके साथ मन्त्र करना चाहिये, स्त्रियोंसे, बालकोंसे, मूर्खोंसे, लोभियोंसे, मन्त्र कभी नहीं करे, जिनमें उन्मादिके लक्षण पाये जाते हैं उनसे भी मन्त्र नहीं करना चाहिये, विद्वानोंसे समर्थोंसे सलाह, करे उनहींसे अपना काम करे, कोमल स्वभाववाले नीतिके जाननेवालोंसे राजकार्य्य करावे और मूर्खोंसे कोई काम न करावे, धर्म्मात्माओंको धर्म्म काममें, पण्डितोंको

धनके काममें, स्त्रियोंमें नपुन्सकोंको, खोटे कामोंमें खोटे आदमियोंको नियुक्त करे, अपने मनुष्योंसे अथवा दूसरे मनुष्योंसे कार्य्य बिगड़ने अथवा सुधरनेकी बुद्धि तथा शत्रुओंके बलाबल-को जान लेना चाहिये।—जिन मनुष्योंकी बुद्धि उत्तमहो उन पर राजाको कृपा करनी चाहिये और जो मर्य्यादाको तोड़नेवाले दुष्ट हों उनको बन्धनमें डालना चाहिये। जब राजा बन्धनमें और कृपा करनेमें प्रवृत होता है तब संसारमें यश स्थित रहता है। हे कुन्तीनन्दन! हमने यह कठिन राजधर्म्म तुमसे कहा अब सब धर्म्मोंको विचार कर अपने धर्म्मको धारण करो। तप, धर्म्म, इन्द्रिय निग्रह, और पूजन से ब्राह्मण लोग स्वर्गको जाते हैं, वैश्य लोग दान, अतिथि पूजा, क्रिया और धर्म्मसे स्वर्गको जाते हैं, चत्री लोग बल और प्रजाके पालनसे स्वर्गको जाते हैं, चत्री लोग दण्डके उचित विधानसे काम और क्रोध, द्वेषसे रहित होकर पण्डितोंको गति को प्राप्त होते हैं।

१५० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब हनुमानने अपनी इच्छानुसार अपने उस बड़े भारी शरीरको घटा लिया, फिर दोनो हाथ फैलाकर भीमसे मिले। हे भारत! अपने भाई हनुमानसे मिलतेही भीमसेनकी सब थकाई दूर हो गई और बलवान भीमसेनने जाना कि मुझे बहुत बल बढ़ गया और मेरे समान कोई उत्तम नहीं है, अनन्तर हनुमानने आंखोंमें आंसू भरकर भीमसे प्रेमके सहित गदगद वाक्य कहा कि हे वीर! तुम अपने घरको चले जाओ, हमको किसी बातोंमें स्मरण किया करना, हे पुरुषश्रेष्ठ! हे महाबल! चाहे कोई कुवेरके घरसे भी लौट कर आता हो उससे भी हमारा स्थान न बताना, देश और कालके अनुसार यहां देव गन्धर्व्वोंके आनेका समय हुआ है, तुमको देखने और श्रीराम-चन्द्रके स्मरण करनेसे मेरे नेत्र सुफल होते हैं जगत्के हृदयको सुख देनेवाले, सीता मुख कमलके सूर्य्य, रावण अन्ध-कारके दिवाकर, श्रीरामरूपी विष्णुका स्मरण करनेसे हमको आनन्द होता है, हे कुन्तीनन्दन! हमारा दर्शन करनेसे तुमको अनन्त फल होगा, हे भारत! तुम हमको अपना भाई समझ कर वरदान मांगो, हे महा-बल! यदि तुम कहो तो हम हस्तिनापुर जाकर उन चुद्र धृतराष्ट्रके पुत्रोंको नाश कर दें, यदि तुम कहो तो हम एक शिलासे उस सब नगरको चूर कर दें?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे राजन् जनमेजय! भीमसेनने महात्मा हनुमानके वचन सुन, प्रसन्न होकर कहा, हे महाबाहो! हे बानरराज! आपने हमारे निमित्त जो कुछ कहा सो सब किया हुआ समझिये, आपका कल्याण हो आप मुझ पर कृपा कीजिये। जिन पाण्डवोंके आप नाथ हैं वह सब सनाथ हो हैं, हे तेजस्विन्! आपहोके तेजसे हम शत्रुओंको जीतेंगे! भीमसेनके ऐसे कहने पर हनुमान भाईपन और मित्र भावसे भीमसेनसे बोले कि मैं तुम्हारा प्रिय कार्य्य करूंगा तुम्हारे शत्रुओंकी सब सेनामें घस कर जब तुम सिंहके समान गर्जन करोगे तब मैं अपनी गर्जनसे तुम्हारी गर्जनको बढ़ा दूंगा, अर्ज्जुनकी ध्वजा पर बैठकर भयानक रूपसे गरजंगा, जिससे तुमलोग शत्रुओंके प्राण सुखसे नाश कर सको, मैं ऐसे यत्नहो करूंगा। इस प्रकारसे हनुमान पाण्डुपुत्र भीमसेनसे बात करके भीमसेनको राह बताके वहीं अन्तर्द्धान होगये।

१५१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! वानरोत्तम हनुमानके चले जाने पर बलवानोंमें श्रेष्ठ भीमसेन हनुमानके बतलाये मार्गसे गन्धमादन पर्व्वत पर इधर उधर घूमने लगे, हनुमानके उस शरीर और अनुपम शोभा और दशरथ पुत्र श्रीरामचन्द्रके प्रभाव और महात्माको स्मरण करते हुए भीमसेन वहांसे चले। भीमसेन मनोहर वन, मार्ग, खिले फूलवाले वृक्ष, तलाव, नदी और भांति भांतिके फूलोंसे भरे छोटे बन और हाथियोंके झुण्ड वरसाऊ मेघोंके समान देखते हुए चले, चंचल अंगवाले हरिनोंसे शोभायमान वनकी मार्गमें देखते हुए शीघ्रताके साथ भीमसेन चले। बनके भैंसे, बाराह, और शार्दूलोंसे भरे वनको निडर भावके साथ देखते हुए चले, भांति भांतिके फलोंकी सुगन्धि और तांबेके रंगवाले कोमल पत्तोंसे पूर्ण वृक्ष हवासे कांपते हुए ऐसे जान पड़ते थे मानो भीमसेनसे क्षमा मांगते हों। पद्मोंके संपट लगे हुए जिन पर भौरे गूंजते हैं ऐसे मालूम होते थे मानो भीमसेनको कोई भेट देता है, मार्गमें पर्व्वतोंकी शोभा और भांति भांतिकी धातु तथा फूलोंकी शोभाको देखते हुए द्रौपदीके बचनको स्मरण करते हुए भीमसेन बहुत शीघ्र चले, जाते जाते कुछ दिनके पश्चात ऐसे बनमें पहुंचे जहां हरिन बहुत सुखसे विचरते थे। उस बनमें एक नदी ऐसी देखी जिसमें सोनेके रङ्गके कमल खिले थे, उस नदीके किनारे पर हंस सारस और चकवे मनोहर शब्द कर रहे थे। वह नदी ऐसी जान पड़ती थी कि मानो पर्व्वतकी माला है। उस नदीमें महाबली भीमने चित्तको प्रसन्न करनेवाले सूर्य्यके समान तेजवाले कमलोंका समूह देखा, उसको देखकर अपनी मनसाको सफल हुई जान मनसे उस द्रौपदीका ध्यान किया जो बनबाससे बहुत दुःखी हुई थी।

१५२ अध्याय समाप्त!

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेनने उस मनोहर कमलनी वाले तलावके पास जाकर देखा, कि राक्षस उसकी चारों ओरसे रक्षा कर रहे हैं। कुवेरके स्थानके पास पर्व्वतके झरनोंसे उत्पन्न हुई, मनोहर और घनी छायावाले वृक्षोंसे घिरी हुई, हरे हरे कमलोंसे पूर्ण, सुवर्ण रंगके कमल जिसमें खिले थे, अनेक भांतिके पक्षी जिसमें शब्द कर रहे थे, जिसके घाट बड़े सुन्दर थे, जिसमें कीचका नाम न था, जिसमें स्वच्छ जल भरा था, पर्व्वतकी कन्दराओंसे उत्पन्न हुई अद्भुत रूप वाली नदी पर जाकरके अमृत समान शीतल जल कुन्तीपुत्र पाण्डवने देखा और पीया, उस मनोहर दिव्य सुगन्धवाले ऐसे कमलोंसे भरी जिनकी डण्डी लहसुनियेके रंगके समान थी, जिसके समीप हंस और सारस आदिक बोल रहे थे, और जिनसे निर्म्मल केशर झड़ती थीं यह पोखर महात्मा कुवेरकी क्रीड़ाका स्थान था। इस पर गन्धर्व्व और अप्सरांके सहित देवतालोग बिहार करते थे, दिव्य ऋषि यक्ष किम्पुरुष और राक्षस इस पोखरकी रक्षा करते थे, बिश्रवाके पुत्र कुवेरसे यह पोखर रक्षित थी, महाबली कुन्तीपुत्र भीमसेन वह देख कर बहुत प्रसन्न हुए। उस पोखरकी क्रोधवश नाम राक्षस कुवेरकी आज्ञासे रक्षा करते थे, यह सहस्रों राक्षस विचित्र राक्षस बिचित्र शस्त्र और वस्त्र पहिने हुए वहां खड़े थे, वे लोग कुन्तीपुत्र भीमसेनको मृगचर्म्म और सुवर्णके आभूषण पहिने, शस्त्र लिये, निडर देखके आपसमें कहने लगे, कि यह पुरुषसिंह शस्त्र लिये और मृगचर्म्म ओढ़े जो यहां आया है, सो क्या करना चाहता है? यह जानना चाहिये। तब वह सब राक्षस महाभुज तेजस्वी भीमके पास जाकर पूछने लगे कि तुम मुनियोंका वेष धारण किये और शस्त्र लिये जो यहां

आये हो सो तुम्हारे क्या प्रयोजन हैं? हमसे कहो।

१५३ अध्याय समाप्त।

भीमसेन बोले,हे राचसो! मैं राजा पाण्डुका पुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिरका भाई भीमसेन हूं,मैं भाइयोंके सहित इस वदरिकाश्रम पर आया हूं इस वदरिकाश्रममें पाञ्चालराजपुत्री द्रौपदीने वायसे फेंका हुआ एक कमल देखकर वैसेही और कमलोंकी चाहा, हे राचसो! मैं उनहीं मनोहर अंगवाली धर्म्मपत्नी द्रौपदीके चाहे हुए कमलोंको लेने आया हूं। राचस बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ! यह कुवेरकी क्रीड़ाका स्थान है यहां मरण धर्म्मवाले मनुष्योंको विहार करनेकी आज्ञा नहीं है, हे वृकोदर! यहां पर देवर्षि, यच और देवता लोग यचराज कुवेरकी आज्ञा पाकर जल पीते और विहार करते हैं, हे पाण्डव! गन्धर्व्व लोग और अप्सरा यहां पर विहार कर सकती हैं, यदि कोई अन्यायसे महाराज कुवेरका अनादर करके विहार करनेकी इच्छा करता है, तो वह नष्ट कर दिया जाता है। उस कुवेरका अनादर करके तुम कमल लेना चाहते हो, तब कैसे कहते हो कि हम धर्म्मराज युधिष्ठिरके भाई हैं, पहले कुवेरकी आज्ञा लेलो, तब इस पोखर पर विहार करना, यदि ऐसा न करोगे, तो इस पोखरको कुछ नहीं देख सकोगे। भीमसेन बोले, हे राचसो! मैं धनेश्वर कुवेरको पास तो नहीं देखता हूं, यदि उन महाराजको देखूं भी तो उनसे कुछ मांगनेकी इच्छा नहीं करता हूं, यह सनातन धर्म्म है, कि राजा लोग किसीसे कुछ मांगते नहीं हैं, मैं चत्रियधर्म्मको छोड़ना नहीं चाहता हूं। यह पोखर पर्व्वतके झरनोंसे बनी है, यह पोखर जैसी महाराज कुवेरकी है, वैसेही सब प्राणियोंकी है; ऐसे पदार्थोंको कोई किसीसे मांगता नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, ऐसे सब राचसोंसे कहकर महाबली और महाक्रोधी भीमसेन उस पोखरमें घस गये,तब चारो तरफसे राचसोने बचन द्वारा ऐसा मत करो कहा, प्रतापवान् भीमसेनसे ऐसा कहते हुए राचसोंको क्रोध आगया,महा पराक्रमी और महा-तेजस्वी भीमसेनने उन सब राचसोंको चुद्र समझ कर उस तालावमें स्नान किया। परन्तु राचस लोग उनको रोकने लगे, वे लोग क्रोध करके चिल्लाने लगे, कि इसको पकड़ो, बांधो, काटो, खा जाओ और पकालो। ऐसा कह नेत्रोंको फैला कर और शस्त्रोंको लेलेकर भीमसेनकी ओर दौड़े भीमसेनभी सोनेसे चित्रित यमदण्डके समान भारी गदाको लेकर वेगसे उनकी ओर दौड़े और कहने लगे, खड़े रहो, खड़े रहो। तीच्ण पराक्रमी राचस लोगभी भीमसेनको मारनेकी इच्छासे गदा तोमर और पट्टिश आदि शस्त्रोंको लेकर वेगसे भीमसेनकी ओर दौड़े, जो भीम वायुके वीर्य्यसे कुन्तीके गर्भमें उत्पन्न हुए थे, वह वेगवान शत्रुओंसे अजेय थे, वही महात्मा उन राचसोंके सब बाणोंको काटने लगे, भीमसेनने अपने बाणोंसे उस पोखरके पास सैकड़ों राचसोंको मार डाला। वीर राचसोंने जब उनके विद्यावल वाहुवल और वीर्य्यको देखा, तो असमर्थ होकर भागने लगे, बहुतसे राचस उनको मारनेकी इच्छासे संज्ञाहीन होकर आकाशको उड़ने लगे, अनेक क्रोधसे व्याकुल होकर कैलाशके शिखरोंमें छिपने लगे। शत्रुओंके जीतनेवाले भीमसेनने इन्द्रके समान उन राचसोंको जीतकर उस पोखरमें जाके अपने लिये कमल तोड़ लिया, उस पोखरके अमृत समान जलको पीनेसे भीमसेनका बल और वीर्य्य उत्तम हो गया, फिर उन्होंने उत्तम सुगन्धिवाले अनेक कमलोंको तोड़ लिया। राचस लोगोंने भीमके वल और भयसे व्याकुल होकर कुवेरके

पास जा उनके बल और वीर्य्यका वर्णन किया। कुबेर उनके वचन सुन हंसकर कहने लगे, हम जानते हैं, कि भीमसेन द्रौपदीके लिये कमल लेनेको आया है। राक्षस लोग कुबेरकी आज्ञा लेकर फिर उसी पोखर पर आये। उन्होंने कुरुकुलश्रेष्ठ भीमसेनको उसी पोखरमें इच्छानुसार विहार करते देखो।

१५४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे जनमेजय! तब भीमने बहुत श्रेष्ठ मलसे रहित अनेक कमलोंको ले लिया, उस समय बड़ा श्रेष्ठ वायु बहुत वेगसे चलने लगा, जिससे भीम शीघ्रही नीचेको आसके, उस समय युद्धके सगुन होने लगे, बहुत भय देनेवाली बिजली शब्दके सहित आकाशसे गिरी, सूर्य्य अन्धकार छिपनेके कारण तेजसे रहित हो गये; समस्त जगतमें ऐसा अन्धकार छाया, कि किसीको कुछ न दीखने लगा। जहां भीमसेन अपने प्राक्रमसे स्थिर थे, वहां एक घोर शब्द हुआ, समस्त पृथ्वी चलायमान होगई, आकाशसे धूल बर्षने लगी, सब दिशा लाल होगई, पक्षी और हरिन गधेके समान शब्द करने लगे और भी अनेक घोर उत्पात होने लगे। इन सबको देखकर कहनेवालोंमें श्रेष्ठ धर्म्मराज युधिष्ठिर कहने लगे, कि न जाने हमसे कौन युद्ध करेगा। हे महायुद्ध करनेवाले नकुल सहदेव! तुम्हारा कल्याण हो, युद्ध करनेको तय्यार हो जाओ, हम इन सब लक्षणोंको देखकर जानते हैं, कि अब युद्ध करनेका समय आगया। महाराजने ऐसा कह कर चारों ओर देखा, तो भीमको न पाया, तब शत्रुनाशन महाराजने नकुल, सहदेव और द्रौपदीसे पूछा, कि हे द्रौपदी! युद्धमें घोर कर्म्म करनेवाले महा पराक्रमी हमारे भाई भीमसेन कहां हैं और क्या करते हैं? क्या उस उत्साही वीरने कोई युद्ध आरम्भ किया है? हमको यह युद्धके उत्पात अकस्मात् दिखलाई देने लगे हैं, इससे घोर भय होनेकी शंका है। महाराजके ऐसे वचन सुन उत्तम हंसनेवाली मनस्विनी, महाराजकी पटरानी द्रौपदी कहने लगी।

द्रौपदी बोली, हे महाराज! वह जो फूल वायुसे उड़ कर आया था, मैंने उसको देखकर भीमसेनको प्रसन्न करके कहा, कि हे वीर! यदि आप ऐसे कमल और कहीं देखें, तो उन सबको शीघ्र ले आइये तो, मैं बहुत प्रसन्न होऊंगी। महाबाहु पाण्डुनन्दन भीम, मुझे प्रसन्न करनेकी इच्छासे उत्तर और पूर्व्व कोनेकी ओर उन्ही फूलोंको लेने गये हैं। द्रौपदीके वचन सुन महाराजने नकुल और सहदेवसे कहा, कि जिस मार्गसे भीमसेन गये हों, हम सबकोभी उसी मार्गसे शीघ्र चलना चाहिये, सब राक्षस लोग दुर्ब्बल और थके हुए ब्राह्मणोंको ले चलें। हे घटोत्कच! हे देव तुल्य! तुम द्रौपदीको ले चलो, हमको निश्चय होता है, कि भीमसेन बहुत दूर चले गये, क्योंकि वह वायुके समान शीघ्र चल सकते हैं। वह गरुड़के समान शीघ्र चलनेवाले हैं, वे चाहें, तो पृथ्वीको लांघें और चाहें तो आकाशको उड़ जायं और अपनी इच्छानुसार जितना चाहें कूद सक्ते हैं। हे राक्षसो! हम तुम लोगोंके पराक्रमसे उनको ढूंढ़ने जाया चाहते हैं। भीमसेनने कभी पहले वेदपाठी सिद्धोंका अपराध नहीं किया है। हे जन्मेजय! उन मार्ग जाननेवाले राक्षसोंने प्रसन्नचित्तसे महाराजकी आज्ञाको स्वीकार कर, लोमश मुनिके सहित पाण्डव और अनेक ब्राह्मणोंको अपने ऊपर चढ़ाके कुवेरकी पोखरकी ओर गमन किया। हे राजन्! जब सबने शीघ्रता सहित जाकर उस मनोहर वन, सुगन्धिवाले कमलोंसे भरी हुई पोखर और उसके तटपर बैठे हुए मनस्वी महात्मा भीमसेनको देखा और

उनके पास जो विशाल नेत्रवाले यक्षलोग मरे पड़े थे, उनकोभी देखा। उन मरे हुए यक्षोंके सिर हाथ और जङ्घा टूट गई थीं और महात्मा भीमसेनभी उन्हींके पास बैठे थे। भीम क्रोधसे अपने नेत्रोंको खोलते और बन्द करते, ओठोंको चबाते और दोनों हाथोंसे गदाको उठाये हुए बैठे थे। उस समय वह प्रलयकालके यमराजके समान दीखते थे। महाराज युधिष्ठिर उनको देख कर लपट गये और मीठो वाणीसे बोले, कि हे कुन्तीनन्दन! यह तुमने क्या किया? तुम्हारा कल्याण हो ऐसा अयोग्य साहस देवतोंको प्रिय नहीं है। हे वृकोदर! यदि तुम हमारी प्रीति चाहते हो, तो ऐसा फिर न करना; अब उन फूलोंको लेकर इस कामको समाप्त करो। उसी समय पोखरसे अनेक शस्त्रधारी देवतोंके समान रूपवाले उस बनकी रक्षा करनेवाले लोग प्रकट हुए। हे जन्मेजय! वे सब धर्म्मराज युधिष्ठिर महर्षि लोमश, नकुल, सहदेव तथा अन्य उत्तम ब्राह्मणोंको देखकर विनय पूर्व्वक प्रणाम करने लगे, महाराजने उनको बहुत शान्त किया, तब वे सब प्रसन्नता पूर्व्वक वहां बैठे। कुरुकुलश्रेष्ठ पाण्डवलोग कुवेरकी सम्मतिसे अर्ज्जुनका मार्ग देखते हुए थोड़े दिन उस गन्धमादन पर्व्वत पर रहे।

सौगन्धिकाहार प्रकरण और १५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, एक दिन इस स्थानमें बसते हुए महाराज युधिष्ठिरने द्रौपदी, अपने भाई, और ब्राह्मणोंसे ऐसा कहा कि हमलोगोंने पवित्र और सुखदायक तीर्थ तथा मनको प्रसन्न करनेवाले बनोंको देखा, इन तीर्थोंको पहिले देवता और महात्मा मुनियोंने स्थापन किया था, इन सबको ब्राह्मणलोग नियमानुसार पूजते हैं। हमने पहले ऋषियोंके चरित्र और उनके कर्म्म तथा राजऋषियोंकी अनेक प्रकारकी सुन्दर सुन्दर कथा उनके कल्याणदायक आश्रमोंमें सुनी। हमने ब्राह्मणोंके सहित सब तीर्थोंमें स्नान कर फल और जलसे सब देवतोंकी पूजा की, देश और समयमें मिलनेवाले मूल और फलोंसे पितरोंके तर्पणभी किया। गङ्गाद्वारसे चलकर अनेक सुन्दर पर्व्वतों को देखते हुए अनेक पक्षियोंसे शोभित हिमाचल पर्व्वत को देखा; इला, सरस्वती, सिन्धु, यमुना और नर्म्मदादि अनेक रमणीय नदियोमें ब्राह्मणोंके सहित स्नान किया। रमणीय पर्व्वत, सब तालाव तथा पवित्र समुद्रमें महात्माओंके सहित स्नान किया। विशाल नरनारायणके आश्रमका दर्शन, सिद्ध ऋषि और देवतोंसे पूजित विधिपूर्व्वक पोखरको देखा है। ब्राह्मणो! हमको महात्मा लोमशने क्रमके अनुसार सब स्थानोंके दर्शन कराये, यह सिद्ध सेवित और पवित्र कुवेरका स्थान है। हे भीम! आगे चलने योग्य नहीं है, हे भीम! अब आगे कैसे चलोगे, इसका विचार करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समय राजोंके स्वामी महाराज युधिष्ठिर ऐसा कह रहे थे, उसी समय आकाश-वाणी हुई कि हे राजन्! इस कुवेरके स्थानसे आगे कोई नहीं जा सकता, इस लिये जिस मार्गसे आये हो उसीसे नर-नारायणके आश्रम, बदरी नामक प्रसिद्ध तीर्थको चले जाओ; हे कुन्तीनन्दन! वहांसे तुम बहुत फूल और फलोंसे रमणीय सिद्ध और चारणोंसे सेवित वृषपर्व्वाके आश्रमको देखोगे; हे कुन्तीनन्दन! वहांसे चलकर सुखपूर्व्वक आर्ष्टिषेणके आश्रममें रहना; तब कुवेरके स्थानको देखोगे। उसी समय पवित्र, दिव्य, गन्धवाली सुख स्पर्श वायुने फूलकी वर्षा की, उन सबने उस आकाशसे आई हुई दिव्य वाणीको सुनकर बहुत आश्चर्य किया। विशेष कर राजा, ब्राह्मण और ऋषियोंको बहुत आश्चर्य हुआ। उस परम आश्चर्य

भयो वाणीको सुन धौम्य मुनि बोले हे भारत! इसका कोई उत्तर देनेके योग्य नहीं है। महाराज उस सब वचनको स्वीकार कर भीमादि भाई, द्रौपदी और सब ब्राह्मणोंके सहित बदरिकाश्रमको लौट आये और वहां सुखसे रहने लगे।

नरनारायणाश्रम प्रत्यागमनप्रकरण और १५६ अध्याय समाप्त।

अथ जटासुर बध प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे राजन् जनमेजय! जब भीमसेनके पुत्र घटोत्कच तथा अन्य राक्षस चले गये और पाण्डव लोग ब्राह्मणोंके सहित अर्जुनका मार्ग देखते हुए विश्वास पूर्व्वक रहने लगे, तब एक दिन भीमसेनके बिना, इच्छानुसार घूमते हुए धर्म्मराज, नकुल, सहदेव और द्रौपदीको एक राक्षसने हर लिया। वह अपनेको मन्त्र और शास्त्रोंके जाननेवाला उत्तम ब्राह्मण कहकर पाण्डवोंके तूणीर और धनुषको तथा द्रौपदीको भी हरण करनेकी अभिलाषसे पाण्डवोंकी उपासना करता था। इस प्रकार उस दुष्टात्मा पापबुद्धि जटासुर नामक राक्षसने बहुत यत्न किया उसकी इच्छा थी कि समय पाकर मैं द्रौपदीको हर ले जाऊंगा, हे राजेन्द्र! महाराज युधिष्ठिरने उसको राखसे छिपे हुए अग्निके समान न पहिचाना और उसका पालन करते रहे। हे शत्रुनाशन! एक दिन जिस समय भीमसेन शिकार खेलने, घटोत्कच अपने दासोंके सहित इधर उधर घूमने और लोमशादिक तपोधन महर्षि लोग स्नान करने और फूल लेने चले गये, उसी समय वह राक्षस भयानक रूप बनाकर पाण्डवोंके पास आया। उसने शस्त्र द्रौपदी महाराज नकुल और सहदेवको लेकर वहांसे चल दिया, परन्तु पाण्डुनन्दन सहदेव बहुत यत्न करके उसके हाथसे अपनी कौशिक नाम तलवार छीनकर खड्ग घुमाते हुए निकल गये और बड़े वेगसे अपने खड्गको कोषसे निकाल कर दौड़े, अनन्तर जिधरको भीमसेन गये थे उधरहीको पुकारने लगे। महापराक्रमी सहदेव जिस समय भीमसेनको पुकारते थे, उसी समय महाराजने राक्षससे कहा कि रे मूर्ख! तेरा धर्म्म नष्ट हुआ जाता है और तू उसे नहीं देखता। किसी किसी स्थलमें मनुष्यंशियोंके बीच जो तिर्य्यक्-योनिवाले हैं वे और उनके सिवाय अन्य प्राणी भी तथा विशेष करके राक्षस लोग धर्म्ममें दृष्टि क्रिया करते हैं, राक्षस लोग धर्म्मके मूल स्वरूप हैं, राक्षसही लोग उत्तम धर्म्मको जानते हैं, इन सब बातोंकी परीक्षा करके तुम्हें धर्म्म नियम अनुसार निवास करना चाहिये। रे राक्षस! देवता, ऋषि, सिद्ध, पितर, गन्धर्व्व, राक्षस, सर्प, पशु, टेढ़ी योनियोंमें उत्पन्न हुए कीट और चींटी आदि सब मनुष्योंसेही जीते हैं तुम्हारी जीविका भी मनुष्योंहीसे है इसलोकके बढ़नेसे तुम्हारा लोक भी बढ़ता है, इस लोकके दुःखी होनेसे देवताभी दुःखी होते हैं, विधिपूर्व्वक देव और पितर कर्म्मोंमें पूजित होकर देवताभी प्रसन्न होते हैं; जब प्रजाकी कोई रक्षा करनेवाला न रहा तो सुख और धन कहांसे होगा। रे राक्षस! राजाका किञ्चितभी निरादर न करना चाहिये, रे मनुष्योंको खानेवाला! हमलोक शक्तिके अनुसार देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा करके यज्ञसे बचा हुआ भाग खानेवाले हैं; हम कुछभी अधर्म्म नहीं करते हैं, हम गुरु और ब्राह्मणोंको सदा प्राणके समान मानते हैं। पुरुषको उचित है कि अपने मित्र और विश्वाससंरक्षित पुरुषको दुःख न दे; जिसके आश्रयसे रहे और जिसका अन्न खाय उसे दुःख देना न चाहिये। तू हमारे आश्रयसे सुखपूर्व्वक रहा है और हमने तेरा सम्मानभी किया है, सो तू हमारा अन्न खाकर हमहीको हरण करता है, ऐसा करनेसे तेरी बुद्धि अवस्था और मरण सबही वृथा हो जायंगे; अतएव आज तू ऐसा कर्म्म करके वृथा मत हो! यदि तू महादुष्ट और सब धर्म्मोंसे रहित हो, तो

हमारे शस्त्र हमको दे दे; और युद्ध करके द्रौपदीको लेजा। यदि तू अज्ञानसे इन कर्म्मोंको करेगा, तो तुझे केवल अपकीर्त्ति और अधर्म्महो प्राप्त होगा। रे राक्षस! तू इस मनुष्य जातिमें उत्पन्न हुई स्त्रीको लेजाता है, यह बहुत विषम काम है। ऐसा कहकर महाराज युधिष्ठिर बहुत भारी होगये, उनके बोझसे वह राक्षस शीघ्र न चल सका, तब महाराजने द्रौपदी, नकुल और सहदेवसे कहा कि तुम लोग कुछ भय मत करो; मैंने इस मूर्ख राक्षसकी गतिको नाश कर दियाहै और महाबाहु भीमसेनभी बहुत दूर नहीं हैं, जब वह यहां आजायंगे तो यह राक्षस जीता न बचेगा। हे महाराज! जब सहदेवने उस मूर्ख राक्षसको देखा, तो महाराज युधिष्ठिरसे कहने लगे, कि हे महाराज! इससे अधिक कौन बात होगी कि जो क्षत्री युद्धके सामने मरे या शत्रुको जीतले। हे शत्रुनाशन! याती हमही इसको जीत लेंगे या यही हमें जीत लेगा। हे महाबाहु! हे नरनाथ! यही युद्धका देश और काल है; हम अभी इसको मार डालेंगे। हे सत्यपराक्रम! यही क्षत्रियोंके धर्म्मका समय है, यदि हम युद्धमें मर गये, तो अच्छी गतिको प्राप्त होंगे। हे महाराज! यदि सूर्य्यास्त होनेके पहिले यह राक्षस जीता रह जाय तो हम अपनेको क्षत्री न कहेंगे।

रे राक्षस! खड़ा रह! खड़ा रह! हम पाण्डुके पुत्र सहदेव हैं, हम तुमको अभी मारकर पृथ्वीमें सुला देंगे अथवा तूही हमको मार कर द्रौपदीको लेजाना। जब सहदेव ऐसा कह रहे थे, उसी समय इच्छानुसार घूमते हुए, वज्रधर इन्द्रके समान गदा लिये हुए भीमसेन आ पहुंचे, उन्होंने युधिष्ठिर, नकुल और द्रौपदीको राक्षससे पकड़े हुए, तथा सहदेवको पृथ्वीमें खड़े और राक्षससे बात करते देखा। मूर्ख, कालके वशमें हुए राक्षसकोभी मार्गहीसे भीमसेनने देखा। महा बलवान भीमसेन प्रारब्धके बलसे इधर आ निकले थे। जब उन्होंने देखा कि द्रौपदी और मेरे भाइयोंको राक्षस लिये जाता है तो क्रोधसे व्याकुल होकर राक्षससे कहने लगे। रे पापी! जब तू शस्त्रोंकी परीक्षा करता था तभी हमने तुझको पहिचान लिया था। परन्तु मैंने तेरे मारनेपर ध्यानही नहीं किया था। इसीसे तू आज तक बचा रहा; हमने बिचारा था, कि अतिथि, ब्राह्मण, प्रियबादी और हमारे प्रिय कामोंका करनेवाला है। जो ब्राह्मणरूप धारण किये हुए राक्षसको जानकर मारता है, सोभी नरकमें जाता है और तेरे मरनेका समयभी नहीं आया था। इसीसे तू बचा रहा; समयकी बड़ी बिचित्र गति है, क्योंकि तुझे द्रौपदीके हरलेजानेकी बुद्धि हुई, निश्चय अब तेरे मरनेका समय आगया। रे राक्षस! तैंने यह कालरूप सूतसे बन्धी हुई, बंसीको निगला है, अब तू मछलीके समान मर जायगा; तैंने अपने मनमें निश्चय करके जिस देशको जाना चाहा था, अब तू वहां नहीं जासकेगा। बरन जिस देशको वक और हिड़म्ब गये हैं, उसी मार्ग को तूभी जायगा। भीमसेनके ऐसे बचन सुन राक्षसको बहुत डर हुआ, तब वह उन सबको छोड़ युद्ध करनेको खड़ा होगया और क्रोधसे ओठोंको फरकाता हुआ भीमसेनसे बोला, कि रे पापो! हमको कोई दिशा अगम्य नहीं है परन्तु तेरेही लिये इतनी देर कर रहे थे, जिस जिस राक्षसको तैंने मारा है हमने उन सबका नाम सुना है, आज तेरे रुधिरसे उन सबको जलदान करेंगे। राक्षसके ऐसे वचन सुन भीम क्रोधसे अपने ओठोंको चाटने लगे, उनका स्वरूप उस समय ऐसा होगया जैसा प्रलय कालमें यमराजका होता है। भीमसेनने अपने हाथोंको स्पर्श करके राक्षसकी ओर देखा, और जब राक्षसने देखा कि भीम युद्धके लिये

मेरी ओर दौड़े आते हैं तो क्रोधसे वार वार ओठोंको चाटता हुआ भीमकी ओर ऐसे दौड़ा जैसे इन्द्रके पकड़नेको बलि दौड़ा था। उस समय जटासुर और भीमसेनका घोर बाहुयुद्ध हुआ, तब नकुल और सहदेव क्रोध करके राक्षसकी ओर दौड़े परन्तु कुन्तीनन्दन भीमने उनको रोका और कहा कि तुम लोग देखते रहो हम अकेलेही इस राक्षसको मार डालेंगे। हे राजन्! हम अपने भाई, धर्म्म, कर्म्म, और इष्टकी शपथ करते हैं कि हम अकेलेही इस राक्षसको मारेंगे। इस प्रकार परस्पर बड़ाई करते हुए भीमसेन और राक्षस बाहुयुद्ध करने लगे। उन दोनो क्रोधियोंका युद्ध देवता और दानवके समान हुआ, वे दोनो वृक्ष उखाड़ उखाड़ कर एक दूसरेको मारने लगे, दोनो महापराक्रमी वीर मेघके समान गर्ज्जने लगे; उन वीरोंके पैर लगनेसे बड़े बड़े वृक्ष टूटने लगे। एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे महायुद्ध करने लगा, उन दोनोका वृक्षयुद्ध ऐसा हुआ जैसा पहिले समयमें स्त्रीको इच्छावाले सुग्रीव और बालिका हुआ था। वे दोनो वृक्षोंको उखाड़ उखाड़ और घुमा घुमाकर मारने लगे, तथा वार वार गर्ज्जने लगे, उन्होंने सब वृक्षोंको उखाड़ उखाड़ कर जो मारा वे सब मंजके समान होकर पृथ्वी पर गिर गये; भीम राक्षसको और राक्षस भीमको मारनेकी इच्छा रखते थ इसी लिये एक दूसरेके ऊपर शिला बरसाने लगे। यह युद्ध थोड़ी देर तक हुआ; शिला फेंकते हुए राक्षस और भीम ऐसे शोभायमान हुए जैसे महा मेघोंके सहित दो पर्व्वत। महाबलवान जटासुर और भीमसेन वज्रके समान भारी शिलाओंको चलाते हुए युद्ध करने लगे, अभिमानसे भरे हुए महापराक्रमी भीम और जटासुर एक दूसरेको अपने हाथसे पकड़ कर हाथीके समान खींचने लगे, फिर वे दोनो महात्मा मुक्कोंसे युद्ध करने लगे, तब महा कटकट शब्द होने लगा। अनन्तर भीमसेनने पांच फणोके सर्पके समान अपने हाथका मुक्का बनाकर राक्षसके कण्ठमें मारा। उस मुक्केके लगनेसे राक्षस बहुत दुःखित होगया। जब भीमसेनने देखा कि यह राक्षस अब बहुत थक गया है, तो उसको बलसे उठा कर पृथ्वीपर पटक दिया। देव समान महाबाहु पाण्डुनन्दन भीमसेनने राक्षसको पृथ्वीपर पटककर उसके सब शरीरको चूर कर दिया; एक मुक्का मारकर उसका शिर शरीरसे अलग कर दिया, उस समय उसके दांत आंख बारह निकल गये। जैसे ताड़का फल वृक्षसे गिरता है, तैसेही राक्षसका सिर खूनसे भींगकर पृथ्वीमें गिर गया। महाधनुर्धारी भीमसेन जटासुरको मारकर महाराज युधिष्ठिरके पास गये। तब सब ब्राह्मण लोग भीमसेनकी इस प्रकार स्तुति करने लगे, जैसे मरुतगण इन्द्रकी स्तुति करते हैं।

तीर्थयात्राप्रकरण और उसके अन्तर्गत
जटासुर वधप्रकरण समाप्त।
१५७ अध्याय समाप्त।

अथ यक्ष-युद्धप्रकरण आरम्भ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब जटासुर मारा गया, तब महाराज कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर फिर बदरिकाश्रममें आकर रहने लगे। एकदिन महाराजने अपने सब भाई और द्रौपदीको बुलाकर अर्ज्जुनका स्मरण करके कहा, कि हमलोगोंको बनमें विहार करते हुए चार वर्ष बीत गये, अब पांचवा वर्ष आरम्भ हुआ है और इसी वर्षमें अर्ज्जुन आनेको कह गये हैं; हमलोग अर्ज्जुनका मार्ग देखनेको चले हुए पुष्पोंसे शोभित, मतवाले कोकिल, भौंरे मोर और चातक प्रभृति सबसे शोभायमान, व्याघ्र, सुअर भैंसे, नीलगाय हरिन कुत्तेके पैरवाले जन्तु, (भेड़िया आदि) सर्प रूरु (हरिन) आदि पशुओंसे सेवित, फूले

हुए सौ और हजार दलके कमल और नील-कमल (लीलोफर) से भरे हुए, देवता और मुनियोंसे सेवित, पवित्र महापुण्य दायक श्वेत-गिरि पर चलकर रहे। यहां भी हमलोगोंने अर्ज्जुनके देखनेकी इच्छासे निवास किया; महातेजस्वी अर्ज्जुन यहीं आनेको कह गये थे; हमलोग पांच वर्ष तक यहीं रहेंगे क्योंकि वह कह गये हैं कि हम यहीं आवेंगे,हम शत्रु-नाशन गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनको देवलोकसे आया हुआ यहीं देखेंगे। ऐसा कह महाराजने सब ब्राह्मणोंको अपने पास बुलाया और उन तपस्वियोंसे सब कारण कह सुनाया। अनन्तर सब पाण्डवोंने महा तपस्वी और प्रसन्न ब्राह्मणोंकी प्रदक्षिणा की ब्राह्मणोंनेभी प्रसन्न होकर कुशल पूर्व्वक और आनन्दसे रहनेका आशीर्व्वाद दिया। ब्राह्मणलोग बोले, हे भरत-कुलसिंह! हे धर्म्मज्ञ! अब तुम्हारे सुखके दिन आये; अब आप शीघ्रही राज-धर्म्मके अनुसार उस दुःखको पार होकर पृथ्वीका पालन करेंगे। महाराज उन सब तपस्वियोंके वचनको ग्रहण करके, अपने भाई और ब्राह्मणोंके सहित वहांसे चले। शत्रुनाशन, महा तेजस्वी, उत्तम व्रतोंके धारण करनेवाले, महाराज युधिष्ठिर, अपने भाइयोंके सहित लोमशसे रक्षित होकर राक्षसोंको सङ्ग ले, कहीं पैरों और कहीं राक्षसोंपर चढ़कर चलने लगे। महाराज युधिष्ठिर अनेक क्लेशोंको न विचारते हुए, सिंह और व्याघ्रोंसे भरी हुई, उत्तर दिशाको चले। मार्गमें कैलाश मैनाक, गन्धमादन और हिमाचल पर्व्वतोंको देखा, पर्व्वतोंके ऊपर अनेक सुखदायक नदियोंको देखते हुए चौदहवें दिन हिमाचल पर्व्वतके ऊपर पहुंचे। हे राजन्! पाण्डवोंने गन्धमादनसे हिमाचल पर्व्वतपर वृषपर्वाके आश्रमको देखा। वह स्थान परम पवित्र अनेक वृक्षोंसे वेष्ठित और झरनोंके समीप वाले फले हुए वृक्षोंसे शोभायमान था। शत्रुनाशन पाण्डवलोगोंने थकाई दूर करके, राज-ऋषि धर्म्मात्मा वृषपर्व्वाके पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। राज-ऋषि वृषपर्वाने भरतकुलसिंह पाण्डवोंका पुत्रके समान आदर किया। शत्रु-नाशन पाण्डवलोग वृषपर्वासे सत्कार पाकर सात दिनों तक उनके आश्रममें रहे; आठवें दिन लोकविख्यात वृषपर्वा मुनिको बुलाकर, महाराजने जानेकी आज्ञा मांगी और एक एक ब्राह्मणका नाम सुनाकर महाराजने वृषपर्वाको दे दिया और समयके अनुसार बन्धुओंके समान सत्कार किये हुए अपने सेवकोंकोभी महात्मा वृषपर्वाको दे दिया। यज्ञ-पात्र, रत्न और भूषणभी पाण्डवोंने वृषपर्वाके आश्रममें छोड़ दिये, बीते और आनेवाले समयको जाननेवाले विद्वान महात्मा वृषपर्वाने भरतकुलसिंह पाण्डवोंको पुत्रके समान शासन किया। तब महात्मा पाण्डवलोग वृषपर्वाकी आज्ञा लेकर उत्तरको चले। उनको चलते हुए देख महातेजस्वी महाराज वृषपर्वा ब्राह्मणोंके सहित उनके पीछे चलने लगे। कुछदूर चलकर महाराज वृषपर्वा उनको आशीर्वाद दे और मार्ग बताकर लौट आये, कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर अनेक पक्षियोंसे भरे हुए बनको देखते हुए भाइयोंके सहित पैरोंही चलने लगे। पाण्डव लोग अनेक वृक्षोंसे भरे हुए पर्व्वतके स्थानोंमें निवास करते हुए, चौथे दिन उस पर्व्वतपर पहुंचे। वह पर्व्वत अनेक बड़े बड़े मेघोंके समान सुन्दर और जलसे भरा हुआ था, उसके अनेक शिखर मणि और सोनेके समान थे। जैसे वृषपर्वा मुनिने मार्ग बताया था, वे लोग वैसेही अनेक पर्व्वतोंको देखते हुए, गमन करने लगे। पर्व्वतके ऊपर दुःखसे जाने योग्य अनेक गुफाओंको देखते हुए, तथा उनको सुखसे लांघते हुए चले। धौम्य, द्रौपदी, पाण्डव और महाऋषि लोमश, ये सब सङ्गही चले, वे लोग अनेक हरिन और पक्षियोंके शब्दसे शोभित

अनेक वृक्ष, लता और बन्दरोंसे सेवित पवित्र कमलोंसे भरे हुए तालाबोंसे शोभित माल्यवान पर्व्वतपर पहुंचे। महाभाग पाण्डवलोग सिद्ध और चारणोंसे सेवित किम्पुरुष देशमें पहुंचे। आगे प्रसन्न पाण्डवोंने गन्धमादन पर्व्वतको देखा उसमें अनेक विद्याधर, किन्नरी, हाथी, सिंह और व्याघ्र बसते थे। जहां अनेक शरभोंके शब्द चले आते थे, अनेक हरिनलोग सुखसे विहार करते थे। आगे पाण्डवोंने नन्दन बनके समान गन्धमादन बनको देखा। वे पाण्डवलोग मन और हृदयको प्रसन्न करनेवाले उस बनमें घुसे; वे वीरलोग शरण देनेवाले बनमें घुसे, द्रौपदी और महात्मा ब्राह्मणोंके सहित वीर पाण्डवलोग कानोंको सुख देनेवाले पक्षियोंके मोठे मीठे शब्दोंको सुनते हुए, सब ऋतुमें फलनेवाले फलोंसे भरे हुए वृक्षोंका देखते हुए, फलोंके भारसे पृथ्वीको छूते हुए आम, अमड़ा, बहेड़ा, नारियल, तेन्दु, मंजाक, अंजीर, अनार, नीम्ब, कटहल, बढ़हल, मोच, खजूर अमलबेंत, पराबत, छौद्र, नीप, (कदम्बादिक) मनोहर बेल, कैथ, जामुन, खम्भारी बैर, बरगद गूलर, पिलखन, पीपल, चक्र, भेलावा, आमला हैड़, गोंदनी, करौंदा, आदि अनेक वृक्षोंको देखते हुए और उनके अमृतके समान फलोंको देखते हुए महात्मा पाण्डवलोग चले। पाण्डव लोगोंने केतकी, चम्पा, अशोक, मौलसरी, कमल, पारिजात, कचनार, देवदारु, शाल, ताड़ तेजपात, हींग, साखू, सिम्भर अशोक, सीसो और रालके वृक्षोंको देखा। चकोर, शतपत्र, भौंरे, तोते, कोयल, बरे हरेवे, जीव, प्यारे पपीहा, तथा और औरभी अनेक पक्षी सब कानको सुख देनेवाले मीठी मीठी बोली बोल रहे थे। जिस बनमें कदम्ब चकवी, चकवे, कुमरी, जलकुक्कुट, सारस हंस, बकुले और टीटोरी आदि अनेक पक्षी प्रसन्न होकर जलमें क्रीड़ा कर रहे थे जहां तड़ागोंमें कमलके मध्यसे छूटे हुए, केशरके रङ्गसे रङ्गे हुए भौंरे मीठे मोठे स्वरसे गारहे थे; पुरुष सिंह पाण्डवलोगोंने गन्धमादनपर्व्वत पर कमलके बनोंसे भरे हुए अनेक तालाबोंको देखा, उन्होंने लताके घरोंमें बैठे हुए; मेघके शब्दोंको सुनकर पञ्चम स्वरसे गाते हुए मदसे भरे हुए, विचित्र शिखावाले अनेक मोरोंको मीठेस्वरसे गाते हुए देखा उनमेंसे कोई मोर प्रसन्न चित्तसे बनको देखता हुआ नाच रहा था। कोई अपनी प्यारी मोरनीके सङ्ग विहार कर रहा था। कोई लता और बल्लियोंके बीचमें बैठा हुआ बनको देख रहा था। कोई इन्द्रजवके वृक्षके ऊपर उद्धत रूपसे बैठा था, कोई आनन्दसे अपनी वाणीको बोलता हुआ वृक्षको शाखापर मुकुटके समान बैठा था। पाण्डवोंने कामदेवके शस्त्रोंके समान अनेक फूले हुए कमल और सोनेके रङ्ग वाले फूलोंको देखा। कानके आभूषणके समान फूले हुए अनेक ढाकोंको देखा। नवीन बनमें फूले हुए, कुरैयाके अनेक वृक्षोंको देखा, उन्होंने बनमें विराजमान सफेद और काले तृणको देखा, उन फूलोंकी शोभा कामदेवके वाणोंके समान थी, जिनको देखतेही पुरुष कामदेवके वशमें हो जाते हैं। यह सब फूल बनमें विराजमान थे, कामदेवके वाणके समान आमकी मञ्जरियों पर भौंरे गूंज रहे थे। उस बनमें कोई फल सोनेके रङ्गवाले और कोई अग्निके समान रंग वाला था, कोई फूला हुआ वृक्ष लाल, कोई मणिके समान रङ्गवाला था। शाल, आवनूस, पाटली, और मौलसरीके वृक्ष पर्व्वतके शिखरों पर मालाके समान विराजमान थे। उस पर्व्वत पर निर्म्मल स्फटिकके समान स्वच्छ पाण्डुर रंगके पंखवाले कलहंस और सारसोंके शब्दसे शोभायमान अनेक तालाबोंको देखा। उन तालाबोंमें सफेद और नीले

कमल तथा सुन्दर और टण्डा जल भरा था। वीर पाण्डव लोग इस प्रकार चारों ओर सुगन्ध से भरे हुए उत्तम रसवाले फल, फूल, मनोहर तलाव, अत्यन्त रमणीय ह्रद, कमल, उत्पल, पुण्डरीक आदि अनेक फूलोंकी सुगन्धिसे प्रसन्न होते हुए और शीतल वायुसे सेवित होते हुए वनमें पहुंचे। उस वनके आश्चर्यको देख पाण्डवोंके नेत्र बहुत प्रसन्न हुए। तब महाराज युधिष्ठिरने बहुत प्रसन्न होकर भीमसेनसे कहा कि, भीमसेन! देखो यह गन्धमादन पर्व्वत कैसी शोभासे भरा हुआ है, देखो इस वनमें कैसे रमणीय वृक्ष अनेक प्रकारको लता, पत्र और फलोंसे भरे हुए विराजमान हैं, ये फूलोंके गुच्छे कोकिलोंके झुण्डके सहित कैसे शोभायमान हैं, इस वनमें वृक्ष कांटावाला अथवा बिना फला हुआ नहीं है, देखो इन तालावमें कमल फूल रहे हैं, इसमें हथिनियों-के सहित हाथी विहार करते फिरते हैं। देखो इसमें अनेक कमल उत्पल और नीले कमल फूल रहे हैं; इन सब फूलोंसे यह पोखर कोमलमाला धारणी लक्ष्मीके समान विराज-मान है। इस उत्तम वनमें यह अनेक पुष्पोंकी गन्धोंसे शोभित वृक्ष लगे हैं। हे भीम! देखो! इन वृक्षों पर अनेक भौंरे गीत गाते फिरते हैं, यह सब स्थान देवतोंके खेल करनेके हैं। हे वृकोदर! ये स्थान मनुष्योंके आने योग्य नहीं हैं, अब हमलोग यहां आके मनुष्य गति प्राप्त तथा सिद्ध होगये. देखो इन फूलोंसे भरी हुई लता और उत्तम वृक्ष आपसमें कैसे मिले हैं और उन पर जो मोरनियोंके सहित मोर बैठे हैं, उनके शब्दको सुनो। चकोर, शतपत, मतवारे कोकिल और तोते इन सब फूले और फले वृक्षोंपर विराजमान हैं, देखो लाल, पीले और गुलाबी रंगवाले पक्षी इन वृक्षों पर बैठे हुए एक दूसरे-को देख रहे हैं, हरी और लाली रंगको घास पर बैठे हुए सारस सब पुरुषोंकी प्यारी मीठी बोली बोल रहे हैं। चकवा भौंरा और लोह-पृष्ठ आदि पक्षी और चार दांतवाले श्वेत हाथी हथनियोंके सहित विहार कर रहे हैं, ये ताड़के समान ऊंचे और पर्व्वतके समान मोटे हाथी इस मणिके समान जलको मथ रहे हैं। देखो, यह शिखरों परसे अनेक झरनोंसे जलकी धारा बह रही हैं। देखो शरद ऋतुके मेघके समान और सूर्य्यके समान अनेक धातु इस पर्व्वत पर विराजमान हैं। कहीं अञ्जनके समान काली और कहीं सोनेके समान रङ्गवाली धातु विराजमान हैं, कहीं हरताल, कहीं सिङ्गरफ और कहीं मनःशिला धातु ऐसी विराजमान हैं, जैसी सन्ध्याके मेघ। कहीं खरहेके रुधिरके समान गेरु बह रहा है। कहीं सफेद और काले मेघके समान अनेक धातु प्रातःकालके सूर्य्यके समान विराजमान हैं। हे भीम! यह अनेक शोभासे भरे हुए धातु इस पर्व्वतको शोभित कर रहे हैं। वृषपर्व्वा मुनिके कहनेके अनुसार ये गन्धर्व्व लोग अपनी स्त्रियोंके सहित विहार कर रहे हैं। हे कुन्तीनन्दन! इन पर्व्वतोंपर किम्पुरुष सम-तालके सहित गीत गा रहे हैं और वेदका शब्दभी आता है। हे भीम! यह शब्द सब प्राणियोंको प्यारा है। हे भीम! उस पवित्र देवनदी गङ्गा को तुम देखो; अनेक कलहंस किन्नर मृग और पक्षी विहार कर रहे हैं, इसमें अनेक धातु और नदी विराजमान हैं। गन्धर्व्व, अप्सरा, मनोहर वन अनेक प्रकारके सौ सिरवाले सर्पोंसे विराज-मान हैं। हे शत्रुनाशन भीम! इन सब वस्तु-ओंसे विराजमान पर्व्वत-राजको देखो।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, शूरवीर शत्रु-नाशन पाण्डव लोग जब उस उत्तम गतिको प्राप्त हुए, तबभी प्रसन्न चित्तसे पर्व्वतराजके दर्शन करनेसे तृप्त न हुए। तब अनेक फले फूले वृक्षोंसे विराजमान राजऋषि आर्ष्टिषेण

मुनिके आश्रम पर पहुंचे। अनन्तर उन्होंने महा तपस्वी दुर्बल, मांसरहित और सब धर्म्मोंके पार जानेवाले आर्ष्टिषेण मुनिका दर्शन किया।

१५८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, हे राजन्! महाराज युधिष्ठिरने अपना नाम सुनाकर आर्ष्टिषेण मुनिको सिरसे प्रणाम किया। उन मुनिने तपसे सब पापोंको जला दिया था। अनन्तर द्रौपदी, भीमसेन, तपस्वी नकुल और सहदेवने प्रणाम किया, और राजऋषि आर्ष्टिषेणके चारों ओर बैठे। इसके पश्चात् धर्म्म जाननेवाले पाण्डवोंके पुरोहित धौम्य मुनिने उन मुनिसे रीतिके अनुसार वार्त्तालाप किया। अनन्तर महात्मा आर्ष्टिषेण मुनिने अपनी ज्ञान-दृष्टिसे जाना कि, कुरुवंशी पाण्डु राजाके पुत्र आये हैं; तब उन्होंने सबका सत्कार किया। महातपस्वी आर्ष्टिषेणने कुरुकुलसिंह युधिष्ठिरको भाइयोंके सहित बैठाया और कुशल पूछी और बोले कि हे कुन्तीनन्दन! तुम्हारी वृत्ति धर्म्ममें है न? तुम माता और पिताकी सेवा तो करते हो? कहो तुम अपने गुरु, बूढ़े और वैद्योंकी पूजा तो करते हो? तुम्हारी बुद्धि कभी पाप कर्म्ममें तो नहीं जाती? कहो तुम्हारी बुद्धि धर्म्म करने और पाप छोड़नेमें तो है? हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम न्यायके अनुसार धर्म्म करके कहते तो नहीं हो? तुमसे यथार्थ पूजित होकर साधुलोग प्रसन्न तो रहते हैं? कहो वनमें रहकर धर्म्म तो करते हो? हे कुन्तीनन्दन! कहो तुम्हारे आचरणोंसे धौम्यको दुःख तो नहीं होता? तुम्हारा धर्म्म, तप, शील, पवित्रता और अलोभ तो ठीक है न? हे कुन्तीनन्दन! कहो तुम अपने कुलका धर्म्म करते हो? हे कुन्तीनन्दन! जिस मार्गसे राजर्षि लोग गये हैं, तुम उसीसे चलते हो? हे पाण्डव! हे पितृनन्दन! पितरलोग अपने अपने वंशमें उत्पन्न हुए पुत्रोंको देख प्रसन्न और दुःखी होते हैं वे लोग विचारते हैं कि, हम इसके सुकर्म्म से सुख और कुकर्म्मसे दुःख पाते हैं। पिता, माता, अग्नि गुरु और आत्मा जो पुरुष इन पांचोंकी पूजा करते हैं, उनके दोनों लोक सुधरते हैं।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! आपने जो कुछ कहा ठीक है। हम अपनी शक्ति और न्यायके अनुसार सब कर्म्म करते हैं, यह सब धर्म्मके काम हैं। श्रीआर्ष्टिषेण मुनि बोले प्रतिपदा और पूर्णमासीके दिन इस पर्व्वत पर जल और वायु भक्षण करनेवाले मुनि लोग आकाशसे आकर इकट्ठे होते हैं। हे कुन्तीनन्दन! किम्पुरुष कामी लोग अपनी पतिव्रता स्त्रियोंके सहित इन पर्व्वतके शिखरों पर दिखाई देते हैं। कौषिकके बने हुए निर्म्मल वस्त्र और मालाधारण करके अनेक गन्धर्व्व और अप्सरा लोग यहां आते हैं। हे राजन्! सुन्दर रूपवाले विद्याधर उत्तम मालाओंको धारण करके इस पर्वत पर आते हैं। बड़े सर्प और गरुड़ादिक भी यहां आते हैं। प्रतिपदा और पूर्णमासीको इस पर्व्वतके ऊपर भेर, शङ्ख और नगारोंका शब्द सुनाई देता है। हे पाण्डवो! तुम वहां जानेकी बुद्धि मत करना, यहीं बैठ कर इन सब शब्दोंको सुनना। हे भरतकुलसत्तम! यहांसे आगे मनुष्य लोग नहीं जा सकते हैं आगे देवतोंके विहार करनेकी जगह है। हे भारत! यहां पर जो पुरुष चपलता करता है, उसका सब जन्तु द्वेष करते हैं और राक्षस लोग उसे मार डालते हैं। हे युधिष्ठिर! इस कैलाश शिखरके पार सिद्ध और देवऋषि लोग जा सकते हैं। हे शत्रुनाशन युधिष्ठिर! जो चपलता करके यहांसे आगे जाना चाहता है, उसको राक्षस लोग भाले आदिसे मारते हैं। हे तात! इस स्थानपर प्रतिपदा और पूर्णमासीको नरवाहन महाराज

कुवेर अप्सराओंके सहित आकर यहां दर्शन देते हैं। सूर्य्यके समान तेजस्वी यक्ष और राक्षसोंके स्वामी कुवेरको शिखर पर बैठे हुए सब लोग देखते हैं। देवता दानव सिद्ध और कुवेरके विहार करनेका यह स्थान है। हे भरतसत्तम! हे तात! इस शिखर पर बैठ कर कुवेर तुम्बुरु गन्धर्व्वसे गीत और सामवेद सुनते हैं। हे युधिष्ठिर! इस पर्व्वतके रहनेवाले सब प्राणी इन सब आश्चर्य्यको यहींसे बैठकर देखते हैं, तुम लोग मुनियोंके खाने योग्य सुरस फलोंको खाकर अर्ज्जुनके आने तक यहीं रहो परन्तु कभीभी चपलता मत करना। हे तात! तुम यहां सुखसे निवास और विहार करके शेषमें शस्त्रोंसे जीती हुई पृथ्वीका पालन करना।

१५८ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे तपोधन! आर्ष्टिषेण मुनिके आश्रमपर पहुंचकर मेरे परदादा पाण्डुके पुत्र दिव्य पराक्रमी महात्मा पाण्डव लोग उस गन्धमादन पर्व्वतपर कितने दिन रहे और महा पराक्रमी महा वीर्य्यवाले लोकवीर पाण्डवोंने वहां रहकर कौनसे कर्म्म किये सो सब हमसे कहिये; महाबाहु भीमसेनने उस हिमालय पर्व्वतपर रहकर कौन कौन काम किये! हम उनके पराक्रमको विस्तार पूर्व्वक सुनना चाहते हैं। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! उनसे और यक्षोंसे कैसे युद्ध हुआ? उनको कुवेरका दर्शन कैसे हुआ। भगवान आर्ष्टिषेणने कहाथा कि कुवेर आतेहैं, तो कहिये, कि उनको कुवेरका दर्शन कैसे हुआ? क्योंकि पाण्डवोंका चरित्र सुननेसे हमारी तृप्ति नहीं होती है।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! भरतकुलसिंह पाण्डवोंने अपनी हितकारिणी मुनिकी आज्ञाको सुनकर वैसाही किया। वे लोग पवित्र हिमाचलपर रहते हुए, मुनियोंके खाने योग्य रसभरे फलोंको और शुद्ध बाणोंसे मारे हुए हरिनोंके मांसको और अनेक प्रकारकी मीठी वस्तुओंको खाते हुए निवास करने लगे। इस प्रकार सब पाण्डवोंको वहां रहते हुए, पांचवां वर्ष आरम्भ हुआ, उस समय लोमश मुनि अनेक प्रकारकी कथा कहते रहे। हे पृथ्वीनाथ! घटोत्कच राक्षसोंके सहित "हम उचित समयपर आवेंगे" यह कहकर पहिलेही चला गया। महात्मा पाण्डव लोगोंको उस आश्रमपर रहते और अनेक आश्चर्य्यको देखते हुए अनेक महीने बीत गये। महात्मा पाण्डवोंके विहार करते समय अनेक व्रतधारी पवित्रात्मा मुनि और चारणलोग उनको देखने आये। भरतकुलश्रेष्ठ पाण्डवलोगभी उनसे दिव्य वार्त्तालाप करने लगे। एक दिन महाह्रदमें रहनेवाले समृद्धियुक्त महासांपको गरुड़ने पकड़ा, उसके पकड़नेसे पर्व्वत हिल गया और वृक्ष टूटने लगे। इस आश्चर्य्यको सब प्राणियोंके सहित पाण्डवोंने देखा। उसके पश्चात् वायुने पर्व्वतके शिखरसे सुगन्धसे भरे हुए सुन्दर फूलोंको पाण्डवोंकी ओर उड़ाता। उन पांच रङ्गके फूलोंको मित्रोंके सहित पाण्डवोंने और यशस्विनी द्रौपदीने देखा। तब उचित समयपर सुन्दर शिलापर सुखसे बैठे हुए महाबाहु भीमसेनसे द्रौपदी बोली, हे भरतकुलसिंह! गरुड़के पंखोंसे उठे हुए, वायुने महाबलसे यह पांच रङ्गके फूल फेंके हैं। जो सब प्राणियोंके आगे अश्वरथा नदीमें बह रहे हैं। तुम्हारे भाई सत्यवादी महात्मा अर्ज्जुनने खाण्डव वनमें गन्धर्व्व, सांप, राक्षस और इन्द्रकोभी निवारण कर दिया था; और मायावी राक्षसोंको मारकर गाण्डीव धनुषको प्राप्त किया था। हे भीम! तुम्हारा तेज और बाहुबल बहुत बड़ा है। हे इन्द्रतुल्य पराक्रम! तुमको कोई नहीं जीतसकता और तुम्हारे तेजको कोई नहीं रुह सकता; तुम्हारे

पराक्रमसे सब राक्षसलोग डरते हैं! हे भीमसेन! तुम्हारे पराक्रमसे दशो दिशा कांपती है, तुम्हारे मित्रलोग सुखदेनेवाले मालाधारी इस पर्व्वतके शिखरको सुख और निर्भयतासे देखें! हे भीम! बहुत दिनसे हमारी इच्छा थी, कि तुम्हारी बाहुरक्षित होकर इस पर्व्वतके शिखरको देखती। शत्रुनाशन महाबाहु भीमसेनने द्रौपदीके वचन सुन अपने शरीरसे प्रहारप्राप्त उत्तम बैलके समान उसकी इच्छानुसार करनेकी इच्छा की। श्रीमान्, सिंह और शार्दूलके समान गतिवाले,सोनेके समान रङ्गवाले, मनस्वी, बलवान, अभिमानी, शूर, लालनेत्र और ऊंचे कन्धेवाले, मतवाले हाथीके समान बली, सिंहके समान दांतवाले, शालके समान ऊंचे, महात्मा, सर्व्वाङ्गसुन्दर, संखके समान कण्ठवाले महाबाहु भीमसेनने स्वर्णपीठ धनुष, खड्ग और तूणीरको धारण किया। अनन्तर सिंह तुल्य उद्धत और मतवाले हाथीके समान भय और मोहको छोड़कर चले। मतवाले हाथीके समान गतिवाले भीमको धनुष बाण धारण किये सब प्राणियोंने सिंहके समान चलते देखा। पाण्डुनन्दन भीमने द्रौपदीका आनन्द बढ़ानेके निमित्त हाथमें गदाले शोक और भयको छोड़ पर्व्वतके शिखरकी ओर गमन किया। उनको न ग्लानि न डर न परिश्रम और न कभी दुष्टता आती थी। महाबली भीमसेन अनेक ताड़ोंके समान ऊंचे और रूप और एक मार्ग वाले शिखर पर चढ़ गये उनको देख किन्नर सर्प मुनि और राक्षस प्रसन्न होने लगे। वहां चढ़कर भीमने कुबेरका घर देखा, वह स्थान सोने और स्फटिकका बना हुआ अनेक स्थानोंसे घिरा हुआ था। चारों ओर से सोनेका बना हुआ, रत्नजड़ी भीत और बागोंसे शोभित था, पर्व्वतसे भी उंची अनेक अटारी द्वार तोरण और ध्वजाओंसे शोभायमान था, उस स्थानके चारों ओर अनेक विलासिनी नाचती और गाती फिरती थीं। जिसमें लगी हुई पताका वायुसे हिल रही थी, भीमने धनुषकी आड़ करके ये लोग हमें न देख सकें ऐसा विचार करके दुःखसे कुबेरके नगरको देखा। सुगन्धिसे भरा हुआ सब प्राणियोंको सुख देनेवाला गन्धमादनका वायु वहां चलने लगा। भीमसेनने उस शिखर पर अनेक वर्णवाले विचित्र सौन्दर्य्यधारी परम शोभायुक्त अनेक वृक्षोंको देखा, भीमसेनने अनेक रत्नोंसे खिचे हुए विचित्र मालाधारी कुबेरके स्थानको देखा। महाबल भीमसेन अपने हाथमें धनुष और खड्ग धारणकर प्राणका प्रेम छोड़ पर्व्वतके समान स्थिर होकर बैठ गए अनन्तर शत्रुओंको कंपानेवाले शङ्खको बजाया धनुष और तालोंका घोर शब्द किया। उस शब्दको सुनकर राक्षसोंके रोएं खड़े होगये, अनेक गन्धर्व्व और राक्षस लोग भीमसेनकी ओर दौड़े। यक्ष और राक्षस लोगोंने अपने हाथोंमें गदा, परिघ, खड्ग, शूल, शक्ति और परश्वध आदि अनेक शस्त्रोंको धारण किया। हे जनमेजय! तब उन राक्षस और भीमसेनका युद्ध होने लगा। भीमसेनने महावेगवाले मायाके सहित राक्षसोंके छूटे हुए शूल शक्ति और परश्वध आदि शस्त्रोंको अपने बाणोंसे काट दिया, भूमिमें और आकाशमें खड़े हुए,तथा गर्जते हुए राक्षसोंके शरीरोंको अपने बाणोंसे काट दिया, उस समय महाबली भीमसेनके ऊपर रुधिरकी वृष्टि होने लगी, गदा और परिघधारी राक्षसोंसे चारों ओर रुधिरकी धारा बहने लगी, भीमसेनके बाहुबलसे छूटे हुए बाणोंने राक्षसोंके शिर और शरीरको काटना आरम्भ किया। उस समय राक्षसोंसे छिपे हुए भीमसेनका रूप ऐसा दीखने लगा जैसा बादलसे घिरे हुए सूर्य्यका। उनके बाण ऐसे चलते थे जैसे सूर्य्यकी किरन। सत्य पराक्रमी भीमसेनने अपने बाणोंसे राक्षसोंको छालया! राक्षसोंने

भीमसेनको बहुत डराया और अनेक प्रकारके बुरे बुरे शब्दभी कहे, परन्तु भीमसेनको कुछभी डर न हुआ। यक्ष लोग भीमके डरसे व्याकुल और वाणोंसे पीड़ित होकर अपने अपने शस्त्रोंको डाल डालकर घोर शब्द करने लगे। राक्षस और यक्षलोग महा धनुषधारी भीमसेनके भयसे व्याकुल होकर गदा, शूल, शक्ति और परश्वधोंको छोड़ छोड़ कर दक्षिणकी ओर भागे। उनमें महापराक्रमी महाबाहु मणिमान नामक राक्षस कुवेरका मित्र था। वह महाबली और महापुरुषार्थी मणिमान राक्षस सब राक्षसोंको युद्धसे भागते देख कर अपना स्वामिभाव दिखाने लगा। और बोला, कि तुम सबलोगोंको एक मनुष्यने हरा दिया। तुम कुवेरसे जाकर क्या कहोगे? मणिमान राक्षस सब राक्षसोंसे ऐसा कहकर शक्ति, शूल और गदा धारण करके भीमसेनकी ओर दौड़ा। जब भीमने उसको मतवारे हाथीके समान वेगसे आते हुए देखा, तो उसके हाथमें अत्यन्त तीक्ष्ण तीन वाण मारे। उन वाणोंके लगनेसे महबली मणिमानको महाक्रोध हुआ और एक भारी गदा भीमसेनके मारी। भीमने उस महाघोर गदाको आकाशसे गिरती हुई देख, शिलाको काटनेवाले अनेक वाणोंको मारा। परन्तु वे सब वाण उसमें लग कर टूट गये और उसके वेगको रोक न सके। तब महापराक्रमी बलवान भीमसेनने गदायुद्धकी रीतिसे मणिमानकी गदाको व्यर्थ कर दिया। उसी समयमें मणिमानने लोहेकी बनी सोनेके दण्डवाली एक घोर सांगी भीमसेनको मारा। वह घोर शब्दवाली शक्ति आकर भीमसेनके दहने हाथमें लगी, वह अग्नि-ज्वालावाली घोर शक्ति भीमसेनके हाथमें लगकर पृथ्वीपर गई। अनन्तर पराक्रमी कुन्तीनन्दन महाधनुषधारी भीम उस शक्तिके लगनेसे क्रोधमें भर कर गदा लेकर राक्षसको ओर दौड़े, भीमने सोनेके पत्रसे जड़ी हुई शत्रुओंका भय बढ़ानेवाली लोहेकी गदाको हाथमें लेकर घोर शब्द किया और वेगसे दौड़कर वह गदा मणिमानको मारा। महाबल मणिमानने भी एक तीक्ष्ण शूल भीमसेनको मारा, गदा-युद्ध-निपुण भीमसेनने उस त्रिशूलको अपनी गदासे तोड़ डाला। फिर उसके मारनेको दौड़े, जैसे सांपके मारनेको गरुड़ दौड़ता है। महापराक्रमी भीमसेनने आकाशमें कूदके गर्जकर वह गदा मणिमानको मारा; वायुके समान वेगवान भीमसेनके हाथसे छूटकर इन्द्रके बज्रके तुल्य वह गदा उस राक्षसके हृदयमें लगी, उसके लगनेसे वह राक्षस पृथ्वी पर गिर कर मर गया। महापराक्रमी भीमने उस राक्षसको ऐसा मारा, जैसे सिंह बैलको मारता है। जब राक्षसोंने उसे मरा हुआ देखा, तो सब बचे हुए राक्षस उत्तर दिशाको भाग गये।

१६० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! महाराज युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, धौम्य और द्रौपदीने जब अनेक प्रकारके घोर शब्द और गुफाओंको गुञ्जार सुनी, तो चारों ओर देखने लगे। तब भीमसेनको न पाकर सब लोग व्याकुल होगये। अनन्तर द्रौपदीको आर्ष्टिषेण मुनिके आश्रममें छोड़के वीर पाण्डवलोग शस्त्रोंको लेकर पहाड़ पर चढ़गये। जब महारथ शत्रुनाशन महाधनुषधारी पाण्डवलोगोंने उस शिखरपर भीमसेनको देखा और भीमसेनके हाथ मरे तड़पते हुए, बड़े शरीरवाले बलवान महावीर्य्यवान राक्षसोंको पड़े देखा, तथा उनके बीचमें भीमको गदा, खड्ग और धनुष धारण किये इस प्रकार विराजमान देखा, जैसे दैत्योंको मारकर इन्द्र विराजमान होते हैं, तब महारथ पाण्डवोंने अपने भाई

भीमसेनको गलेमें लपटा लिया और उस उत्तम गतिको प्राप्त होकर सब लोग एक स्थानपर बैठ गये। उन धनुषधारी महावीरोंके बैठनेसे वह पर्व्वतका शिखर ऐसा विराजमान हुआ, जैसे महाभाग लोकपालोंके बैठनेसे स्वर्ग। महाराज युधिष्ठिरने कुवेरका स्थान और उन मरे हुए राक्षसोंको देखकर भीमसेनसे कहा, हे भीम! तुमने यह काम चाहे साहससे किया हो, या भूलसे किया हो, परन्तु करने योग्य नहीं था। यह काम ऐसाही हुआ, जैसे निरर्थक मुनिकी हत्या। धर्म्मके जाननेवाले मुनियोंने कहा है, कि राजाके विरुद्ध कोई काम न करना चाहिये। हे भीमसेन! तुमने यह काम देवतोंके विरुद्ध किया। हे कुन्तीनन्दन! जो कोई अर्थ और धर्म्मका निरादर करके पापकर्म्ममें अपनी बुद्धिको लगाता है उसको निश्चय पापका फल मिलता है। यदि तुम हमारा प्रिय काम करना चाहते हो, तो फिर ऐसा काम कभी नहीं करना!

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, अर्थ और धर्म्मके जाननेवाले धर्म्मात्मा कुन्ती-पुत्र युधिष्ठिर अपने बलवान भाईसे ऐसा कहकर चुप हो गये। परन्तु महा तेजस्वी युधिष्ठिर इसी बातको अपने मनमें बिचारते रहे।

भीमसेनके मारनेसे जो राक्षस बचे थे, वे सब मिलकर कुवेरके स्थान पर गये, वे लोग वेगसे चलकर कुवेरके पास पहुंचे, वहां जाकर भीमसेनके भयसे रोने लगे। अस्त्र शस्त्र छोड़कर भागे हुए, रुधिरसे भीगे, बाल खुलेवाले राक्षसलोग कुवेरसे कहने लगे। हे धनेश्वर! आपके सब वीर जो गदा, परिघ, खड्ग तोमरोंसे युद्ध करते थे, उन सबको एक मनुष्यने मार डाला। हे देव! आपके सब सेवकोंको उस पुरुषने पर्व्वतके ऊपर चढ़कर मारडाला। हे यक्ष-राक्षसोंके नाथ! उस एक मनुष्यने महापराक्रमी महाक्रोधी राक्षसोंको मारडाला। हे देव! आपके मित्र मणिमानके सहित वे सब राक्षस निर्जीवके समान मरे हुए पड़े हैं; हमलोग भागकर आपके पास आये हैं। जो कुछ उस पुरुषने कर्म्म किया था, सो हमने आपसे कह सुनाया; अब जो इच्छा हो सो कीजिये। कुवेरने उनके वचन सुन बहुत क्रोध किया और लाल नेत्र करके कहने लगे, कि यह क्या हुआ? कुवेरने भीमसेनका दूसरा अपराध जान महाक्रोध किया और बोले, कि हमारा रथ लाओ; अनन्तर पर्व्वतके शिखरके समान ऊंचा और मेघके समान गम्भीर कुवेरके रथको गन्धर्व्व और यक्षोंने जोता। उसमें सोनेकी मालाधारी सब गुणोंसे भरे नेत्रवाले, तेज, बल और गुणोंसे युक्त रत्नोंसे विभूषित बहुत शीघ्र चलनेवाले सुन्दर घोड़े जोते गये, वे घोड़े विजयके शकुन दिखाते हुए शब्द करने लगे, भगवान कुवेर रथपर बैठकर देवता और गन्धर्वोंसे स्तुति सुनते हुए चले, महातेजस्वी महात्मा यक्षराज कुवेरको चलते हुए देख लाल नेत्र महाबलवान सोनेके समान रङ्गवाले बड़े शरीर-वाले एक सहस्र राक्षसलोग शस्त्रोंको धारण करके और कवच पहनकर उनके संग चले। वे सब राक्षसलोग वेगसे आकाशमें कूदते हुए, मानो आकाशको खींचने लगे। इस प्रकार गन्धमादनकी ओर चले, उस कुवेरसे रक्षित घोड़ोंका शब्द सुन और यक्ष तथा राक्षसोंके सहित महात्मा कुवेरको आते पाण्डवोंने देखा; सुन्दर कुवेरको देखतेही पाण्डवोंके रोवें खड़े होगये। कुवेरनेभी महारथ और महा पराक्रमी पाण्डवोंको धनुष और खड्ग धारण किये हुए। देखा, तब कुवेर उनसे बहुत प्रसन्न हुए। कुवेर देवतोंके कामकी इच्छा करके पाण्डवोंसे प्रसन्न होगये। हे राजन्! उसी समय उस पर्व्वतके शिखरपर कुवेरके संग चलनेवाले महापराक्रमी पक्षीके समान उड़ते हुए अनेक राक्षस थे। जब उन्होंने कुवेरको प्रसन्नचित्तसे

पाण्डवोंको पास खडे हुए देखा, तो वे लोगभी क्रोधरहित होकर खड़े होगये। महात्मा पाण्डवोंने हाथ जोड़के कुबेरको प्रणाम किया। धर्म्म जाननेवाले युधिष्ठिर महारथ नकुल और सहदेव अपनेको अपराधी जान हाथ जोड़े, कुबेरभी शोभासे भरे हुए, विश्वकर्म्माके बनाये विचित्र पुष्पक विमानमें बैठे; उनके बैठते ही बड़े शरीरवाले महावेगवान यक्ष और राक्षस लोगभी चारों ओर बैठ गये। सैकड़ों हजारों अप्सरा और गन्धर्व्व उनके चारों ओर बैठ गये। उस समय कुबेर देवतोंके सहित इन्द्रके समान शोभा पाने लगे; अपने शिरपर सोनेकी माला धारण किये, फांसी खड्ग और धनुषको अपने हाथमें लिये भीमसेनभी कुबेर-की ओर देखने लगे। राक्षसोंके युद्धमें घाव लगनेपरभी भीमसेनको कुछ थकाई और दुःख नहीं हुआ था। कुबेरको देखते समयभी उनको कुछ भय नहीं था; जब कुबेरने तीक्ष्णवाण धारण किये युद्धकी इच्छासे खडे भीमसेनको देखा तो युधिष्ठिरसे कहने लगे। हे कुन्तीनन्दन! तुम सब प्राणियोंके कल्याणको चाहनेवाले हो; इसलिये अपने भाइयोंके सहित बेडर होकर इस पर्व्वतके शिखरपर निवास करो। हे पाण्डव! तुम भीमसेनके ऊपर कुछ क्रोध मत करना, इन सब राक्षसोंको काल आगया था, इसीसे मर गये। तुम्हारा भाई केवल निमित्त होगया है। भीमसेनने जो यह कर्म्म किया है, तुम इससे कुछ लज्जा मत करो। देवतोंने पहलेही यक्ष और राक्षसोंका नाश विचारा था। हे भरतकुल-सिंह! मुझे भीमके ऊपर कुछ क्रोध नहीं है, मैं इनके कर्म्मसे पहलेभी बहुत प्रसन्न हुआ था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमे-जय! महाराज युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर कुबेर भीमसेनसे बोले, हे कुरु-सत्तम! हे तात! तुमने जो कर्म्म किया, हमारे मनमें उसका कुछ विचार नहीं है। हे भीम! तुमने जो द्रौपदीके निमित्त हमारा, और देवतोंका अनादर करके यह साहसकर्म्म किया, उससे हमारा यक्ष तथा राक्षसोंका अप-मान हुआ—तुमने जो अपने बलसे यह कर्म्म किया इससे हम बहुत प्रसन्न हुए। हे वृको-दर! एक समय हमसे किसी अपराधके कारण महा-ऋषि अगस्त क्रुद्ध हुए थे और उन्होंने हमको घोर शाप दिया था। आज हम उस घोर शापसे छूटगये; हे पाण्डव! पहले-सेही हमारा दुःख निर्द्दिष्ट था, उसमें तुम्हारा कुछ अपराध नहीं। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवान्! महात्मा अगस्त्यने आपको शाप क्यों दिया था, इस कथाको हम विस्तार पूर्व्वक सुनना चाहते हैं, हमको यह बहुत आश्चर्य मालूम होता है, कि बुद्धिमान अगस्त्यके क्रोधसे आप अपने अनुचरोंके सहित भस्म न हो गये।

कुबेर बोले, हे नरेश्वर! कुशावती स्थानमें देवतोंकी एक सभा हुई थी; उस सभामें मैंभी तीन सौ महापद्म सेवकोंके सहित गया था, मेरे सङ्ग शस्त्रधारी अनेक घोर रूपवाले यक्ष-भी थे, मुझे मार्गमें मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य मिले। वे यमुनाके तीर पर फले हुए वृक्ष और अनेक पक्षियोंसे शोभित वनमें तेजके समूह अग्निको समान प्रकाशमान बैठे थे। वे सूर्य्यकी ओर मुख किये घोर तप कर रहे थे। हे पृथ्वी-नाथ! मेरे मित्र राक्षसोंके राजा श्रीमान् मणिमानने मूर्खता अज्ञान अभिमान और भूलसे वहां थूक दिया, वह थूक आकाशसे गिर कर महर्षि अगस्त्यके सिर पर गिरा, वे अपनी दृष्टिसे दशोंदिशाओंको भस्म करते हुए मुझसे बोले, हे धनेश्वर! तेरे दुष्टात्मा मित्रने तेरे आगे जो मेरा निरादर किया है, उसका फल तुमको शीघ्रही मिलेगा, यह तुम्हारा दुर्बुद्धि मित्र इस सब सेनाके सहित एक मनुष्यके

हाथसे मारा जायगा, इन सबके मरनेसे तुम्हें भी बहुत क्लेश होगा, जो तुम्हारी आज्ञाको पालन करेगा, वह अपने पुत्र, पौत्र और सेनाके सहित इस शापसे बचेगा। हे महाराज! मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यने पहिले यह शाप मुझे दिया था, आज तुम्हारे भाई भीमने उस शापसे हमें छुड़ा दिया।

१६१ अध्याय समाप्त।

कुवेर बोले, हे युधिष्ठिर! धृति, दक्षता, देश, समय और पराक्रम यही लोकमें कार्य्य करनेके पांच हेतु हैं। हे भारत! धृतिशील और यत्नोंमें कुशल, अपने अपने कर्म्मोंको करनेवाले, पराक्रम और विधानके जाननेवाले पुरुष सतयुगमें होते थे। बुद्धिमान देश कालके जाननेवाले धर्म्मों और सब विधानोंका पण्डित क्षत्री बहुत काल तक पृथ्वीका राज करता है। हे क्षत्रिय श्रेष्ठ! हे वीर! हे कुन्तीनन्दन! जो पुरुष इस प्रकार सब कामोंमें बर्त्ताव रखते हैं, उनको इस लोकमें यश और परलोकमें उत्तम गति मिलती है। देखो वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र देशकालके अनुसार पराक्रम करके वसुओंके सहित स्वर्गमें देवतोंके राजा हो गये, जो मूर्ख केवल क्रोधके वशमें होकर कर्म्मको नहीं देखता है, वह केवल पापके फलही को भोगता है। जो समय और कर्म्मको नहीं जानता है, वह कर्म्मोंके न जाननेवाला मूर्ख दोनों लोकमें नष्ट हो जाता है। जो मूर्ख वृथा क्रोध करता है, उसका इस लोकमें और परलोकमें नाश हो जाता है। जो केवल साहसके वशमें होकर पाप करता है और जो दुष्टात्मा सब कर्म्म करनेकी इच्छा करता हैं, उसको निश्चयही पाप होता है। हे पुरुष-सिंह! यह तुम्हारा भाई भीमसेन अधर्म्मको जाननेवाला, अभिमानी, बालबुद्धि, क्रोधी और भय-रहित है, तुम इसको अपनी आज्ञामें रखो। हे महाबाहु! हे मनुष्येन्द्र! तुम राजऋषि आर्ष्टिषेणके आश्रम पर जाकर ब्राह्मणोंके सहित शंकासे रहित होकर रहो। गन्धर्व्व, किन्नर और वनवासी लोग हमारी आज्ञासे तुम्हारी रक्षा करेंगे। हे धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! हे राजन्! यह तुम्हारा भाई भीमसेन जो केवल साहसहीसे युद्ध करता है तुम इसको रोको। हे राजन्! आजसे वनवासी लोग तुम्हे देखेंगे; तुम्हारी रक्षा करेंगे; ये लोग तुम्हारे लिये अन्न, स्वादु जल तथा औरभी अनेक प्रकारकी वस्तु ला दिया करेंगे। हे युधिष्ठिर! जैसे इन्द्रके अर्जुन, वायुके भीम, धर्म्मके तुम, अश्विनीकुमारके नकुल और सहदेव योगसे उत्पन्न हुए पुत्र हैं और वे लोग जैसे तुम्हारी सबकी रक्षा करते हैं, तैसेही हम भी तुम्हारी रक्षा करेंगे। अर्थके तत्वज्ञ और सब धर्म्मोंके जाननेवाले भीमसेनके छोटे भाई अर्ज्जुन स्वर्गमें कुशलसे हैं। हे तात! जो स्वर्गकी सम्पदा इस लोकमें दुर्लभ हैं वे सब जन्म भरसे अर्ज्जुनमें स्थित हैं, महातेजस्वी अर्ज्जुनमें दम (इन्द्रियोंको जीतनेकी शक्ति) दान, बल, बुद्धि, लज्जा, धृति शक्ति और उत्तम तेज हैं। हे पाण्डव! महा बलवान अर्ज्जुन कभी भूलसेभी बुरा काम नहीं करता है; कोई पुरुष उसे झूठा नहीं कहता है। हे भारत! महात्मा कुरुवंशकी कीर्त्ति बढ़ानेवाले अर्ज्जुनको देवता और गन्धर्व्वभी मानते हैं। अब वह इन्द्रके घरमें शस्त्रविद्या सीखते हैं। हे कुन्तीनन्दन! जिसने धर्म्मसे सब राजोंको अपने वशमें किया था वही महातेजस्वी शान्तनु तुम्हारे भाई गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनके कर्म्मोंसे प्रसन्न हो रहे हैं, महात्मा और महाबलवान अर्ज्जुन अपने कुल में श्रेष्ठ हैं। तुम्हारे- प्रपितामह सब राजोंके राजा महाराज शान्तनुने पितर देवता, ऋषि और ब्राह्मणोंकी पूजा करके यमुनाके तटपर

सात अश्वमेधयज्ञ की थी। वही महाराज आज स्वर्गमें हैं और तुम्हारी कुशल पूछते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुवेरके ऐसे बचन सुन पाण्डव लोग बहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर कुरुकुलसिंह भीमने शक्ति, गदा खड्ग और धनुषको रोदेसे रहित करके चलनेकी इच्छा की और कुवेरको प्रणाम किया। तब शरणागतकी रक्षा करनेवाले कुवेरने शरणागत भीमसे कहा कि तुम अपने शत्रुओंको मारनेवाले और मित्रोंके आनन्द बढ़ानेवाले हो। हे भरतकुलसिंह पाण्डवो! तुम लोग जब अपने रमणीय आश्रमोंमें रहोगे, तब यक्षलोग तुम्हारी रक्षा करेंगे। हे शत्रुओंके नाश करनेवालो! तुम्हारा कोई काम कभी नष्ट न होगा। अर्ज्जुनभी शीघ्रही शस्त्रोंको सीख साक्षात इन्द्रके घरसे आवेंगे। गुह्यकोंके राजा कुवेर उत्तम कर्म्मवाले युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर अन्तर्द्धान हो गये। उनके पीछे रत्न विभूषित अनेक पुष्पमालासे विराजमान विमानो पर चढ़कर अनेक यक्ष और राक्षस कुवेरके स्थानको चले, पक्षियोंके शब्दके समान घोड़ोंका शब्द ऐसा होता था, जैसा इन्द्रके नगरमें ऐरावतका शब्द होता है। वह कुवेरके घोड़े मेघको चीरते और वायुको पीते शीघ्रतासे आकाश की चले। तब कुवेरको आज्ञासे मरे हुए राक्षसोंके शरीर पर्व्वतसे उठाके फेंके गये, बुद्धिमान अगस्त्य मुनिने जो राक्षसोंको शाप दिया था, उसका अन्त इस युद्धमें हुआ महात्मा पाण्डवोंने उस स्थानमें उस रात्रिको व्यतीत किया। राक्षसोंने उनका बहुत सम्मान किया।

१६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे शत्रुनाशन जनमेजय! सूर्य्य उदय होने पर धौम्य ऋषि आर्ष्टिषेण मुनिके सहित नित्यक्रिया समाप्त करके पाण्डवोंके पास गये। पाण्डवोंने आर्ष्टिषेण और धौम्यको प्रणाम करके हाथ जोड़के सब ब्राह्मणोंकी पूजा की। तब धौम्य मुनिने युधिष्ठिरका दहना हाथ पकड़ कर और पूर्व्व दिशाको देखकर कहा हे महाराज! इस समुद्रपर्य्यन्तकी भूमिको घेरे हुए यह पर्व्वतराज मन्दराचल विराजमान है। हे पाण्डव! पर्व्वत और बनोंसे शोभायमान इस दिशाको इन्द्र और कुवेर रक्षा करते हैं, बुद्धिमान और सब धर्म्मोंको जाननेवाले लोग इसी दिशामें इन्द्र और कुवेरका स्थान बतलाते हैं। इसी कारणसे धर्म्मको जाननेवाले ऋषि, सिद्ध, साध्य और देवता लोग उदय होते सूर्य्यकी उपासना करते हैं। धर्म्मको जाननेवाले और सब प्राणियोंके स्वामी राजा यम मृतलोगोंके गम्य इसी दक्षिण दिशामें निवास करते हैं। यह संयमन नामक परम पवित्र और अद्भुत प्रेतराजका ऋद्धिसिद्धिसे भरा स्थान है। सूर्य्य जब इस पर जाते हैं तो सत्यसे स्थिर होते हैं और पर्व्वतराज पर जाकर अस्त होते हैं, बुद्धिमान लोग उसे अस्ताचल कहते हैं, इस पर्व्वतराज और समुद्रमें निवास करते हुए महाराज वरुण प्रजाकी रक्षा करते हैं। उस उत्तर दिशामें महा वीर्य्यमान कल्याणकारी मेरु है इसीमें ब्रह्मको जाननेवाले जीव प्राप्त होते हैं इसी पर्व्वतराजमें प्रजापतिके स्थान वाले जीव प्राप्त होते हैं। इसी पर्व्वतराजमें प्रजापतिने प्रथम सृष्टि रची थी। दक्ष आदि ब्रह्माके मानसिक सात पुत्रभी इसी पर्व्वतराज मेरुपर निवास करते हैं, हे राजन्! वसिष्ठादि सप्तऋषि इसी पर्व्वतपर उदय होके इसी पर्व्वत पर अस्त होते हैं। वह देखो धूलसे रहित मेरुका शिखर है इसीपर देवतोंके सहित ब्रह्मा निवास करते हैं। जिनको सब प्राणियोंकी गति कहते हैं; वही अनादि अनन्त नारायण ब्रह्माके स्थानसे परमें प्रकाशमान हैं, उनके तेज भरे स्थानको देवतालोग भी नहीं देख सकते हैं। जहां सूर्य्य और अग्निका प्रकाश नहीं होता जो

अपने तेजसे अत्यन्त प्रकाशमान हैं, जिसको देवताभी नहीं देख सकते हैं, वही महात्मा विष्णुका स्थान है पूर्वदिशामें नारायणका स्थान मेरु पर्व्वत पर अत्यन्त शोभायमान है, जिसमें प्राणियोंके स्वामी अपनेसे आप उत्पन्न होनेवाले और सम्पूर्ण जगतको प्रकाश करनेवाले विराजमान हैं। हे कुरुसत्तम! इस स्थानमें ब्रह्मऋषिभी नहीं पहुंचते हैं तो और ऋषि कैसे पहुंचेंगे? हे पाण्डव! यहां कोई तारा प्रकाश नहीं होते हैं; अचिन्त्य आत्मा भगवान विष्णु यहीं निवास करते हैं, इस स्थानमें यति लोग नारायणकी भक्ति करके वहां पहुंचते हैं यह स्थान अक्षय अव्यय और अविनाशी है। हे युधिष्ठिर! तुम इसे प्रणाम करो, हे युधिष्ठिर! इस मेरु पर्व्वतकी सूर्य्य और चन्द्रमा प्रति दिन प्रदक्षिणा करते हैं, हे निष्पाप कुरुनन्दन! जितने तारागण हैं इस पर्व्वतराजकी प्रदक्षिणा करते हैं। सन्ध्यासमय अस्ताचल पर अस्त होकर दिवाकर उत्तर दिशामें प्राप्त होता है मेरुकी प्रदक्षिणा करके प्रातःकाल फिर पूर्व्वदिशासे सब प्राणियोंका हित करनेवाला सूर्य्य गतिसे मासादि कालका विभाग करता है। ऐसेही भगवान चन्द्रमा सब तारागणके सहित गमन करते हैं; मेरु पर्व्वतसे चलकर सब प्राणियोंको प्रकाश देते हुए मन्दराचलको जाते हैं। जैसे सूर्य्य चलते हैं, ऐसेही अन्धकारको नाश करते जगतको प्रकाश करते चन्द्रमाभी गमन करते हैं। जब सूर्य्यके दक्षिणायन होनेसे शरदऋतु होती है, जब सूर्य्य सब स्थावर और जङ्गम प्राणियोंका तेज खींच लेते हैं, तभी प्राणियोंको आलस और जमुआई आदि आती हैं; इसीसे सब प्राणियोंको निद्रा आती है। जिस ऋतुमें भगवान सूर्य्य तेजको खींचते हैं उस ऋतुको ग्रीष्मऋतु कहते हैं। फिर अपनी किरणोंसे भगवान् सूर्य्य जल वर्षाते हुए सब प्रजाका पालन करते हैं। वर्षा, वायु और धूपसे स्थावर, जङ्गम प्राणियोंको सुख पहुंचाते हुए सूर्य्य सदा गमन आगमन किया करते हैं। हे कुन्तीनन्दन! इस रीतिसे कालका विभाग करते और प्राणियोंको सुख देते सूर्य्य विचरते रहते हैं, सूर्य्यकी गति सदा ऐसीही रहती है। यह कभी स्थिर नहीं होती है। प्राणियोंका तेज लेकर फिर उन्हीको फेर देते हैं, सब प्राणियोंको आयु और रात दिन पल घडी आदिका विभाग सूर्य्यकी गतिहीसे होता है।

१६३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले; अर्जुनके दर्शनकी इच्छासे उस पर्व्वत पर रहते हुए उत्तम व्रतधारी महात्मा पाण्डवोंको बहुत प्रसन्नता और आनन्द हुआ। उन बलवान शुद्ध कर्म्म करनेवाले, सत्य बोलनेवाले, धारणाशील, पाण्डवोंके पास अनेक गन्धर्व्व और ऋषि लोग आये, जैसे स्वर्गमें जानेसे मरुतगण प्रसन्न होते हैं, तैसेही अनेक फले हुए वृक्षोंसे युक्त उस पर्व्वत पर रहनेसे महात्मा पाण्डवभी प्रसन्न हुए। पर्व्वतके शिखरोंको मयूर और हंसोंके शब्दसे तथा फूले हुए वृक्षोंसे विराजमान देखते हुए पाण्डव वहां रहने लगे। साक्षात कुवेरकी उस उत्तम पर्व्वत पर हंस और सारसादिक पक्षियोंसे युक्त कमलोंसे भरी हुई उत्तम तटवाली पोखर बनी थी। जैसे राजा कुवेरके विहार करनेके स्थान चाहिये तैसेही ऋद्धियोंसे भरे हुए अनेक मणियोंसे युक्त फूलोंकी मालासे विराजमान वह स्थान मनोहर बना था। पाण्डव लोग अनेक रंगवाले सुगन्धसे भरे हुए मेघोंके जलसे छाये हुए अनेक वृक्षोंको देखते हुए उस पर्व्वतके शिखर पर रह कर तप करने लगे। हे पुरुषप्रवीर! उस पर्व्वत पर रहते हुए पाण्डवोंको पर्व्वत और औषधियोंके तेजसे दिन और रातमें कुछ भेद नहीं जान पड़ा। पुरुषसिंह पाण्डव लोगोंने जिसमें

स्थावर और जंगम रहते हैं, जिस तेजस्वीको विभावसु कहते हैं, उस सूर्य्यके उदय और अस्तको देखा। वीर पाण्डवोंने सूर्य्यके उदय और आगमनको देखा, तथा उनके तेजसे सब दिशाओंको व्याप्त देखा, वेदपाठी सदा क्रिया करनेवाले धर्म्म और पवित्रतामें निरत सत्यवादी पाण्डव लोग वहीं रह कर महारथ अर्जुनका मार्ग देखने लगे। पाण्डवोंने यह विचारा, कि हम लोग इसी स्थान पर शीघ्र अर्जुनसे मिलके प्रसन्न होंगे; इस लिये वे लोग वहीं रह कर तप और योग करने लगे। अर्जुनकी चिन्ता करते हुए और पर्व्वतोंके विचित्र वनोंको देखते हुए उनके दिन और रात वर्षके समान बीतने लगे। जब महात्मा अर्जुन धौम्यकी आज्ञासे जटा बना कर बनको गये थे, उसी दिनसे पाण्डव लोगोंकी प्रसन्नता नहीं हुई थी। उन लोगोंका चित्त जिस दिन मतवाले हाथीके समान चलनेवाले अर्जुन अपने भाई युधिष्ठिरकी आज्ञानुसार काम्यक बनसे चले थे, उसी दिनसे पाण्डव लोग शोकसे व्याकुल हो गये थे। हे भारत! जब अर्जुन इन्द्रके पास गये थे तब पाण्डवोंको एक एक दिन एक एक महीनेके समान बीतने लगा था। अर्जुन पांच वर्ष इन्द्रके स्थानमें रहे थे और उनसे सब अस्त्रोंको सीखा। जब अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, वायु, विष्णु, शिव, ब्रह्मा, परमेष्ठी, प्रजापति, यम, धाता, सूर्य्य विश्वकर्म्मा और कुबेरके शस्त्रोंको प्राप्त कर चुके, तब इन्द्रको प्रणाम और उनकी प्रदक्षिणा करके उनकी आज्ञा लेकर परम प्रीतिके सहित अर्जुन प्रसन्न होकर गन्धमादन पर आये।

१६४ अध्याय समाप्त।

यक्ष युद्ध प्रकरण समाप्त।

अथ निवात-कवच युद्ध।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, एकदिन अर्जुनकी चिन्ता करते समय पाण्डवोंने बिजलीके समान प्रकाशमान घोड़ोंके सहित आते हुए एक रथको देखा, उसको देखते ही वह लोग बहुत प्रसन्न हुए। वह रथ मातली सारथीके सहित आकाशको प्रकाश करता हुआ ऐसा शोभित होने लगा, जैसे बादलोंके बीचमें बिना धूएंकी मसाल शोभित होती है। हृदयमें माला और नवीन आभूषणोंको धारण किये उसमें इन्द्रके समान पराक्रमवाले अपने तेजसे प्रकाशमान अर्जुन बैठे थे। इस प्रकार वह रथ पर्व्वतपर पहुंचा। तब माला और मुकुटधारी बुद्धिमान अर्जुनने पहले धौम्य फिर युधिष्ठिर और पीछे भीमसेनके चरणोंको छूकर प्रणाम किया। उसी समय नकुल और सहदेवने अर्जुनको प्रणाम किया। फिर अर्जुन द्रौपदीसे मिलकर अनन्तर युधिष्ठिरके पास नम्र भावसे बैठे। अनन्तर पराक्रमवाले युधिष्ठिर अर्जुनसे मिल-कर प्रसन्न हुए और अर्जुनने भी अपने भाईकी बहुत प्रशंसा कर उनको प्रसन्न किया, जिसपर चढ़कर नमुचिके मारनेवाले इन्द्रने दैत्योंके सात गणोंको नाश कियाँ था, महा पराक्रमी पाण्डवोंने उस इन्द्रके रथको प्रदक्षिणा की। प्रसन्नचित्त पाण्डवोंने मातलीका सत्कार इन्द्रके समान किया और सब देवतोंका यथा योग्य कुशल पूछा, मातलीने भी पाण्डवोंको पुत्रके समान शिक्षा दी। फिर असमान तेजवाले रथपर चढ़कर इन्द्रके पास चले गये। उनके जानेके पश्चात पुरुष और देवतोंमें श्रेष्ठ इन्द्रके पुत्र राक्षसोंके मारनेवाले अर्जुनने युधिष्ठिरकी शत्रुओंके दिये हुए उत्तम रूपवाले धनदिये। अनन्तर सूर्य्यके समान प्रकाशवाले अनेक आभूषण अपनी प्यारी द्रौपदीको दिये अनन्तर सूर्य्य, चन्द्रमा, और अग्निके समान प्रकाशवाले कुरुकुल श्रेष्ठ पाण्डव और

ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ मुनियोंके बीचमें बैठकर सब पहिली कथाओंको कहने लगे, कि मैंने इस प्रकार इन्द्र, वायु और सचात शिवसे शस्त्र सीखे। मैंने अपने शील और समाधिके बल इन्द्रके सहित देवतोंको प्रसन्न किया, इस प्रकार युद्धकर्म्मवाले अर्ज्जुनने अपने स्वर्गमें रहनेकी कथा संचेपसे कही, अनन्तर नकुल और सहदेवके सहित सो रहे।

१६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब रात बीत गयी, तब अर्ज्जुनने अपने भाइयोंके सहित महाराज युधिष्ठिरको प्रणाम किया, उसी समय आकाशमें सब प्रकारके देवतोंके बाजेका शब्द सुना। हे भारत! उसी समय रथके पहियोंके शब्द आने लगे। इसी शब्दके संग सांप, हरिन और पच्चियों का शब्दभी आने लगा, पीछे सूर्य्यके समान प्रकाशमान विमानों पर बैठे हुए गन्धर्व्व और अप्सरा इन्द्रको घेरके आने लगीं। उसी समय उत्तम घोड़ोंसे युक्त, सोनेके बने हुए, मेघके समान शब्दवाले रथ पर चढ़ कर अपने तेजसे प्रकाशमान इन्द्र पाण्डवोंके पास आये, सहस्र नेत्रवाले इन्द्र पाण्डवोंके पास आकर रथसे उतरे। महात्मा देवराज इन्द्रको देख धर्म्मराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित उनके पास गये। बहुत दच्चिणा देनेवाले युधिष्ठिरने विधिके अनुसार यथा योग्य इन्द्रकी पूजा की। महातेजस्वी धनञ्जय भी इन्द्रको प्रणाम करके उनके पास दासके समान खड़े हो गये,महातेजस्वी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने पास खड़े हुए अर्ज्जुनका माथा सूंघा। पापरहित जटाधारी इन्द्रकी तपस्या करनेवाले अर्ज्जुनको देख कर और इन्द्रको पूजाकरके बहुत प्रसन्न और दीन राजासे बुद्धिमान इन्द्र बोले,हे कुन्तीनन्दन! हे पाण्डव! हे राजन्! तुम इस सब पृथ्वीका राज्य करोगे। तुम्हारा कल्याण हो, तुम फिर काम्यक बनको चले जाओ। हे राजन्! पाण्डुनन्दन अर्ज्जुनने बहुत यत्न करके हमसे सब शस्त्रोंको सीखा है, इस तीन लोकमें इनको जीतनेवाला कोई नहीं है। सहस्र नेत्रवाले इन्द्र कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर महाऋषियोंसे स्तुति सुनते हुए प्रसन्नतासहित स्वर्गको चले गये। जो विद्वान् कुवेरके घरमें रहनेवाले पाण्डव और इन्द्रके इस समागमको ब्रह्मचारी व्रतधारी होकर एकवर्ष तक पढ़ता है, वह रोगरहित और सुखी होकर सौ वर्ष जीता है।

१६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, हे जनमेजय! जब इन्द्र चले गये, तब अपने भाई और द्रौपदीके सहित अर्ज्जुनने महाराज युधिष्ठिरको प्रणाम किया। महाराज प्रसन्न होकर अर्ज्जुनका माथा सूंघ कर गदगद वाणीसे कहने लगे, हे अर्ज्जुन! तुमने इतना समय स्वर्गमें क्योंकर बिताया? तुमने इन्द्र और शिवको कैसे प्रसन्न किया, तुमने किस प्रकार शस्त्रोंको प्राप्त किया। हे शत्रुनाशन! भगवान् इन्द्रने हमारे आगे कहा, कि हम अर्ज्जुनसे बहुत प्रसन्न हैं। तुमने कौनसा उनका प्रियकार्य्य किया? हे महातेजस्वी! हे पापरहित! हम इन सब कथाओंको विस्तारपूर्व्वक सुना चाहते हैं। हे धनञ्जय! हे शत्रुनाशन! तुमसे इन्द्र और शिव कैसे प्रसन्न हुए थे? तुमने इन्द्रका कौनसा प्रियकार्य्य किया था, तुम इन सब कथाओंको हमसे कहो। अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! हम इन सब कथाओंको तुमसे कहते हैं, हमने जैसे भगवान शिव और इन्द्रको प्रसन्न किया था सो आप सुनिये। हे शत्रुनाशन! आपकी बताई हुई विद्याको पढ़कर आपकी आज्ञानुसार तपकरनेकी इच्छासे मैं बनको चला। मैं काम्यक बनसे चल कर भृगुतुङ्ग पर्व्वत पर पहुंचा और वहां तप करने लगा, एक दिन

वहां रहने पर दूसरे दिन एक ब्राह्मण मिले। हे कुन्तीनन्दन! उन्होंने मुझसे पूछा तुम कहां जानेकी चाहते हो; तब मैंने उससे सब सत्य सत्य कह दिया। हे राजन्! उनने मेरी सत्यवाणीको सुनकर प्रीतिके सहित मेरी पूजा की और मुझसे अत्यन्त प्रेम किया, अनन्तर प्रसन्न होकर मुझसे कहने लगे, हे भारत! तप करो; तपस्याके बलसे तुम शीघ्रही शिवको देखोगे, तब मैं उनके वचनसे हिमाचल पर चढ़ गया, वहां जाकर एक महीने तक फल और मूल खाकर तपस्या करने लगा। दूसरे महीनेकोभी मैंने केवल जल खाकर बिताया। हे पाण्डुनन्दन! मैं तीसरे महीनेमें निराहार होकर तप करने लगा, मैंने चौथे महीनेमें ऊर्द्ध-बाहु होकर बिता दिया, परन्तु मेरे प्राण उस महीनेमेंभी नहीं निकले, यह बड़ा आश्चर्य हुआ, पांचवें महीनेका एक दिन बीतनेपर एक प्राणी शूकरका रूप बनाकर मेरे पास आया। वह अपने हाथ और खुरोंसे पृथ्वीको खोदने और छातीसे रगड़ने लगा तथा बार बार घूमने लगा, उसके पीछेही एक किरात धनुष बाण और खड्गको धारण किये अनेक स्त्रियोंके सहित मेरे पास आया, उसी समय मैंने अक्षय तूणीर और धनुषको धारण करके भयानक शूकरको एक बाणसे मारा, उसी समय उस किरातने भी अपने धनुषको खींचकर मेरे हृदयको कंपाते हुए उस सूअरको एक कठोर बाण मारा। हे राजन्! तब उस किरातने मुझसे कहा कि सूअरको मैंने पहिले मारना चाहा था, तुमने मृगयाधर्म्मके विरुद्ध उसको क्यों मारा? अब हम इन कठिन बाणोंसे तुम्हारे अभिमानको नाश करदेते हैं; खड़े रहो, ऐसा कह कर उस बड़े शरीरवाले धनुषधारीने मुझे कठोर बाण मारे, मैंने भी उसको अपने बाणोंकी वर्षासे छा लिया, अनन्तर मैंने प्रकाशमान और मन्त्रयुक्त बाणोंसे उसको ऐसा छा लिया, जैसे वज्रसे इन्द्र पर्व्वतको। थोड़ी देरमें उसके एक शरीरके सैकड़ों और हजारों शरीर होगये, मैंने उन सबको अपने बाणोंसे मारना आरम्भ किया। हे महाराज! फिर सब शरीर मिलकर एकही किरात होगया। मैं फिर उसको बाण मारने लगा, कभी वह बड़े शरीर और छोटे सिर वाला और कभी वह छोटे शरीर बड़े सिर वाला होकर मुझसे युद्ध करने लगा। हे भरतकुलसिंह! जब मैं उसको अपने बाणोंसे जीतनेमें असमर्थ हुआ तब मैंने वायुके अस्त्र चलानेकी इच्छा करी; परन्तु यह अस्त्र भी उसे न मार सका, यह देख मुझे महा आश्चर्य हुआ। हे महाराज! फिर मैंने विशेष रूपसे उस किरात पर अपने शस्त्र चलाये। कभी स्थूलाकर्षन और कभी घोर बाणोंके जाल-से उसको छा लिया, मैंने कभी पतंगे कभी पत्थरोंकी वर्षा की। हे महाराज! उसने मेरे सब शस्त्रोंको ग्रासकर लिया। अनन्तर मैंने ब्रह्मशिर अस्त्र चलाया। मेरे उस महा अस्त्रके चलतेही उसमें अनेक बाण निकल कर बढ़ने लगे। अनन्तर उस अस्त्रके तेजसे सब आकाश और दिशा प्रकाशमान हो गयीं, हे राजन्! महा-तेजस्वी किरातने वह ब्रह्मशिर अस्त्र भी शान्त कर दिया। उसके व्यर्थ होतेही मुझको बहुत भय लगा, पर मैंने अक्षय तूणीर और धनुष लेकर फिर उस किरात पर बाण चलाये, परन्तु वह उन बाणों को भी खागया। जब मेरे सब अस्त्र और शस्त्र नाश होगये, तब मैंने उससे बाहुयुद्ध किया। कभी तमाचे और कभी मुक्कोंसे मैंने उस किरातको मारा, उस समयके पश्चात मैं मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर गया। हे महाराज! वह किरात इसके पश्चात हंसकर स्त्रियोंके सहित अन्तर्द्धान होगया। तब मुझे बहुत आश्चर्य्य हुआ। हे महाराज! इसके पश्चात भगवान

शिवने दूसरा रूप बनाया और अद्भुत वस्त्र धारण करके मेरे पास आये! देवतोंके स्वामी भगवान शिवने किरातका रूप छोड़कर अपना दिव्यरूप धारण किया और मेरे पास आकर खड़े हो गये, मैंने देखा कि भगवान शिव पार्व्वतीके सहित सर्प और पिनाक-धनुषको धारण किये खड़े हैं। शूलधारी भगवान शिवने मुझसे युद्धमें प्रसन्न होकर कहा कि हे शत्रुनाशन! मैं तुमसे प्रसन्न हूं। तब उन्होंने दो अक्षय तूणीर और धनुष मुझको दिया और कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान मांगो। श्रीशिवजी बोले, हे कुन्तीनन्दन! हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं: कहो हम तुम्हारा कौन काम करें। हे वीर! जो तुम्हारी इच्छा हो, सो मांगो। तब मैंने हाथ जोड़कर उनको शिर से प्रणाम करके शस्त्रोंका वरदान मांगा, तब मैंने हंसकर भगवान शिवजीसे कहा, कि हे भगवान्! मैं सब देवतोंके वाणोंको जानना चाहता हूं। तब भगवान शिवजीने मुझसे कहा कि हमने तुमको यह वरदान दिया; यह मेरा रुद्रास्त्र है, हे पाण्डव! सो हम तुमको देते हैं। तब शिवने हमको पाशुपत अस्त्र दिया। तब भगवान महादेवने मुझसे प्रसन्न होकर कहा कि इस शस्त्रको कभी भी किसी पुरुषके ऊपर न चलाना, इसके चलातेही सब जगत थोड़ा तेजवाला होनेसे भस्म हो जायगा। हे धनञ्जय! जब तुमको कोई बलवान शत्रु पीड़ा दे, तबही इसको चलाना, अत्यन्त वाणोंकी वर्षा हो, तभी इसको चलाना। इस शस्त्रको कोई नाश नहीं करता, इस शस्त्रके समान कोई दूसरा शस्त्र नहीं है। हे महाराज! जब मुझसे श्रीशिवजी प्रसन्न हुए, तब वह शस्त्र मूर्त्ति धारण करके मेरे आगे आखड़ा हुआ। वह शस्त्र शत्रुओंका नाश करनेवाला और सेनाओंका काटनेवाला है। वह शस्त्र बड़ा घोर कठोर और राक्षसोंका नाश करने वाला है, तब मैं शिवजीकी आज्ञासे वहीं रहने लगा और मेरे देखतेही श्रीशिवजी वहीं अन्तर्द्धान होगये।

१६७ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! मैं उस रात्रि भर प्रसन्न होकर वहीं रहा। महात्मा शिवने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की। जब प्रायः काल-हुआ, तब मैंने प्रातःकालकी संध्या की; फिर उसी ब्राह्मणको देखा जिसको पहले देखा था, तब मैंने उससे सब कथा कह सुनायी। मैंने उससे कहा, कि हमको साक्षात शिवके दर्शन हुए हैं। हे राजेन्द्र! तब उस ब्राह्मणश्रेष्ठने मुझसे प्रसन्न होकर कहा, कि तुमने शिवका ऐसा दर्शन किया, जैसे पहले और किसीने नहीं किया था, हे पापरहित! तुम इसी स्थानमें यम आदि लोकपालोंके सहित इन्द्रको देखोगे और वे तुमको अनेक शस्त्र देंगे। हे राजन्! वह ब्राह्मण ऐसा कहकर हमसे लपट गया। अनन्तर वह सूर्य्यके समान ब्राह्मण अपनी इच्छानुसार चला गया, उसी दिन दोपहरके पश्चात् पवित्र वायु बहने लगा, मुझे ऐसा जान पड़ा, कि यह लोक नवीन होगया। मेरे पास हिमाचल पर्व्वतके ऊपर दिव्य सुगन्धोंसे भरी हुई अनेक नवीन माला प्रगट होने लगीं, उसके पश्चात मेरे चारों ओर दिव्य और बहुत शब्दवाले बाजे बजने लगे। उसके पश्चात् मैंने इन्द्रकी मनोहर स्तुति सुनी, अनन्तर देवतोंके राजा इन्द्रके आगे अनेक गन्धर्व्व और अप्सरा गीतगाने लगीं। विमान-पर चढ़े हुए मरुतगण इन्द्रके अनुचर और स्वर्गमें रहनेवाले देवता मेरे पास आये, इन्द्रके पीछे भूषणोंसे भूषित घोड़ोंसे युक्त रथपर बैठे हुए शची और सब देवतोंके सहित इन्द्र आये। हे महाराज! उसी समय अपने तेजसे प्रकाश-मान मनुष्यवाहन कुबेरने भी मुझे दर्शन दिये,

मैंने दक्षिणकी दिशामें बैठे यमको देखा; वरुण और इन्द्रको भी अपने अपने स्थानों पर बैठे देखा। हे महाराज! हे पुरुषसिंह! तब उन सब देवतोंने मुझे प्रसन्न करके कहा, हे सव्यसाची! हम सब लोकपाल तुम्हारे पास आये हैं तुम हमारे दर्शन करो। तुमने देवतोंके कामके लिये शिवका दर्शन किया है, हम लोगोंसे भी शस्त्रोंको ग्रहण करो। हे महाराज! तब मैंने प्रसन्न होकर उन सब देवतोंको प्रणाम किया और उनसे अनेक प्रकारके शस्त्रोंको लिया। हे शत्रुनाशन! जब मैं सब अस्त्रोंको ग्रहण कर चुका। तब सब देवता लोग अपने स्थान पर चले गये, देवतोंके राजा इन्द्र भी अपने उत्तम प्रकाशवाले रथ पर चढ़कर मुझसे बोले, कि हे अर्ज्जुन! तुमको भी स्वर्गको चलना चाहिये। हे धनञ्जय! तुम्हारे आनेके पहिलेही हम सब बातोंको जान गये थे। हे भरतकुलसिंह! इसके पश्चात हम तुमको अपना दर्शन देंगे। हे पाण्डव! तुमने पहले बहुत तीर्थोंमें स्नान किया है, और तुमको चलना चाहिये, तुमको फिरभी उत्तम तप करना उचित है। हे शत्रु-नाशन! तुमको अवश्यही स्वर्गमें चलना होगा। हमारी आज्ञासे मातली आवेंगे और तुमको ले जायंगे, तुमको महात्मा मुनीश्वर और देवता लोग जानते हैं। तब मैंने इन्द्रसे कहा, हे भगवान् हे देवतोंके स्वामी! आप हमसे प्रसन्न हूजिये, हम शस्त्रविद्याके लिये आपको अपना गुरु बनाते हैं। इन्द्र बोले, हे शत्रुनाशन! हे तात! तुम सब शस्त्रोंके जाननेवाले और निठुर कर्म्म करनेवाले होगे। हे पाण्डव! जिस काम के लिये तुम यहां आये हो, वे सब शस्त्र तुमको मिलेंगे। तब मैंने कहा कि, हे शत्रुनाशन! हम अस्त्र प्रतिघातके विना इन दिव्य शस्त्रोंको मनुष्यों पर कभी न चलावेंगे, मैं कभीभी महाअस्त्रोंके चलाये विना इन अस्त्रोंको नहीं चलाऊंगा। हे देवनाथ! आप उन सब शस्त्रोंको हमें दीजिये, इसके पश्चात् मैं उन लोकोंको जाऊंगा, जिनको शस्त्र जाननेवाले जाते हैं। इन्द्र बोले हे धनञ्जय! मैंने जो यह सब कहा, सो तुम्हारी ही परीक्षाके लिये कहा, तुम हमारे पुत्र हो, इस लिये यह सब कहा। हे भारत! तुम हमारे घरमें चल कर सब शस्त्रोंको सीखो, वहां तुमको वायु, अग्नि, वसु, वरुण और मरुत गण अस्त्र सिखावेंगे। तुम साध्य, पितामह, गन्धर्व्व, नाग यक्ष, राक्षस, वैष्णव नैऋत और हमारे सब शस्त्र सीखोगे। हे कुरुनन्दन! जितने शस्त्र मुझको आते हैं, उन सबको तुम सीख लो। ऐसा कह कर इन्द्र वहीं अन्तर्द्धान हो गये। एक दिन हमने उत्तम घोड़ोंसे युक्त इन्द्रके रथको देखा वह रथ दिव्य मायामय और मातलीसे युक्त था। हे महातेजस्वी महाराज! जब सब लोकपाल चले गये, तब मातलीने मुझसे कहा, कि तुमको देवराज इन्द्र देखना चाहते हैं। हे महाबाहु! अब तुम चलनेको उपस्थित हो। उसके पश्चात् सब काम करना, तुम इसी शरीरसे स्वर्गको चलो और दिव्य लोकोंको देखो। हे भारत! सहस्र नेत्रवाले इन्द्र तुमको देखना चाहते हैं। जब मातलीने ऐसा कहा, तब मैं वन और हिमाचलसे आज्ञा ली। अनन्तर मैं उस पर्व्वतकी प्रदक्षिणा करके रथपर चढ़ स्वर्गको चला और मातलीनेभी उन वायुके समान चलनेवाले घोड़ोंको हांका। घोड़ोंकी विद्याको जाननेवाले मातलीने रथमें बैठे हुए मेरे मुखको देखा। हे राजन्! मातली बोले, कि यह मुझको परम आश्चर्य दीख रहा है, कि इस दिव्य रथमें स्थित होकर तुम्हारा निजस्थानसे एक पदभी विचलित नहीं होता है, हे भरतर्षभ! घोड़ोंके प्रथमोत्पतन कालमें देवराजको भी विचलित भावापन्न देखा गया

है; किन्तु तुम ऐसे भ्रमणशील रथमें यथास्थानमें ही बैठे हो; इससे तुम्हारे ये सब कार्य्य इन्द्रको भी अतिक्रम किये हैं, ऐसाही मुझे बोध होता है। ऐसा कह कर मातलीने आकाशमें रथ हांका और स्वर्गमें पहुंचा। हे महाराज! मातलीने मार्गमें मुझे अनेक विमान दिखाये तब वह रथ घोड़ोंके सहित आकाशमें चलने लगा, तब ऋषि और देवता लोग उस रथकी पूजा करने लगे, तब मैंने इच्छानुसार चलनेवाले अनेक ऋषियोंको देखा मैंने महातेजस्वी गन्धर्व्व और अप्सरोंके प्रभावोंको देखा; देवतोंके नन्दन आदिक बागभी देखे। इन्द्रके सारथी मातलीने मुझको अमरावती और इन्द्रके घरको दिखाया। वह अमरावतीपुरी दिव्य कामके देनेवाले वृक्षोंसे शोभित थी वहां न सूर्य्यका प्रकाश, न गर्मी, न सर्दी, न थकाई, न धूल, न बुढ़ापा, न शोक न दीनता, और न दुर्व्वलता थी। हे शत्रुनाशन! वहां देवतोंको ग्लानिभी नहीं थी, न क्रोध, न लोभ और न राक्षसोंका प्रवेश। हे राजन्! उस अमरावती पुरीके सब प्राणी सदा सन्तुष्ट रहते हैं। वहांके वृक्ष सदा फलनेवाले और हरे पत्तोंसे युक्त रहते हैं वहांकी पोखर अनेक प्रकारके सुगन्धवाले कमलोंसे भरी हुई, पवित्र और सुगन्धवाले वायुसे युक्त रहते हैं। वहांकी भूमि अनेक रत्नोंसे खिचे हुए फूलोंसे विराजमान थी। वहां अनेक हरिन और पक्षी मोहे मीठे स्वरोंसे शब्द कर कर रहे थे। अनेक देवता लोग विमानोंमें बैठे हुए आकाशमें घूम रहे थे; तब मैंने वसु, रुद्र साध्य और मरुत लोगोंको देखा। मैंने अश्विनीकुमार और सूर्य्य आदि सब देवतोंकी पूजा की। उन्होंने भी मुझे वीर्य्य, यश, तेज, बल, शस्त्र और विजय में निपुण जानकर मेरी पूजा करी और कहा कि, देव और गन्धर्व्व पूजित अकरावतीपरीमें प्रवेश करो, तब मैं हाथ जोड़ कर देवतोंके राजा हजार नेत्रवाले इन्द्रके पास गया उन्होंनेभी प्रसन्न होकर मुझे अपना आधा आसन दिया। इन्द्रने बहुत आदरके सहित हमारे शरीरको स्पर्श किया। मैं वहां देवता और गन्धर्वोंके सहित निवास करने लगा और शस्त्रोंको सीखने लगा। वहां विश्वावसुका पुत्र चित्रसेन मेरा मित्र हो गया! हे राजन्! उसीने मुझे नाचने और गानेकी सब विद्या सिखा दी। मैं जब सब शस्त्रोंको सीख चुका, तब आदर सहित स्वर्गमें रहने लगा। मैं इन्द्रके घरमें रहता हुआ, अपनी इच्छानुसार सब सुखोंको भोगने लगा। मैंने उत्तम गीत और बाजोंके शब्द सुने तथा नाचती हुई उत्तम उत्तम अप्सराओंकोभी देखा। हे भारत! उन सब बातोंको तुच्छ समझा और केवल शस्त्र सीखनेहीको उत्तम समझता रहा, तब इस कामसे इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हुए। हे राजन्! इस प्रकारसे मैंने इस समयको स्वर्गमें बिताया, जब इन्द्रको यह विश्वास हो गया, कि इनको सब शस्त्रोंकी विद्या आगई, तब उन्होंने अपने हाथसे मेरे शिरको स्पर्श करके कहा, कि हे, वीर! तुम्हारे समान कोई अस्त्र जाननेवाला नहीं होगा, क्योंकि तुम सदा सावधान, निपुण सत्यवादी, जितेन्द्रिय, ब्राह्मणोंके-पूजनेवाले और शस्त्रोंको जाननेवाले हो। तुमको अब युद्धमें देवताभी नहीं जीत सकते हैं! और मनुष्योंकी तो बातही क्या है। तुम अप्रमेय और युद्धोंमें जीतनेके अयोग्य हो तुमने पन्द्रह शस्त्रोंको प्राप्त किया है। हे कुन्तीनन्दन! पांचो विधियोंमें तुम्हारे समान कोई नहीं है। तुम शस्त्रोंको चलाना और लौटाना दोनों बातोंको जानते हो, तुम प्रायश्चितके विधानकोभी जानते हो। हे शत्रुनाशन! तुम दूसरेके वाणसे हारे हुए अपने वाणको तेज कर सकते हो। इस समयमें तुम कुछ गुरुका काज करो। हम जानते हैं, कि तुम इस कामको कर सको, इसीसे तुमसे कहते हैं।

तब मैंने देवराज इन्द्रसे कहा, कि जो काम मेरे करने योग्य है, उसको आप कृपाही सम-भिये। तब बल और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने हंस कर मुझसे कहा, कि कोई काम ऐसा नहीं है कि जिसको तुम न कर सको, आज कल मेरे शत्रु निवातकवच बहुत बढ़ गये हैं। वे लोग समुद्रके बीचमें दुर्ग बना कर रहते हैं। इनकी संख्या तीन करोड़ है और उनका रूप, बल तथा तेज समानही है। हे कुन्तीनन्दन! तुम वहां जाकर उन सबको जीतो; इससे तुम्हारे गुरु प्रसन्न होंगे। तब मोरके समान रंगवाले घोड़ोंको मातलीने रथमें जोड़ा। उस महातेजवाले दिव्य रथको इन्द्रने मुझे दिया और इस दिव्य किरीटको अपने हाथसे मेरे सिर पर बांधा, इन्द्रने मुझे अपने समान आभूषण और उत्तम रूपवाले इस अभेद्य कवचको पहिराया। मेरे गाण्डीव धनुष पर इस न टूटनेवाले रोदेकोभी चढ़ा दिया; तब मैं उस सुन्दर रथ पर बैठ कर वहांसे चला, इसी रथ पर बैठ कर पहले इन्द्रने विरोचनके पुत्र बलिको जीता था। उस रथके शब्दसे सब देवता सचेत होगये और उन्होंने मुझहीको इन्द्र मान लिया और मेरे सङ्ग चले। मुझको देखकर देवतोंने पूछा, कि हे अर्ज्जुन! तुम कौन काम करनेको जातेहो? तब मैंने सब युद्धका समाचार उनसे कह सुनाया। मैं कहने लगा, कि हे महाभाग पाप रहित देवतो! मैं निवातकवच दैत्योंको मारने जाता हूं, तुमलोग हमे आशीर्व्वाद दो। तब सब देवतोंने प्रसन्न होकर मेरी वैसी स्तुति की जैसी इन्द्रकी करते हैं। देवता बोले, कि इन्द्रने इसी रथपर चढ़कर शम्बर दैत्यको मारा था और इसीपर चढ़कर नमुचि, बल, वृत्र, प्रह्लाद और नरकासुरको मारा था। इन्द्रने इस रथपर चढ़कर सहस्रों, लाखों, करोड़ों और अर्बों दैत्योंका मारा है। हे कुन्तीनन्दन! तुमभी इस रथपर चढ़कर युद्धमें निवातकवच दैत्योंको अपने पराक्रमसे मारोगे; ऐसेही इन्द्रभी युद्धमें दैत्योंको मारा करते हैं। यह सब शङ्खोंमें श्रेष्ठ शङ्ख है, इसीसे तुम सब दैत्योंका जीतोगे। महात्मा इन्द्रने पहले समयमें इसी शङ्खसे सब लोकोंको जीत लिया था। तब मैंने देवतोंकी स्तुति सुनकर इस देवदत्त सङ्खको ग्रहण किया। मैं कवच, शङ्ख वाण और धनुषको धारण करके युद्धकी इच्छासे घोर दानवोंके स्थानको चला।

१६८ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! मैं महाऋषियोंसे स्तुति सुनता हुआ समुद्रपर पहुंचा; मैंने घोररूपवाले जलके स्वामी भयानक उदधि देखा। उसमें फेनके सहित बड़ी बड़ी तरङ्ग उठती ऐसी जान पड़ती थीं, मानो पर्व्वत बह रहे हैं। समुद्रमें सहस्रों नाव रत्नोंसे भरी हुई खड़ी थीं। उसमें बड़ी बड़ी मछरी, कच्छप मगर और पर्व्वतके समान बड़े बड़े ग्राह घूम रहे थे। जलमें डूबे हुए सहस्रों शङ्ख ऐसे दीख पड़ते थे, जैसे रात्रिमें पतले मेघसे ढके हुए तारे दीखते हैं; समुद्रमें सहस्रों रत्न दिखाई देते थे। उसमें बड़ा घोर वायु उठता था और सब उत्तम समुद्रका वेग दिखाई देता था। मैंने समुद्रके बीचमें दानवोंसे भरा हुआ एक नगर देखा, वहां जातेही रथयोगको जाननेवाले मातली पातालको चले; उस समय उनके रथके शब्दसे सब प्राणी कांपने लगे। उस मेघके समान रथके शब्दको सुनकर राक्षसोंने जाना कि इन्द्र आते हैं। तब वे सब उद्विग्न होगये। सब दानव सावधान होकर धनुष और वाणको धारण करके खड़े होगये। उनलोगोंने अत्यन्त डरकर खड्ग, शूल, फांसे, गदा और मूशल धारण करके अपने नगरके द्वारोंको बन्द कर दिया, उन लोगोंने इस प्रकार अपनी रक्षा·

को, कि कोईभी न दीखने लगा। तब मैंने प्रसन्न होकर महा शब्दवाले देवदत्त शंखको धीरे धीरे बजाया, उस शब्दके आकाशमें जानेसे घोर गुञ्जार उठी, उस शब्दसे बड़े बड़े समुद्रके जन्तु डरके समुद्रमें छिपने लगे। तब निवातकवच लोग अनेक विचित्र शस्त्रोंको धारण करके तथा उत्तम उत्तम भूषणोंको धारण करके मेरे आगे आये। वे लोग लोहेके भाले, गदा, मूशल, पट्टिश, खड्ग और चक्रको धारण करके लड़नेको आये। शतघ्नी, भुशुण्डी और खड्गको धारण करके सहस्रों राक्षस लोग बाहर निकले। हे भरतकुलसिंह! तब मातलीने मार्गको खूब विचार कर रथको समान भूमिमें स्थापन किया। उन शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंके हांकनेसे और शीघ्र चलनेसे उनकी गतिको कोई नहीं जान सका, यह देख मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। तब उन दानवोंने सहस्रों प्रकारके बाजे बजाये और अपने घोर शब्दसे सब दिशाओंको पूरित करने लगे। उस शब्दको सुन कर समुद्रमेंसे पर्व्वतके समान सहस्रों मछरी उछलने लगीं, तब सैकड़ों हजारों दानव लोग तीक्ष्ण बाणोंको छोड़ते हुए मेरी ओर दौड़े। हे भारत! उस समय मेरा और उन दानवोंका घोर युद्ध हुआ, उस घोर युद्धमें अनेक निवातकवच मरने लगे। तब देवर्षि दानवऋषि सिद्ध और ब्रह्मऋषियोंके झुण्ड आकाशसे उस घोर युद्धको देखने आये, वे लोग मेरी जीत चाह कर मीठी और अनुकूल वाणीसे मेरी स्तुति करने लगे, ऐसेही तारकासुरके युद्धमें मुनियोंने इन्द्रकी स्तुति की थी।

१६८ अध्याय समाप्त।

अर्जुन बोले, हे महाराज! तब वे सब निवातकवच लोग शस्त्रोंको धारण करके मेरी ओर दौड़े, महारथ निवातकवचोंने गर्ज्ज कर मेरे रथके मार्गको रोक दिया और मेरे चारों ओर खड़े होकर मेरे ऊपर शस्त्र बरसाने लगे। अनेक महाबलवान दानव लोग मेरे ऊपर शूल, पट्टिश और भुशुण्डी चलाने लगे। वह शूल, गदा और शक्तियोंकी घोर वर्षा उनके हाथोंसे छूट कर मेरे रथ पर गिरने लगी। बहुत निवातकवच राक्षस युद्धमें मेरी ओर दौड़े। वे लोग कालके समान रूपवाले घोर शस्त्रोंको धारण किये मेरी ओर आये। मैंनेभी युद्धमें एक एक राक्षसोंके शरीरमें शीघ्र चलनेवाले तीक्ष्ण बाणोंको गाण्डीव धनुष पर चढ़ा कर मारे। मेरे तीक्ष्ण बाणोंने उन सब राक्षसोंको युद्धमें विमुख कर दिया। तब मातलीने उन शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंको हांका, वे वायुके समान शीघ्र चलनेवाले घोड़े अनेक मार्गोंसे मातलीके हांकनेके अनुसार चलते हुए अनेक राक्षसोंको नाश करने लगे, मातलीने उस रथके पहियेके नीचे दबाकर सैकड़ों राक्षसोंको मारा। वे राक्षस लोग छोटे जन्तुओंके समान उस पहियेके नीचे दबने लगे। घोड़ोंके खुर, रथके पहिये, और मेरे बाणोंका घोर शब्द होने लगा, उस शब्दसे सैकड़ों दानव मरने लगे। कोई धनुष धारण किये हो मर गया; किसीका सारथी मरा तो वह आपही घोड़ोंको हांकने लगा। उन शस्त्र चलानेवाले दानवोंने चारों ओरसे मुझे घेर कर शस्त्र चलाये। तब तो मेरा मन घबरा उठा, उस समय मैंने मातलीके विचित्र बलको देखा। उन्होंने बहुत यत्नसे शीघ्र चलनेवालों घोड़ोंको स्थिर किया, तब मैंने उन राक्षसोंको शस्त्रोंके सहित सहस्रों दलके और विचित्र शस्त्रोंसे काट डाला। हे शत्रुनाशन! मेरे इस अद्भुत कर्मको देखकर इन्द्रके सारथी वीर मातली बहुत प्रसन्न हुए। कोई राक्षस घोड़ोंके खुर और रथके पहियोंसे चोट खाकर भाग गये और कोई कोई भाग कर फिर लौट आये, निवातकवच दानव लोग हमारा डाह करते पहुए वीरोंडाणोंसे न मेरे

ऊपर वाणोंकी वर्षा करने लगे। तब मैंने सहस्रों और सैकड़ों दानवोंको अपने हलके और विचित्र वाणोंसे मारा, मैंने उन वाणोंको ब्रह्मास्त्र मन्त्रसे मन्त्रित करके चलाया था, तब वे महारथ लोग मेरे वाणोंसे पीड़ित होकर क्रोधसे व्याकुल हो गये। वे लोग इकट्ठे होकर शक्ति और शूलोंसे मुझे मारने लगे। हे भारत! तब मैंने इन्द्रके प्यारे महातेजस्वी माधव नामक शस्त्रको चलाया, तब मैंने उस शस्त्रके बलसे उन राक्षसोंके छोड़े हुए सहस्रों खड्ग, त्रिशूल, और तोमरोंको काट दिया। उनके सब शस्त्रोंको काट कर मैंने क्रोधसे उन एक एक राक्षसोंके शरीरमें दस दस वाण मारे, उस समय गाण्डीव धनुषसे भौंरोंके समान वाण छूट रहे थे, ऐसा देख मातली मेरी प्रशंसा करने लगा और उन दानवोंके वाणभी ऐसेही छूट रहे थे, मातली उनकी भी प्रशंसा करने लगे, तब मैंने अपने वाणोंसे उन सबको काटना आरम्भ किया। वे राक्षस मुझसे पीड़ित होकर फिर इकट्ठे हुए और चारों ओरसे मेरे ऊपर बड़े बड़े वाण बरसाने लगे। तब मैंने अपने वाणोंसे उनके सब वाणोंको काट दिया, फिर शीघ्र चलनेवाले प्रकाशमान वाण उनके शरीरोंमें मारे, वाण लगनेसे उनके शरीर कट गये और रुधिर बहने लगा, उस समय उनकी शोभा ऐसी दिखाई देती थी, जैसे वर्षाकालमें पर्व्वतोंके शिखरोंकी। इन्द्रके वज्रके समान कठोर और सीधे चलनेवाले मेरे वाणोंसे राक्षस लोग घबड़ा गये, मेरे वाणोंसे उनके शरीरोंके सौ सौ टुकड़े हो गये उनके बल और तेज क्षीण हो गये। तब वे लोग मुझसे मायायुद्ध करने लगे।

१७० अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! तब मेरे ऊपर चारों ओरसे पर्व्वतके समान शिला बरसने लगीं; उनसे मुझको बहुत पीड़ा हुई। मैंने सबको वज्रके समान कठोर इन्द्रके मंत्रसे युक्त वेगवाले घोरवाणोंसे काट दिया। जब शिलाओंकी वर्षा कट गयी, तब अग्नि बरसने लगीं; उनके सङ्गही आगके पतङ्गोंके समान पत्थरका चूरा बरसने लगा। जब वह वर्षा बन्द हुई, तो बहुत पानी बरसने लगा, उन आकाशसे गिरती हुई सहस्रों जल धाराओंसे दिशा छागयी। जलधारा गिरने, घोर वायुके शब्द और मेघोंके गर्ज्जनसे दैत्योंको कुछभी न दीख पड़ा। वे धारा आकाश और पृथ्वीमें छा गयी थीं। इससे मुझे बहुत भ्रम हुआ; वे निरन्तर बरसने लगीं; तब मैंने इन्द्रके बताये हुए दिव्य प्रकाशमान और घोर शोषण अस्त्रको चलाया। उसके चलतेही वह जल सूख गया। जब मैंने पत्थर, वायु अग्नि और जलको नष्ट कर दिया, तब दानवोंने फिर मायाको प्रकाश किया और अग्नि बरसाने लगे। तब मैंने जल वाणसे उस अग्निको बुझा दिया और पर्व्वत अस्त्रसे वायुके वेगको नाश कर दिया। हे महाराज! जब मैंने इस सब मायाको नष्ट कर दिया, तब युद्धमें मतवारे सब दानवोंने मिलकर अनेक माया प्रगट की; तब अग्नि, वायु और पर्व्वतोंके अनेक अस्त्र मेरे ऊपर बरसने लगे, वे सब शस्त्र महाघोर रूपवाले और भयानक थे, वह मायामयी शस्त्रकी वर्षा मुझे युद्धमें बहुत पीड़ा देने लगी; अनन्तर सब ओर घोर अन्धकार फैल गया। उस घोर और कठोर अन्धकारसे सब जगत् छा गया। तब मेरे घोड़े युद्धसे विमुख हुए और मातलीभी घबड़ा गये; उनके हाथसे सोनेका कोड़ा पृथ्वीमें गिर पड़ा और उन्होंने घबड़ाकर मुझसे कहा, कि हे अर्ज्जुन! तुम कहां हो? उनको घबड़ाया हुआ देख, मुझको बहुत भय लगा, डरे हुए मुझसे ज्ञानरहित मातली बोले, कि हे कुन्तीनन्दन! हे पापरहित! पहले समयमें अमृतके लिये देव दानवोंका

जो घोर युद्ध हुआ था, मैंने उसको देखा था, जिस समय सम्बरासुर मारा गया था; उस समयभी महायुद्ध हुआ था; तबभी मैंही इन्द्र का सारथी था; वृत्रासुरके युद्धमेंभी मैंनेही घोड़ोंको हांका था। इसी प्रकार मैंने बलि और इन्द्रके घोर युद्धकोभी देखा है। ये सब युद्ध महाघोर थे और मैं सबमें था; परन्तु ज्ञानरहित कभी नहीं हुआ था। हे पाण्डव! जान पड़ता है, कि ब्रह्माने प्रलय करनेकी इच्छा की है, क्योंकि यह युद्ध बिना जगत्के नाश किये समाप्त न होगा। मातलीके ऐसे वचनको सुनकर मैंने अपनेको आपही धीरज दिया और दानवोंके मायाबलको भुलाता हुआ मातलीसे बोला, हे सूत! तुम कुछ मत डरो; खड़े रहो। हमारे बाहुबल शस्त्र और धनुषकी शक्तिको देखो; हम इसी समय इस सब राक्षसोंकी घोर माया और उग्र तपको नाश कर देंगे। हे महाराज! मैंने ऐसा कहकर देवतोंके हितके लिये सब प्राणियोंको मोहने वाली अस्त्र मायाको प्रगट किया। मेरी उस मायासे महातेजस्वी दानव लोग पीड़ित होकर अनेक प्रकारकी माया करने लगे। कभी जगत् गुप्त होता था और कभी जलमें डूब जाता था। प्रकाश होनेसे मातली घोड़ोंको ठीक करके उस घोर संग्राममें घूमने लगे। तब वे दानव मुझको देखकर जलने लगे। मैंने अन्तर पाकर कितनोंहीको मारडाला। इस प्रकार जब निवातकवचोंका युद्ध हो रहा था, तब एकबार सब दानव गुप्त होगये।

१७१ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! वे दैत्य लोग मुझसे गुप्त होकर युद्ध करने लगे और अनेक प्रकारकी मायाभी करने लगे। मैंनेभी अदृश्य शस्त्रके बलसे युद्ध किया, मेरी गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए वाण राक्षसोंको काट काट पृथ्वीपर गिराने लगे। मैंने अपने वाणोंको दिव्य मन्त्रित करके छोड़ा। निवातकवच लोग मुझसे पीड़ित होकर मायाको छोड़ अपने नगरको भाग गये। जब दानवलोग भागे और सबके शरीर दीखने लगे, तब मैंने देखा, कि सैकड़ों, सहस्रों राक्षस मरे पड़े हैं। उनके पासही सहस्रों भूषण, शस्त्र कवच और गात्रभी कटे पड़े हैं। मेरे घोड़े एकचरणभरभी नहीं चल सकते थे, तब वे आकाशमें उड़ कर खड़े होगये। तब निवात कवचलोगभी आकाशमें छा गये और वहींसे गुप्त होकर शिला वर्षाने लगे। उनमेंसे कोई दानव पृथ्वीमें खड़े होकर मेरे घोड़ोंके पैर और रथके पहियोंको खींचने लगे। वे मेरे घोड़े और पहियोंको पकड़कर मुझे चारों ओरसे पहाड़ोंसे मारने लगे। उन्होंने इतने पहाड़ वर्षाये, कि जिस स्थानमें मैं खड़ा था, वह छिप गया, मैं उन पर्व्वतोंसे छिपने और घोड़ोंके पकड़े जानेसे बहुत पीड़ित हुआ। इसको मातलीने जान लिया। तब मातलीने डरे हुए मुझसे कहा, कि हे अर्ज्जुन! तुम डरो मत। इस समय तुम वज्रअस्त्रको छोड़ो। हे महाराज! मैंने उसके वचन सुन इन्द्रके प्यारे घोर वज्रको छोड़ा, मैं ऐसे स्थानपर खड़ा हुआ, जो चलने योग्य नहीं था। वहांसे मैंने अपनी धनुषको मन्त्रित करके वज्रके समान अत्यन्त तीक्ष्ण अनेक वाणोंको छोड़ा। उन वज्रके समान वाणोंने दानवोंकी माया और दानवोंको नाश कर दिया, वे वाण उनके शरीरोंमें वज्रके समान प्रविश कर गये। वे सब दानव लोग उस वज्रके वेगसे मर कर आपसमें मिल मिल कर पृथ्वीमें गिरने लगे। जो दानव आकाशमें खड़े हुए मेरे घोड़ोंको पकड़े रहे, मेरे वाण उनके हृदयमें घुस गये और उन्हें यमकेघर पहुंचा दिया, उस समय उन पर्व्वतके समान राक्षसोंके शरीरोंसे पृथ्वी ऐसी भर गई थी, मानो अनेक पर्व्वत पड़े हुए हैं। उस

युद्धमें मेरे घोड़े सारथी और मेरी कुछभी हानि न हुई, यह देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। तब मातलीने हंसकर मुझे कहा, कि हे अर्जुन! जो बल तुममें है, सो देवतोंमेंभी नहीं है। जब सब राक्षस मर गये, तब स्त्रियां इस प्रकार रोने लगीं जैसे शरद ऋतुमें सारस बोलते हैं। तब मैं मातलीके संग नगर के भीतर गया, मेरे रथके शब्दको सुन निवात कवचोंकी स्त्रियां डरने लगीं। उन मयूरके समान रंगवाले दश हजार घोड़े और सूर्य्यके समान रथको देख कर स्त्रियोंके सहस्रों झुण्ड इधर उधर भागने लगे। उन डरी हुई भागती स्त्रियोंके भूषणोंके शब्दसे ऐसा जान पड़ने लगा जैसा पर्व्वतसे गिरती हुई शिलाओंका शब्द होता है, कोई डरी हुई स्त्री अपने रत्नजटित घरोंमें घुस गयीं! मैंने उस विचित्र और देवतोंके नगरसेभी श्रेष्ठ नगरको देख मातलोसे पूछा, इस उत्तम नगरमें देवतालोग क्यों नहीं वास करते हैं? क्योंकि यह नगर अमरावती सेभी अच्छा दीखता है। मातली बोले, हे कुन्तीनन्दन! पहले यह नगर हमारा और इन्द्रका स्थान था, परन्तु निवातकवचोंने यहांसे हमलोगोंको निकाल दिया था। उन्होंने पहले अपने तपसे ब्रह्माको प्रसन्न किया। फिर उस स्थानमें रहनेके लिये और देवतोंसे अजेय होनेका वरदान मांगा। तब भगवान् ब्रह्माने इन्द्रसे कहा, कि तुम अपने रहनेको दूसरा स्थान ठीक करो, उस स्थानमें सब देवतोंके सुखकी सामग्री होनी चाहिये और तुमही दूसरा शरीर धारण करके इन सबका नाश करोगे। इसीलिये इन्द्रने इन दानवोंका नाश करनेको सब शस्त्र तुम्हें दिया। जिन दानवोंको तुमने मारा है, उनको देवताभी नहीं मार सकते थे। हे भारत! कालके आनेसे तुम्ही इन सबका नाश करनेको यहां आये और जैसा ब्रह्माने कहाथा वैसाही किया। दानवोंके मारनेके लिये इन्द्रने तुमको सब शस्त्र सिखाये हैं। अर्ज्जुन बोले, तब मैं सब दानवोंको मार और उस नगरको शान्तकर फिर मातलीके सहित स्वर्गको चला।

१७२ अध्याय समाप्त।

हिरण्यपुरवासी दानववध प्रकरण।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! जब मैं स्वर्गको लौटा आता था, उसी समय एक बड़ा आश्चर्य दिखाई दिया। मुझे सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निके समान प्रकाशवाला इच्छानुसार घूमता हुआ एक नगर दिखाई दिया उसमें अनेक रत्नोंके वृक्षोंपर बैठे हुए पक्षी मीठे स्वर सुना रहे थे। उसके भीतर सदा प्रसन्न रहनेवाले पुलोम और कालकञ्ज वंशी दानव निवास करते थे। उस नगरके चार द्वार थे, परन्तु चारोंही बड़े दुःखसे जाने योग्य थे। उसकी अटारी और महल बहुत सुन्दर थे। यह नगर रत्नोंसे जड़ा हुआ दिव्य और विचित्र दिखाई देता था, उसके चारों ओर फूले और रत्नोंसे जड़े वृक्ष विराजमान थे। उन वृक्षोंपर मनोहर और दिव्य पक्षी बोल रहे थे। उस नगरके चारों ओर अनेक राक्षस लोग प्रसन्नतासहित शूल खड्ग और मूशल लिये माला धारण किये घूम रहे थे। मैंने उस विचित्र दैत्यनगरको देखकर मातलोसे पूछा, कि यह किसका नगर है। मातली बोले, पुलोम और कालकञ्ज नामक महा असुर हुए थे, उन्होंने देवतोंके सहस्र वर्षतक घोर तप किया। जब उनका तप समाप्त हुआ, तब ब्रह्मा उन्हें वर देनेको आये। उन्होंने यह वरदान मांगा, कि हमारे पुत्रोंको दुःख नहो, हमको देवता, राक्षस और सर्प न मार सकें और हमारा महातेजस्वी रमणीय नगर आकाशमें घूमा करे। हमारे सब रत्न भरे नगरको देवता, यक्ष, महर्षि, गन्धर्व्व, सांप असुर और राक्षसभी

न जीत सकें। तब ब्रह्माने कालकेय दानवोंके निमित्त उस नगरको बनाया था। हे वीर! वहीं वह नगर आकाशमें देवतोंसे खाली घमता था। इसमें पुलोम वंसी और कालकञ्ज वंशी दानव रहते थे। इस नगरकी रक्षा पुलोमवंशी और कालकञ्ज वंशी करते थे। इस नगरका नाम हिरण्यपुर जगत्में प्रसिद्ध था। यह दानव इस नगरसे निर्भय और मृत्युके डरसे रहित होकर रहते थे। ब्रह्माने प्रथम वर देते समय कह दिया था, कि इन दानवोंकी मनुष्योंसे मृत्यु होगी। हे अर्जुन! वज्र लेकर इन महादानवोंका नाश करो। अर्जुन बोले, हे राजन्! तब मैंने उन दानवोंका देवता और राक्षसोंसे मारनेके अयोग्य समझ, कर मातलीसे कहा, हे सूत शीघ्रही इस नगरमें चलो, जितने इन्द्रके शत्रु हैं, वह चाहे अवध्यभी हों तौभी मैं उनको शस्त्रसे मारूंगा। तब मातली मुझे दिव्य रथके सहित शीघ्रताके साथ हिरण्यपुरमें ले गये। वह दानव मुझको देख-कर विचित्र आभूषण और वस्त्र पहिनकर रथोंपर चढ़ मेरे सम्मुख आये तब सर्पके समान वाण, भाले बरछी, तोमर आदि शस्त्रोंसे दानव-लोग मुझे बड़े क्रोधके साथ मारने लगे। हे महाराज! तब मैंभी अस्त्रविद्याके बलसे उनके शस्त्रोंको निवारण करने लगा। मैंने रथकी चाल और वाणोंकी वर्षासे दानवोंको ऐसा मोहित किया, कि वे आपसमेंही लड़ने लगे। उन मोहित हुए दानवोंके सिर मेरे वाणोंसे कटकर गिरने लगे। जब दानव मरने लगे, तब सब दानवोमायासे अपने नगर सहित उड़ गये। तब मैंने वाणोंकी वर्षासे उनके मार्गको रोक दिया, वह आकाशमें उड़नेवाला नगर सूर्यके समान वरदानके प्रतापसे दानवोंकी इच्छानुसार पृथ्वीमें या आकाशमें सुखसे रहता था, कभी आकाशको चला जाता था, कभी तिरछा जाता था, और कभी जलमें डूब जाता था। वह नगर अमरावतीके समान इच्छा-चारी था। उसे मैंने वाणोंकी वर्षासे रोक लिया। हे नरेश्वर! मैंने उस नगरको वाणोंके जालसे घेर लिया विशेष ध्यान करनेवाले मेरे लोहेके वाणोंसे वह नगर छिन्न भिन्न होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। हे राजन्! मेरे वाणोंसे वे दानवभी व्याकुल होकर चक्कर खाने लगे। तब मातलीने रथको पृथ्वीपर उतारा, मैंने पृथ्वीपर आकर उन युद्ध करनेवाले दानवोंके साठ हजार रथ देखे, वह सब मुझसे लड़नेके वास्ते खड़े थे, मैंने ऐसे तीक्ष्ण वाणोंसे जिनमें पक्षियोंके पङ्ख लगे थे, दानवोंको आच्छादित कर लिया, वह लोग युद्धमें ऐसे उमड़े, जैसे समुद्रकी तरङ्ग उमड़ती हैं। मैंने यह समझा कि, यह लोग मनुष्यसे युद्धमें समर्थ नहीं हैं, तब दिव्य अस्त्रोंको क्रमसे चलाना आरम्भ किया। मेरे छोड़े हुए दिव्य अस्त्र चारों तरफ फैल गये और उनसे दानवोंका मार्ग रुक गया। परन्तु दानव लोगोंको उन अस्त्रोंसे कुछभी पीड़ा न हुई और मैं दानवोंके शस्त्रोंसे पीड़ित हो गया और मुझे बहुत भय मालूम होने लगा। तब मैं चित्तसे महादेवकी शरण गया, जगतका कल्याण हो, ऐसा कह कर मैंने शत्रु-ओंको नाश करनेवाला भयानक रुद्रास्त्र छोड़ा, उस वाणको गाण्डीव धनुष पर चढ़ाते समय मैंने देखा कि, तीन सिर, नौ नेत्र छः हाथ वाला पुरुष जिसके जलती हुई अग्निके समान केश हैं, और भयानक सर्पोंके वस्त्र बनाये था, मेरे सम्मुख खड़ा है, मैंने घोर-रूपी भयानक महा-देवको नमस्कार करके नाश करनेकी इच्छासे दानवेन्द्रोंके ऊपर शस्त्र छोड़ा। हे भारत-! उस शस्त्रके छोड़ते दो सहस्रोंरूप प्रकट हो गये। हे पृथ्वीनाथ! उस समय युद्धमें हरिन सिंह व्याघ्र, रीछ, भैंसे, सांप, गौ, शार्दूल, हाथी, भुण्डके भुण्ड बन्दर, ऋषभ, सूअर, बिल्ली, ऊदबिलाव, प्रेत, भूत, गिद्ध, गरुड़, चमरीगाय,

देवता, ऋषि गन्धर्व्व, पिशाच, यक्ष, असुर, गुह्यक, हरिन हाथीके समान मुहवाली मकरी, उल्लू, साधारण मकरी, घोड़ेके समान मुहवाली मकरी, अनेक शस्त्र धारण किये धनुष, गदा, मुदगरधारी राक्षस तथा और भी अनेक रूप धारण किये जन्तु प्रकट हुए। उन सबसे जगत व्याप्त होगया। उसी समय तीन सिर, चार दांत, चार मुह और चार हाथवाले अनेक राक्षस मर मरकर गिरने लगे। वे राक्षस मांस, मेदा और अस्थियोंसे भर गये थे। उस समय वज्र, अग्नि और सूर्य्यके समान तेजवाले मेरे वाण चलने लगे। मैंने पर्व्वतके समान कठोर वाणोंसे क्षणभरमें सब दानवोंको मार डाला। हे भारत! तब मैंने गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए वाणोंसे मरे हुए राक्षसोंको देख त्रिपुरासुरको मारनेवाले शिवजीको प्रणाम किया। मैं शिवजीके वाणोंसे मरे हुए दिव्य भूषणोंसे भूषित राक्षसोंको देखकर आनन्दित हुआ। इन्द्रके सारथी मातली इन बातोंको सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। देवतोंसेभी दुःसाध्य कर्म्म करते देख इन्द्रके सारथी मातलीने मेरी बहुत प्रशंसा की और बहुत प्रसन्न होकर हाथ जोड़कर कहा, कि हे अर्ज्जुन! तुमने जो कर्म्म किया, उसको देवता और राक्षसभी नहीं कर सकते थे; इस कर्म्मको साक्षात देवतोंके राजा इन्द्रभी नहीं कर सकते थे; यह आकाशमें चलनेवाला नगर देवता और राक्षसोंसेभी अवध्य था; हे वीर! तुमने इस कामको अपने तप और वीर्य्यके बलसे किया है। राक्षसोंके मरने और नगरके नष्ट होनेपर अनेक स्त्री बाल खोले दुःखसे भरी हुई कुररीके समान रोती हुई नगरके बाहर निकलीं, कोई पतिके लिये रोती रोती पृथ्वीपर लोटने लगीं। वे दीन शब्दसे रोती हुई सिरोंको पीटने लगीं; उनके सब भूषण पृथ्वीपर गिरगये। उस समय वह नगर तेज और दानवोंसे रहित होकर शोक और कुरूपतासे भरगया; इसलिये उसकी शोभाभी नष्ट हो गयी। जिस प्रकार इन्द्रजालका बना हुआ नगर, जैसे हाथीके बिना तालाब और जैसे सूखे वृक्षोंवाला वन शोभित नहीं होता है, तैसेही वह नगर दीखने लगा। अनन्तर मुझको प्रसन्नचित्त और सब कामको समाप्त देखकर मातलीने शीघ्रही इन्द्रके घर पहुंचा दिया। मैं हिरण्यपुरके सब राक्षसोंको मार निवात-कवचोंका नाशकर इन्द्रके पास गया। मेरे सब कर्म्मोंको मातलीने इन्द्रसे विस्तारपूर्व्वक कहा। हे महातेजस्विन्! मैंने जैसे हिरण्यपुरका नाश किया था, जैसे मायाको निवारण किया था और जैसे महातेजस्वी निवात कवचोंको मारा था सो सब कथा मातलीने इन्द्रसे कही। इस कथाको सुन कर सहस्र नेत्रवाले इन्द्र बहुत प्रसन्न हुए और मरुत-गणोंके सहित श्रीमान् इन्द्र मेरी बहुत प्रशंसा करने लगे। अनन्तर देवराज इन्द्रने मुझे प्रसन्न करके ये मीठे बचन कहे, हे शत्रुनाशन! जो कर्म्म तुमने किया इसको देवता और असुरभीनहीं कर सकते थे; हे धनञ्जय! यह कर्म्म तुमने मेरे निमित्त किया है, अब युद्धमें स्थिर होकर सदा ऐसेही कर्म्म करना। तुम सावधान होकर युद्धमें सब शस्त्रोंको चलाना, क्योंकि तुमसे देवता, दानव, राक्षस, यक्ष, असुर पक्षी और सर्पादि कोईभी नहीं लड़ सकता है, हे कुन्तीनन्दन! तुम्हारे बलसे जीती हुई पृथ्वीको महाराज धर्म्मात्मा युधिष्ठिर पालन करेंगे।

इति १७३ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, जब इन्द्रको यह विश्वास हो गया, कि ये शत्रुओंको जीत सकेंगे, और जब उन्होंने मेरे शरीरमें वाणोंके घाव देखे, तो एक दिन देवराज इन्द्र मुझसे बोले, कि हे भारत! अब तुमने सब दिव्य अस्त्रोंको सीख लिया, अब

पृथ्वी पर कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जो तुमको किसी प्रकारसेभी जीत सके ; हे पुत्र! भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण और शकुनी सब राजोंको संग लेकरभी युद्ध करें तौभी तुम्हारे सोलहवें भागके समान नहीं होंगे। अनन्तर भगवान इन्द्रने मुझे यह अभेद्य कवच ; सोनेकी दिव्य माला और बहुत शब्दवाला देवदत्त शंख दिया, फिर इन्द्रने अपने हाथसे यह क्रीट मेरे सिर पर बांधा, फिर दिव्य वस्त्र और बड़े बड़े सुन्दर आभूषण दिये। हे महाराज! मैं इस प्रकार पूजित होकर इन्द्रके पवित्र घरमें गन्धर्व्व-पुत्रोंके सहित रहा। एक दिन देवतोंके सहित बैठे हुए इन्द्रने प्रसन्न होकर मुझसे कहा कि हे अर्ज्जुन! अब तुम्हारे जानेका समय होगया, अब तुम्हारे भाई तुमका स्मरण करते होंगे। हे महाराज! मैं इस प्रकार जूएके दुःखको स्मरण करता हुआ पांच वर्ष तक इन्द्रके घरमें रहा ; फिर इस गन्धमादन पर्व्वतके शिखर पर भाइयोंके सहित बैठे हुए आपका दर्शन किया।

युधिष्ठिर बोले, हे धनञ्जय! तुमने प्रारब्धसे सब शस्त्रोंको प्राप्त किया प्रारब्धसे देवतोंके राजा भगवान इन्द्रको प्रसन्न किया ; हे शत्रु-नाशन पापरहित अर्ज्जुन! तुमने प्रारब्धसे पार्व्वती सहित शिवको अपने युद्धमें प्रसन्न किया, तुमको प्रारब्धसे लोक-पालोंके दर्शन हुए, प्रारब्धसे हमारी उन्नति होती है और प्रारब्धहीसे तुम लौट कर आये हो। अब मैं सब नगरोंके सहित पृथ्वी और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको अपने वशमें समझता हूं। हे भारत! अब हम उन शस्त्रोंको देखना चाहते हैं, जिनसे तुमने बलवान निवातकवच दानवोंको मारा था। अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! मैं प्रातःकाल आपको उन सब शस्त्रोंको दिखाऊंगा जिनसे मैंने निवातकवच दानवोंको मारा था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुन इस प्रकार अपने आनेकी सब कथा कहकर भाइयोंके सहित सोगये।

हिरण्यपुरवासी प्रभृति निवातकवच युद्धप्रकरण और १७४ अध्याय समाप्त।

अथ अस्त्रप्रदर्शन प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उस रातके बीतने पर महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित उठे और नित्य कर्म्म करके अर्ज्जुनसे बोले, हे कुन्तीनन्दन! जिन अस्त्रोंसे तुमने दानवोंको मारा है, उन सबको हमें दिखाओ। हे भारत! हे राजन्! तब पाण्डुनन्दन अर्ज्जुनने देवतोंके दिये हुए सब अस्त्र महाराजको दिखानेके लिये यथा याग्य पवित्र होकर बहुत तेजवाले दिव्य कवचको पहिनकर सुन्दर तीन बांसवाले पर्व्वत शिखर रूपी रथ पर चढ़ कर विराजमान होने लगे। फिर उन्होंने देवदत्त शंखको बजाया। अनन्तर कुन्ती नन्दन महाबाहु अर्ज्जुन गाण्डीव धनुष धारण करके विराजमान हुए ; फिर दिव्य अस्त्रोंको दिखाने लगे। जिस समय अर्ज्जुनने उन अस्त्रों-का प्रयोग किया और पैरही पैर पृथ्वीपर घूमने लगे, उस समय वहां वृक्षोंके सहित पृथ्वी कांप उठी ; समुद्र और नदी उमड़ने लगीं ; पर्व्वत गिरने लगे ; वायुका चलना, सूर्य्यका तेज और अग्निका जलना बन्द हो गया। हे जनमेजय! द्विजोंको वेदका पढ़ना भूलने लगा, भूमिवासी सब प्राणी व्याकुल होकर अर्ज्जुनको निवारण करने लगे, सब उन शस्त्रोंसे कांपने लगे और हाथ जोड़कर अर्ज्जुनसे जीवन प्रार्थना करने लगे। उन शस्त्रोंको चलते हुए देख अग्नि, ब्रह्मर्षि, सिद्ध और महर्षि लोग अर्ज्जुनको रोकने लगे। उसके पश्चात् सब लोकपालोंके सहित ब्रह्मा और सब गणोंके

सहित शिव वहां आये। अनन्तर दिव्य सुगन्धिसे भरा हुआ वायु अर्ज्जुनके चारों ओर चलने लगा; गन्धर्व्व लोग देवतोंकी आज्ञासे अनेक गीत गाने लगे और अप्सरा नाचने लगीं। हे राजन्! उसी समय देवतोंके भेजे हुए नारदने जाकर अर्ज्जुनसे कहा कि हे अर्ज्जुन! इन दिव्य अस्त्रोंको मत चलाओ; हे भारत! इनको बिना स्थानके कभी नहीं चलाना चाहिये और स्थान पाकरभी इन्हें बिना महादुःख पड़े नहीं चलाना चाहिये; हे भारत! इनके चलानेसे महादोष होता है; यदि तुम इनकी रक्षासे रखोगे तो समय पर ये बहुत सुख देनेवाले और बलवान होंगे, यदि रक्षासे न रक्खोगे तो यह सब लोगोंका नाश कर देंगे, तुम फिर कभी ऐसा मत करना। हे युधिष्ठिर! जब अर्ज्जुन शत्रुओंके मारनेके लिये युद्धमें इन शस्त्रोंको चलावेंगे, तब तुम देखलेना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! अर्ज्जुनको निवारण कर सब देवता अपने अपने घर चले गये। देवतोंके जानेके पश्चात् वीर पाण्डव लोग प्रसन्न चित्तसे द्रौपदीके सहित उसी वनमें रहने लगे।

अस्त्र प्रदर्शनप्रकरण और

१७५ अध्याय समाप्त।

अथ आजगरप्रकरण प्रकरण।

राजा जनमेजय बोले, हे वैशम्पायन जब महारथियोंमें श्रेष्ठ वीर अर्ज्जुन इन्द्रके यहांसे शस्त्रोंको सीख कर लौट आये तब पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! इन्द्रके समान पराक्रमी अर्ज्जुनके सहित नरनाथ पाण्डव लोग उसी वनमें रहने लगे और उस कुबेरके स्थान रम्य पर्व्वत पर विहार करने लगे। शस्त्रोंके जाननेवाले नरराज धनुषधारी अर्ज्जुन उन अनुपम स्थान और वृक्षोंको देखते हुए विहार करने लगे। राजपुत्र पाण्डवोंको कुबेरकी कृपासे स्थान मिले; वे लोग किसी प्राणीके धनकी इच्छा नहीं करते थे। वह समय उनके आनन्दका था। अर्ज्जुनसे मिल कर पाण्डव लोग चार वर्ष तक वहां रहे, यह चार वर्षका समय उनके एक रात्रिके समान बीता। इस रीतिसे वनमें सुखसे रहते हुए पहले ६ और अबके ४ सब मिलाके १० वर्ष व्यतीत हुए, तब तेजस्वी इन्द्रके समान भीम और अर्ज्जुन तथा नकुल, सहदेवने एकान्तमें राजाके पास बैठ कर प्यारे और हितके वचन कहे। हे कुरुराज! हम लोग आपकी प्रतिज्ञाको सत्य करने और आपके प्रिय करनेहीकी इच्छासे वनको छोड़ कर दुर्य्योधनको मारने नहीं गयेथे। हे महाराज! हम लोग अत्यन्त सुखके योग्य होने पर भी वनके अनेक दुःखको सह रहे हैं; हमको वनमें रहते हुए ग्यारहवां वर्ष आरम्भ होगया; अब हम लोग उस अधम बुद्धिरहित दुर्य्योधनको वञ्चना करके अज्ञातवासको बिता कर सुख पावेंगे। हे महाराज! जब हमलोग आपकी आज्ञासे शंकारहित होकर पासके वनको छोड़ छिपकर दूर देशमें घूमेंगे, तब वे लोग नहीं जानेंगे कि पाण्डव लोग कहां हैं, इसलिये वे लोग हमको जान नहीं सकेंगे, हम एकवर्ष छिपे हुए रहकर उस मूर्ख दुर्य्योधनसे सुखोंको छीन लेंगे; हे नरदेव! हे धर्म्मराज! आप उस अधम पुरुष दुर्य्योधनसे अपने वैरका बदला लेकर फल और पुष्पोंके सहित इस पृथ्वीको प्राप्त कीजियेगा, और दुर्य्योधनको उसके संगियोंके सहित मार डालियेगा। हे नरेश्वर! यह देश स्वर्गके समान है, हम लोग यहां रह कर दुःखको नाश कर सकते थे; हे भारत! यदि आप दुर्य्योधनको न जीतेंगे तो आपकी पवित्र कीर्त्ति नष्ट हो जायगी और जब आप कुरुराज्य को लेलीजियेगा, तो फिर उन्हीं क्रियाओंको

कर सकियेगा। हे नरेश्वर! हे भारत! आप इन सब कार्य्योंके करनेमें समर्थ हैं, आप कुवेर सेभी छोन सकते हैं, अब आप शत्रुओंके मारने और अपनी वृद्धिका उपाय कीजिये। हे धर्म्मराज! आपके और तेजको साक्षात इन्द्रभी नहीं सह सकते हैं; आपको सब देवतोंके सहित कुवेर और वरुणभी युद्धमें नहीं जीत सकते हैं; हे नरदेववर्य्य! आपके हित करनेके निमित्त साक्षात श्रीकृष्णजी और सात्यकी तैयार हैं, ये लोग बलमें असाधारण हैं और हम लोग भी युद्धमें सामान्य नहीं हैं, यादवोंके सहित श्रीकृष्ण और बलमें अनुपम अर्जुन तथा अप्रतिम बली मैं युद्ध करने को उपस्थित हूं, हे नरदेव! ये वीरोंमें श्रेष्ठ नकुल और सहदेव सब शस्त्रोंमें निपुण हैं। हम सब लोग युद्धको जाननेवाले हैं, हम सब युद्धमें आपके वैरियोंको मारेंगे।

श्रीवैशम्पायत मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! धर्म्म और अर्थके जाननेवाले महातेजस्वी धर्म्मपुत्र महाराज महात्मा युधिष्ठिरने अपने भाइयोंकी सम्मति जान कुवेरके स्थानकी प्रदक्षिणा की; नदी, तालाब और स्थानोंसे आज्ञा मांगी। अनन्तर पर्व्वतको देखते हुए मार्गको भूलने लगे। अनन्तर मृदु बुद्धि महात्मा धर्म्मराजने पर्व्वतकी प्रार्थना की, कहा कि हे पर्व्वतराज! हम सब कर्मोंको समाप्त कर अपने भाइयोंके सहित शत्रुओंको जीतकर जब राज्य प्राप्त करेंगे, तब तुम्हें देखनेको फिर आवेंगे। ऐसा कह कुरुवंशके स्वामी महाराज युधिष्ठिर अपने सब भाई और सब ब्राह्मणोंके सहित उसी मार्गसे चलने लगे जिस मार्गसे आये थे, घटोत्कच इन सबको अपने ऊपर चढ़ा कर पर्व्वतों पर चलने लगे। महात्मा महा ऋषि लोमश इन सबको चलते देख पिताके समान शिक्षा देकर स्वर्गको चले गये। महात्मा आर्ष्टिषेणकी शिक्षा सुन पुरुषश्रेष्ठ पाण्डव लोग रमणीय तपोवन तीर्थ और बड़े बड़े तालावोंको देखते हुए वहांसे चले।

१७६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जिस समय भरतकुलसिंह पाण्डव लोग उस झरने, दिग्गज, किन्नर और पक्षियोंसे विराजमान पर्व्वतके सुखनिवासको छोड़कर चलने लगे तो उनका चित्त प्रसन्न न हुआ; परन्तु जब कुवेरके स्थान मेघके समान स्वच्छ कैलाशको देखा तब बहुत प्रसन्न हुए। ऊंचे ऊंचे पर्व्वतोंके शिखर सिंहोंके स्थान अनेक भूले झरने और नीचे ऊंचे स्थानोंको देख बहुत प्रसन्न हुए और अनेक पक्षी और हाथियोंसे भरे हुए बनोंको देखकर प्रसन्न होते हुए खड्ग और धनुषधारी पाण्डवलोग चलने लगे। भरतकुलसिंह पाण्डवलोग रम्य वन, नदी, तालाब, पर्व्वतकीगुफा और झरनोंमें निवास करते हुए चलने लगे। वे लोग पर्व्वतोंमें वसते हुए अचिन्त्यरूप कैलाश पर्व्वतसे पार हो गये। अनन्तर आश्रमोंमें श्रेष्ठ और मनोहर वृषपर्व्वाके आश्रममें पहुंचे। वहां उन सबको राजऋषि वृषपर्व्वाने पूजा और पाण्डव लोगभी शोकसे रहित हो गये और सब कथा विस्तारपूर्व्वक कही और अपने पर्व्वतमें रहनेका वर्णन किया। महात्मा पाण्डव लोग देवऋषियोंसे भरे हुए उस आश्रममें सुखपूर्व्वक एक रात रहे, वहांसे चल कर बदरिकाश्रममें पहुंचे। महानुभाव पाण्डव लोग बदरिकाश्रममें ठहरे। वहां उन्होंने शोकरहित होकर कुवेरकी पोखरको देखा, वहां अनेक देवता और सिद्ध निवास करते थे। महात्मा पाण्डुके पुत्र सब मनुष्योंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोग सुखसे उसे देख कर इस प्रकार विहार करने लगे, जैसे निर्म्मल ब्रह्मर्षि लोग नन्दनबनमें

विहार करते हैं। अनन्तर पुरुष वीर पाण्डव लोग सुखसहित चलते चलते एक महीनेमें किरातराज सुबाहुके राज्यमें पहुंचे। अनन्तर चीन, तुषाद्वद और पुलिन्द देशके पृथ्वीसे उत्पन्न हुए राजा सुबाहुके नगरमें पहुंचे। जब राजा सुबाहुने सुना कि पाण्डुपुत्र हमारे राज्य-में पहुच गये, तब वह अत्यन्त प्रसन्न होकर इनके पास आये। कुरुकुलसिंह पाण्डवोंने भी उनका आदर किया। पाण्डवलोग राजा सुबाहु, विशोक आदि सब पुत्र इन्द्रसेन आदि नगर निवासी तथा भोजन बनानेवालोंसे मिल-कर प्रसन्न हुए। हे राजन् ! वेलोग राजा सुबाहुके यहां सुखसे एक रात रहे, वहींसे घटोत्कचको विदा किया। फिर सारथी सहित रथोंपर चढ़कर यामुन पर्व्वतपर जाकर सफेद धातुओं-को देखा, वहां जो झरने बहते थे, उनकी शोभा ऐसी दीख पड़ती थी मानो ये झरने पर्व्वतके दुपट्टे हैं! वहांसे चलकर पुरुषवीर पाण्डवलोग विशाखरूप पर्व्वतपर पहुंचे और वहां जाकर निवास किया। उस बनमें अनेक शूकर और हरिन रहते थे, इस बनकी शोभा साक्षात चैत्ररथके समान दीखती थी। पाण्डव-लोग सुखसे शिकार खेलते हुए एक वर्षतक उस बनमें रहे। एकदिन एक गुफामें भीम-सेनको महाउग्र रूप और महाबलवान एक भूखा सांप मिला उसको देखतेही भीम दुःख और मोहसे व्याकुल होगये। उस समय धर्म्म-धारियोंमें श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिरने भीमसेनको बचाया था। अनन्तर तेजस्वी महाराजने उस सर्परूपी ग्राहसे घिरे हुए भीमकी रक्षा की। धर्म्म और तजसे प्रकाशमान पाण्डवलोगोंने उस चैत्ररथ बनके समान बनमें उस बारहवें वर्षको बिता दिया। उसके पश्चात् मरुभूमि देशके समीप गये 'धनुर्वेदको जाननेवाले पाण्डवलोग सरस्वतीके तटपर गये और वहां कुछ रोज रहनेकी इच्छा की। उसके पीछे द्वैतबनमें पहुंचे। द्वैत बनके निवासी उनको अपने बनमें आया देखकर सब उनसे भेट करने आये। तप दम, आचार और समाधिसे युक्त काष्ठके पात्रोंमें अर्घपाद्यके वास्ते जल लिये हुए वृद्ध तपस्वी पाण्डवोंके पास आये। पाकर, खैर, बेंत, बेर, सिरस, बेल, अञ्जनवृक्ष, पीलू, शमी, करीलादि सरस्वतीके तटपरके सब वृक्ष पाण्डवोंके वहां जानेसे अति शोभायमान होगये। नरदेव पाण्डव लोग बड़ी प्रीतिके साथ देवतोंके स्थानके समान यक्ष गन्धर्व्व सेवित सरस्वती नदीपर सुखसे विहार करने लगे।

१७७ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे मुनि ! दश हजार हाथीके समान बलवाले महापराक्रमी भीम-सेनने किस प्रकारसे अजगरके भयसे तीव्रक्लेश पाया था। जो अभिमानमें आकर पुलस्त्यके पुत्र कुवेरको युद्धमें पुकारते थे; जिन्होंने राक्ष-सोंको मारकर कुवेरके पोखरसे कमल लिये थे, वही उस अजगरसे आपदग्रस्त हुए और शत्रुनाशी भीमसेनको आप कहते हैं, कि वह डर गये। इससे उस कथाके सुननेकी मेरी बड़ी अभिलाषा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् ! महा-धनुषधारी पाण्डवलोग राजऋषि वृषपर्वाके आनसे जब उस विचित्र बनमें रहने लगे, तब एक दिन धनुष और खड्ग लेकर भीमसेन उस मनोहर बनमें घूमने गये। उन्होंने हिमाचल पर्व्वतके शुभ देशोंको देखा, जहां देवर्षि सिद्ध अप्सरालोग बिचरते थे। चकोर चकवे, जीवका कोकिल और मोर आदि अनेक पक्षियोंसे शोभित वृक्षोंको देखा, वे वृक्ष, सदा फलने और फूलनेवाले तथा हिमके स्पर्शसे शीतल थे। उनकी छाया मन और नेत्रोंको सुख दे रही थी। इस प्रकार हीरेके समान निर्म्मल नदीके जलोंको देखते हुए भीम घूमने लगे। उन

नदियोंकी तटोंपर हंस और सारस विराजमान थे। जहां मेघोंके समान सघन देवदारु, हरि चन्दन, राल और अगरके वनको देखने लगे, वहां महाबलवान भीमसेन शुद्ध वाणोंसे हरिनोंको मारते हुए निर्ज्जन स्थानोंमें घूमने लगे। महापराक्रमी महाबाहु भीमसेन अपने बलसे हरिन, शूकर और भैंसोंको मारने लगे। दशहजार हाथीके समान बलवाले अनेक मनुष्योंको युद्धमें रोकनेवाले सिंह और शार्द्दूलके समान पराक्रमी भीमसेन घूमने लगे। वे अपने बलसे वृक्षोंको तोड़ते और चीरते सब वनको अपने शब्दसे पूरित करने लगे; भीमसेन सुखी होकर पर्व्वतके शिखरको तोड़ते इधर उधर घूमने लगे। वे कभी वेगसे कूदते, कभी दौड़ते कभी उछलते और कभी अपने हाथोंके शब्दसे ताड़ वृक्षोंको कंपाते विहार करने लगे। अभिमानी भीमसेनके वनमें घूमनेसे महाबलवान हाथी महापराक्रमी सिंह गुफाओंसे निकल निकल भागने लगे। भीम कहीं दौड़ते, कहीं बैठते और कहीं धीरे धीरे चलते थे। पुरुषसिंह भीम बनमें रहनेवालोंके समान निर्भय होकर उस घोर बनमें हरिनोंको ढूढ़ने और अद्भुत नाद करने लगे। तब उनके शब्दसे गुहाशायी सर्प भी भयभीत हुए। वेगसे अतिक्रमकारी भीमसेन उनके पीछे पीछे चले। देवतोंके समान महा-बलवान भीमसेनने एक बड़े भारी शरीरवाले भयानक सर्पको देखा, वह सर्प एक पर्व्वतकी खोहमें गुफाको अपने शरीरसे रोके हुए बैठा था। उस सर्पका शरीर पर्व्वतके समान बड़ा था। उसका रङ्ग विचित्र हलदीके समान था, उसके नेत्र लाल और तांबेके समान थे। वह सब प्राणियोंको डरानेवाला काल और यमके समान भयानक सर्प जिह्वासे होठोंको चाट रहा था, उसके स्वासके संग निकले हुए विषसे सब जन्तु डर रहे थे, वह घोर सर्प क्रोध करके भीमकी निकट पाके वेगसे भीमके दोनो हाथोंमें लपट गया। उस सर्पके लपटतेही भीमका सब बल और उनकी संज्ञा नष्ट हो गई। भीमसेनका जो बल दश हजार हाथियोंके समान था, जो भीमकी भुजा और सब पुरुषोंसे अधिक थीं, वही तेजस्वी भुजा सर्पके वशमें हो गईं। भीम पराक्रम करने पर भी उससे छूट न सके। उसके वरदानके वशमें होकर दश हजार हाथीके बलको भीम भूल गये। उन्होंने अपने छूटनेके लिये बहुत यत्न किया, परन्तु छूट न सके।

१७८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब तेजस्वी भीमसेन सर्पके वशमें होगये, तब उसके विचित्र और अद्भुत बलको विचारने लगे और बोले, कि हे पन्नग! हे सर्पश्रेष्ठ! तुम कौन हो? और हमसे कौनसा काम कराना चाहते हो? हम राजा पाण्डुके पुत्र महाराजा धर्म्मराज युधिष्ठिरके छोटेभाई भीम हैं, हममें दश सहस्र हाथीका बल था; परन्तु नजाने तुमने कैसे हमको वशमें कर लिया, मैंने युद्धमें सैकड़ों सिंह, केशरी, व्याघ्र, भैंसे और हाथियोंको मारडाला। मैंने युद्धमें अनेक महाबलवान राक्षस, पिशाच और सर्पोंको मारा है; मेरे पराक्रमको कोईभी नहीं सह सकता है; हे सर्पश्रेष्ठ! तुमको क्या कोई विद्याबल है? अथवा किसीने तुमको वर दान दिया है? क्योंकि मैं अत्यन्त पराक्रम करने पर भी तुमसे छूट नहीं सकता हूं, मेरी बुद्धिमें आता है, कि मनुष्योंका पराक्रम झूठा है, क्योंकि तुमने मेरे दश हजार हाथीके बलको छीन लिया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब अक्लिष्ट कर्म्म करनेवाले भीमने ऐसा कहा, तो सर्पने उनको अपने शरीर द्वारा चारों ओरसे लपेट लिया और महाबाहु भीमसेनके दोनों भुज छोड़कर सर्प

कहने लगा, हे महाभुज! आज तुमको हमारे खानेके लिये देवतोंने भेज दिया है, प्रारब्धहीसे तुम हमारे पास आये हो; पुरुषोंको अपने प्राण बहुत प्यारे हैं; हे भीम! जैसे हम सर्पयोनिमें प्राप्त हुए हैं, सो कथा तुमसे कहते हैं, तुम सुनो। हम ऋषियोंके शापसे इस दशाको प्राप्त हुए हैं; हम अपने शापका अन्त विचारते हुए यहां रहते हैं; हम तुम्हारे पुरुखा आयुके पुत्र हैं, हमारा नाम राजऋषि नहुष है; तुमने भी हमारा नाम सुनाही होगा। हम ब्राह्मणोंके निरादर और अगस्त्य मुनिके शापसे इस दशाको पहुंचे हैं, देखो प्रारब्ध बड़ा बलवान है, हम अपने वंशमें उत्पन्न हुए अत्यन्त सुन्दर रूपवाले तुमको खाना चाहते हैं। यह प्रारब्धहीका फल है। हे नरोत्तम! दिनके छठें भागमें चाहे हाथी हो, चाहे भैंसा हो जो मेरे पास आता है, वह छूट नहीं सकता। हे कौरवश्रेष्ठ! तुम केवल तिर्य्यक योनिवाले सर्पहीसे नहीं पकड़े गये हो, बरन मुझको एक बरदान भी है। जब मैं इन्द्रके लोकसे विमानसे नीचे गिरने लगा था, तब मैंने भगवान मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यसे कहा था, कि हे भगवन्! मेरे शापका अन्त बताइये; तब महा तेजस्वी अगस्त्यने कृपासे पूरित होकर कहा, कि हे राजन्! तुम्हारे शापका अन्त कुछकालके पश्चात् होगा, तब मैं स्वर्गसे पृथ्वी पर गिर गया। परन्तु मेरी स्मरण-शक्ति कम नहीं हुई; मुझको अबभी पुरानी पुरानी स्मृति पुराण याद हैं। अगस्त्य मुनिने मुझसे कहा था, कि जब सब विद्याओंको जाननेवाले पुरुष तुम्हारे प्रश्नका उत्तर देंगे, तभी तुम इस शापसे छूटोगे। हे राजन्! जिसको तुम पकड़ोगे वह कैसाहो बलवान क्यों नहो, तौभी बल रहित हो जायगा। मैंने कृपालु दयावान महात्मा ऋषियोंके वचन सुने, तब वे ब्राह्मण अन्तर्द्धान हो गये। तबसे महा दुष्कर्मी मैं इस अपवित्र नरकमें पड़ा हूं। हे महा तेजस्वी मैं इस सर्पयोनिको धारण करके अपने समयको देख रहा हूं।

ऐसा सुन उस सर्पश्रेष्ठसे भीम बोले, हे सर्प! हम कुछ क्रोध नहीं करते हैं और न अपनी कुछ निन्दा करते हैं, क्योंकि होने और न होनेवाले सुख दुःखमें तथा पाप और पुण्यमें मेरे मनको ग्लानि नहीं होती है, क्योंकि प्रारब्धसे होनेवाले कामको कोई पुरुष रोक नहीं सकता है। मैं प्रारब्धको बलवान और पुरुषार्थको व्यर्थ समझता हूं। देखो प्रारब्धके बल और बाहुबलके अभिमानसे मैं इस दुर्द्दशामें व्यर्थ हो पड़ गया। मैं अपने लिये उतना सोच नहीं करता हूं, जितना राज्यसे निकाले हुए बनवासी अपने भाइयोंके लिये। यह हिमाचल अत्यन्त दुःखसे आने योग्य तथा यक्ष और राक्षसोंसे भरा हुआ है, मेरे भाई मुझे ढूढ़ने को घबराये होंगे; जब वे मुझको मरा हुआ सुनेंगे, तो उद्यमको छोड़ देंगे, क्योंकि वे सब लोग धर्म्मात्मा हैं और मैं राजका लोभी हूं; इस लिये उनका विरोध किया करता था। अथवा बुद्धिमान अर्ज्जुन दुःख नहीं करेंगे, क्योंकि वे सब अस्त्रोंके जाननेवाले तथा यक्ष और राक्षसोंसे भी अजेय हैं। महाबाहु और महा पराक्रमी अर्ज्जुन अकेले ही इन्द्रको भी स्वर्गसे निकाल सकते हैं, उनके आगे सब लोकोंका शत्रु कपट और मोहसे भरा हुआ और छलसे जुआ खेलनेवाला दुर्य्योधन क्या है। मैं अपनी बूढ़ी माताका बहुत शोक करता हूं, वह अपने पुत्रोंको बहुत चाहती हैं, विशेष कर मुझको सबसे अधिक मानती हैं। हे सर्प! जब मैं मर जाऊंगा तो वह क्या करेंगी, उनके सब मनोरथ मेरे मरनेसे नष्ट हो जायंगे। नकुल और सहदेव मेरे पराक्रमसे रक्षित होकर अपनेको वीर मानते हैं, मेरे मरने से उनका वीर्य्य, बल और उत्साह नष्ट हो जायगा, मेरी बुद्धिमें

आता है, कि मेरे मरने से वे दोनो किसी योग्य न रहेंगे। सांपके शरीरसे बंधे हुए भीमने इस प्रकार बहुत विलाप किया। परन्तु छूट न सके। उसी समय कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरने अनेक अशगुन देखे, तब वे बहुत घबड़ाये। उनकी दाहिनी ओर खड़ी होकर सियारी घोर शब्दसे रोने लगी और उस आश्रमसे दोप्त दिशाकी ओर खड़ी होकर अनेक सियारी भयानक शब्दसे रोने लगीं। एक पंख, एक चरण और एक आंखवाले अनेक भयानक पक्षी अपने मुखसे रुधिरको गिराते हुए सूर्य्यकी ओर घूमने लगे। उस समय धूलसे भरा हुआ घोर वायु बहने लगा। सब हरिन और पक्षी बाईं ओरको बोलते हुए जाने लगे। पीछेसे काला कौआ जाओ जाओ कहने लगा और दहना हाथ पांव फरकने लगा। हृदय और बायां चरण जलने लगा और दहने नत्रमें अशुभ चिह्न होने लगे। हे जनमेजय! बुद्धिमान धर्म्मराज बहुत भयसे व्याकुल होकर द्रौपदीसे पूछने लगे, कि भीमसेन कहां हैं? तब द्रौपदीने कहा, कि भीमसेनको गये बहुत देर हुई है। यह सुन महाबाहु युधिष्ठिर धौम्यमुनिके सहित चले और अर्ज्जुनसे बोले, कि तुम द्रौपदीकी रक्षा करना तथा नकुल और सहदेवसे कहा कि तुमलोग ब्राह्मणोंकी रक्षा करना। महात्मा धर्म्मराज उन्हींके चरणोंके चिह्न पर चलते हुए भीमको ढूंढ़ने लगे। वे वहांसे पूर्व्वकी ओर चले; वहां उन्होंने मतवाले हाथियोंको मरे पड़े देखा और वहीं भीमसेनके चरणोंके चिह्नोंको देखा; फिर हजारों सहस्रों हरिन और सैकड़ों सिंहोंको मरा पड़ा हुआ देखा। वह महाराजभी उसी मार्गसे चले। महा पराक्रमी भीमके वायुसमान चलनेसे उनकी जंघासे उठे हुए वायुसे मार्गके वृक्ष टूटके गिरे थे, महात्मा धर्म्मराज उन्हीके चरण चिह्न पर चलते हुए एक पर्व्वतकी खोहमें पहुंचे। वहां सूखी वायु चल रही थी और किसी वृक्षपर पत्ता नहीं था। वह स्थान जलसे रहित और कटीले वृक्षोंसे भरा हुआ था। वहांकी पृथ्वी तथा उस कठिन स्थानमें पत्थरोंके टुकड़े और छोटे छोटे वृक्ष भरे थे। वहीं उन्होंने उसी सुदुर्ग ऊपर स्थानमें सर्पसे पकड़े हुए अपने भाई भीमसेनको निश्चेष्ट हुए देखा।

१७८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! युधिष्ठिरने सर्पसे पकड़े हुए अपने प्यारे भाईसे ऐसे वचन कहे। हे कुन्तीपुत्र! तुम इस आफतमें कैसे पड़ गये? और यह सर्पके समान शरीरवाला सर्प कौन है? भीमने बड़े भाईको देखकर सब कथा अपने पकड़े जानेकी कह सुनाई।

भीमसेन बोले, हे आर्य्य! यह महाबलवान् नहुष नामक राजर्षि हैं, इन्होंने मुझे खानेको पकड़ा है। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे आयुष्मन्! तुम हमारे अत्यन्त पराक्रमी भाईको छोड़ दो; हम तुम्हारी क्षुधा निवारण करनेके लिये दूसरा भोजन देंगे। सर्प बोला, यह राजपुत्र हमारे मुखमें आचुके हैं, इसलिये हम इन्हीको खायंगे, तुम चले जाओ, यहां खड़ा होना योग्य नहीं है, यहां रहनेसे तुमभी कल हमारे भोजन बनोगे। हे महाबाहो! यह हमारा प्रण है, कि जो हमारे पास आता है, उसको हम खाजाते हैं। हे तात! तुमभी हमारे पास आये हो और तुम्हारा भाई प्रारब्धहीसे हमारे पास आगये हैं, अब हम दूसरे आहारकी इच्छा नहीं करते हैं। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! तुम देव हो, या दैत्य हो, या सर्प हो, जो हो सत्य कहो, तुमसे मैं युधिष्ठिर पूछ रहा हूं; हे सर्प! तुमने भीमसेनको क्यों पकड़ा है? तुम कौनसे भोजनसे प्रसन्न हो सकते हो? हम तुम्हारी

प्रसन्नता के लिये कौनसा भोजन ले आवें।

सर्प बोले, हे पापरहित! हम तुम्हारे पुरखा नहुष नामक राजर्षि हैं। हे नरनाथ! हम चन्द्रमासे पांचवीं पीढ़ीमें आयुके पुत्र हैं हमने अपने पराक्रम, तप, यज्ञ और वेद पाठसे तीनो लोकोंके ऐश्वर्य्यको प्राप्त किया था, उस राज्यको प्राप्त करके मुझे बहुत अभिमान होगया। मेरी पालकीमें सहस्र ब्राह्मण लगते थे, मैंने उस ऐश्वर्य्यसे उन्मत्त होकर ब्राह्मणों-का अपमान किया। मैं उसी अपमानके कारण भगवान अगस्त्यके शापसे इस दशाको प्राप्त हुआ हूं। हे पृथ्वीनाथ! हे पाण्डव! इस दशामें पड़ने परभी मेरी बुद्धि नष्ट नहीं हुई। यहभी उन्ही महात्मा अगस्त्यकी कृपा है। मैंने दिनके छठे भागमें भोजनके लिये तुम्हारे भाईको पकड़ा है, इस लिये मैं इसको नहीं छोड़ूंगा और न दूसरा भोजन लूंगा। यदि तुम मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो तो मैं तुम्हारे भाई भीमको छोड़ दूं।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! तुम अपने प्रश्नोंको कहो, हम शक्तिके अनुसार तुम्हें प्रसन्न करनेके लिये उनका उत्तर देंगे, जिस विषयको ब्राह्मण जान सकते हैं, उन्हींको तुम जानते हो। हे सर्प! तुम्हारे बचनोंको सुन सुन हम उत्तर देंगे।

सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! ब्राह्मण किसे कहते हैं? जगत्में कौन वस्तु जानने योग्य है? तुम हमारे इन दो प्रश्नोंका उत्तर दो, तो हम तुमको बहुत बुद्धिमान जानेंगे। राजा युधिष्ठिर बोले, हे नागेन्द्र! जिसमें सत्य, दान, क्षमाशीलता, अक्रूरता, तप और दया हो उसे ब्राह्मण कहते हैं। हे सर्प! जहां जाकर पुरुष शोकसे रहित हो जाते हैं, जिसमें सुख और दुःख नहीं है, वही एक ब्रह्म जानने योग्य है। तुम्हारो और क्या विवक्षित है? सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! इस जगत्में ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र चार वर्ण हैं, ये चारों अपौरुषेय वेदका प्रमाण मानते हैं, यदि किसी शूद्रमें सत्य, दान, क्षमा, शीलता, अहिंसा और दया हो, तो क्या वह भी ब्राह्मणही हो जायगा? तुमने जो कहा, कि ब्रह्ममें सुख और दुःख नहीं है और वही ब्रह्म जानने योग्य है, तो तुम एक ऐसे प्राप्त होने योग्य स्थानको कहो, कि जो सुख और दुःखसे रहित हो क्योंकि हमको ऐसा कोई पद नहीं दीख पड़ता। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! जो ये लक्षण शूद्रमें हैं, और ब्राह्मणमें नहीं है तो वह शूद्र शूद्र नहीं है और वह ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं है। हे सर्प जिसमें ये लक्षण हों वह शूद्र ब्राह्मण है और यदि ये लक्षण ब्राह्मणमें न हों तो वह ब्राह्मणभी शूद्रही है। हे सर्प! जो तुमने कहा, कि "कोई वस्तु सुख दुःखसे रहित जानने योग्य नहीं है और कोई पद ऐसा नहीं है जिसमें सुख और दुःख नहीं हो।" हे सर्प! ऐसा बोध होता है कि, सुख दुःखसे रहित कोई वस्तु नहो हैं; सो जैसे गर्मीमें सर्दी नहीं और सर्दीमें गर्मी नहीं है, तैसे कोई पद सुख और दुःखसे रहित नहीं है। अर्थात् जिस प्रकार शीतता और उष्णताके बिना कोई अनिर्व्वचनीय पदार्थका रहना स्वीकार किया जाता है, उसी भांति सुख दुःखसे रहित कोई अनिर्व्वचनीय ज्ञेय वस्तुका रहना अवश्य स्वीकार करना होगा; हमारी ऐसीही विवेचना होती है, तुम चाहे जैसी विवेचना करो।

सर्प बोले, हे राजन्! यदि तुम चरित्रहीसे ब्राह्मणता मानते हो, तो जबतक चरित्रका कार्य्य न हो तबतक जाति वृथाही है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महासर्प! हे महा बुद्धिमान! मेरी बुद्धिमें जगतके जितने मनुष्य हैं, सबहीमें वर्णसङ्कर हैं। इससे उनकी

जातिकी परीक्षा होनी बहुतही कठिन है। हम देखते हैं, कि दूसरे वर्णकी स्त्रीसे दूसरे वर्णका पुरुष सन्तान उत्पन्न करता है; वचन, मैथुन, जन्म और मरण सब पुरुषोंका समानही होता है। यह 'यजामहे' वेदवाक्य प्रमाण है और हमको मानने योग्य है, इसीसे पण्डित सब चरित्रको प्रधान मानते हैं। जब लड़का उत्पन्न होता है, उसका नाल काटा जाता है उससे पहिलेही जातिकर्म किया जाता है, उस कर्ममें उस बालककी माता सावित्री और पिता आचार्य होता है। भगवान स्वायम्भू मनुनेभी अपनी स्मृतिमें ऐसाही कहा है, कि जब तक बालक वेद न पढ़े, तब तक वह शूद्रवत् रहता है। हे नागेन्द्र! सब वर्णोंकी संस्कार आदि क्रिया की जाने परभी यदि उनमें सच्चरित्रता न रहे, तो सङ्करत्वको बलवान निश्चय करे। हे सर्प! इसलिये जिसमें सुसंस्कृत चरित्र दिखाई दे उसे ही पहिले मैंने ब्राह्मण कहके वर्णन किया है। सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! हमने तुम्हारे सब वचन सुने अब हम तुम्हारे भाई भीमसेनको नहीं खायेंगे।

१८० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, आप इस लोकमें वेद और वेदाङ्गोंके जाननेवाले हैं सो हमसे कहिये, कि कौन कर्म करनेसे मनुष्यको उत्तम गति होती है? सर्प बोले, हे भारत! पात्रको दान देना, प्यारे वचन कहना सत्य बोलना और किसीको दुःख न देना इन्हीं कर्मोंसे पुरुष स्वर्ग जाते हैं।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! दान, अहिंसा और प्यारी वाणी इन चारोंमें कौन अधिक कौन कम है! सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! दान, सत्य, अहिंसा और मीठीवाणी इन सबकी बड़ाई और छोटाई केवल कार्य्यके अनुसार होती है। कहीं दानसे सत्य और सत्यसे दान अधिक होजाता है। हे पृथ्वीनाथ! हे महा धनुर्द्धर! कहीं अहिंसासे मीठी वाणी और कहीं मीठी वाणीसे अहिंसा बढ़ जाती है। हे राजन्! हमने यह सब कहा अब और जो तुम्हारी इच्छा हो सो कहो, हम तुमसे कहेंगे। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! शरीर नष्ट होनेके पीछे स्वर्ग किस प्रकार मिलता है और कर्मका फल अवश्य प्राप्त होता है। उसका क्या प्रमाण है, इन सब विषयोंको तुम हमसे कहो। सर्प बोले हे राजन्! मैंने अपने कर्मोंसे तीन दशा देखी। मैं पहले मनुष्य था फिर देवता हुआ, फिर सर्प होगया। निश्चय ही पुरुष मनुष्य लोकमें दान और अहिंसादिक कर्म करके स्वर्गके सुखको भोगता है। हे राजेन्द्र! हे तात! उसका उस कर्मके करनेसे मनुष्य वा किसी नीच योनिमें जन्म होता है। हम इसे विशेष वर्णन करते हैं। काम, क्रोध, लोभ और हिंसा करनेसे मनुष्य मनुष्यतासे नष्ट होकर तिर्य्यक योनियोंमें जन्म लेता है। नीच योनियोंके जो कर्म हैं, सो मनुष्यहोके लिये हैं। गाय और घोड़े आदिको भी देव भाव दीख पड़ता है। हे तात! जन्तु इस प्रकार तीन गतियोंको प्राप्त होता है, ब्राह्मण लोग केवल नित्य परमात्माका ध्यानही करते हैं। हे तात! जीवात्मा बार बार जन्म लेकर सुख और दुःखको भोगता है, जीवात्मा अपने कर्मानुसार प्रजाके लक्षणोंकी चिन्ता करते हैं।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्धका आधार क्या है? हे महामते! इन पांचोंको बुद्धि एकहीबार क्यों नहीं ग्रहण कर सकती है, तुम यह सब हमसे कहो।

सर्प बोले, हे चिरञ्जीव! जो आत्मा सब इन्द्रिय तथा स्थूल और सूक्ष्म शरीरोंसे युक्त है सोई कर्मोंके अनुसार सब फलोंको भोगता है। उसकी भोग करनेके आधार ज्ञान, बुद्धि, मन

और इन्द्रिय हैं। हे तात! क्षेत्रज्ञ मनसे प्रेरित होकर इन सब विषयोंको क्रमसे भोगता, इस लिये वह विषयोंहीमें रहता है। हे पुरुष-व्याघ्र! इन सबका कारण मनही है और मनमें एकहीवार दो ज्ञान नहीं आ सकते हैं। इससे इन सब विषयोंका एकवार ज्ञान नहीं होता। हे राजन्। वह परमात्मा दोनों भावोंके बीचमें रहता है और बुद्धिको कर्म्मोंमें प्रेरित करता है। हे युधिष्ठिर! बुद्धिके पीछे जो ज्ञान होता है, पण्डितलोग उसीही वहना शक्ति कहते हैं। हे राजशार्दूल! हमने यह क्षेत्रज्ञकी विधि कही।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! तुम हमसे बुद्धि और मनका लक्षण कहो? क्योंकि अध्यात्म विद्याजाननेवालोंको उसका जानना बहुत आवश्यक है। सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! आत्मा मायाके उपद्रवसे बुद्धिके बहुतही अनुगत है, इसो हेतुसे बुद्धि आत्माकी आश्रित होनेसे भी उसकी प्रेरक होती है। विषयोंमें इन्द्रियोंके संयोग हेतुसे बुद्धि उत्पन्न हुआ करती हैं; मन पहले होसे उत्पन्न है। बुद्धिको सुख दुःख उत्पादनसामर्थ्य नहीं है, किन्तु मनको वह सामर्थ है। हे तात! मन और बुद्धिमें इतनाही भेद है। हे युधिष्ठिर! इन विषयोंको तुम कैसा मानते हो, सो कहो! युधिष्ठिर बोले, हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ! तुम्हारी बुद्धि बहुत श्रेष्ठ है, तुम सब जानने योग्य विषयोंको जानते हो, तब मुझसे क्यों पूछते हो? हे सर्प! मुझको एक बड़ा भारी सन्देह हुआ है, कि अद्भुत कर्म्मकारी सब जाननेवाले तुम स्वर्गवासो हुए थे, ऐसे स्थलमें तुमको मोह क्यों हुआ।

सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! महा सूरवीर और बुद्धिमान कोभी ऐश्वर्य्य बढ़नेसे अभिमान हो जाता है, सुखमें रहनेसे सब लोग मोहमें पड़ते हैं। हे युधिष्ठिर! हम उसी ऐश्वर्य्यमें पड़कर अभिमानके वशमें हो गये, और उस अभिमानके कारणसे पृथ्वीमें गिराये गये। हे महाराज! हे शत्रुनाशन! तुमने हमारा बहुत उपकार किया, आज तुम महात्मासे बात करनेसे हमारा शाप नष्ट हो गया। मैं जब दिव्य बिमान पर बैठ कर आकाशमें घूमता था, तब अभिमानके वशमें होकर कुछभी नहीं बिचारता था, ब्रह्मर्षि, देवता, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस और सर्पलोग तथा औरभी तीनलोकमें निवास करनेवाले प्राणीलोग मुझे हाथोंसे ले चलते थे। हे पृथ्वीनाथ! मैं जिसको अपने नेत्रोंसे देखताहूं, उसीका तेज नाश हो जाता है, यह मेरो दृष्टिका फल है। हे राजेन्द्र! हजार ब्रह्मर्षि मेरी पालकीको ले चलते थे, उसी अनीतिके कारण मैं लक्ष्मीसे भ्रष्ट हुआ। एक दिन महामुनि अगस्त्य मेरी पालकोमें लगे थे, तो मैंने उनसे कहा, कि तुम शीघ्र चलो, तब उन्होंने क्रोधान्ध होकर मुझे शाप दिया, कि तू सर्प होकर स्वर्गसे गिरजा। तब मैंने अपनेको उस विमानसे गिरते हुए और सब लक्षणोंसे रहित होते देखा। उस समय मेरा मुख नीचेको हो गया। तब मैंने अगस्त्य मुनिसे कहा, कि मेरा शाप नष्ट हो। मैं सर्परूप धारण करके बोला कि, हे भगवन्! मैंने यह कर्म्म भूलसे किया, इस लिये आप क्षमा कीजिये। तब उन्होंने कृपा करके मुझसे कहा, कि हे नरनाथ! इस शापसे तुमको धर्म्मराज युधिष्ठिर छुड़ावेंगे, तुम जब इस अभिमान रूपी घोर पापके फलको भोग चुकोगे, तब पुण्य फल भोगोगे। मैंने उनके तपस्याके बलको देख बहुत आश्चर्य किया। इसीहेतु ब्रह्म और ब्राह्मणत्व विषयक प्रश्न हमने तुमसे किया, सो सत्य, दम, इन्द्रिय जीतना, तप, दान अहिंसा और धर्म्मको नित्य मानना यही मनुष्यको साधना हैं; हे नरनाथ! जाति और कुल साधक नहीं है। महा बलवान तुम्हारे भाई भोमसेन सुखसे रहें, तुम्हारा कल्याण हो, हम अब स्वर्गको जाते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, महाराज नहुष ऐसा कहकर उस सर्पके शरीरको छोड़ और देव शरीर धारण कर स्वर्गको चले गये। श्रीमान् धर्मात्मा महाराज युधिष्ठिरभी भीमसेन और धौम्यमुनिके सहित अपने आश्रमको लौट आये। अनन्तर धर्मराज युधिष्ठिरने सब ब्राह्मणोंसे उस कथाको कह सुनाया। उसको सुन सब ब्राह्मण और अर्जुन, नकुल, सहदेव और यशस्विनी द्रौपदीने बहुत लज्जा किया। ब्राह्मण लोग पाण्डवोंके कल्याणके निमित्त भीमसेनसे कहने लगे, कि ऐसा फिर कभी न करना। वे लोग भीमके दुःसाहसकी निन्दा करने लगे। पाण्डव लोगोंने महावली भीमसेनको भयसे छुटा हुआ देख बहुत आनन्द किया।

अजगर प्रकरण और १८१ अध्याय समाप्त।

अथ मार्कण्डेय समस्या प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी स्थानपर निवास करते हुए पाण्डवोंके सब प्राणियोंको सुख देनेवाला, उष्णता नाशक वर्षा काल आगया। बड़े गर्जनेवाले मेघोंने आकाशको छा लिया. वे काले काले मेघ रात और दिन बरसने लगे। वर्षाकालमें रहनेवाले सूर्य्यके तेजको रोकनेवाले निर्मल बिजलीके टुकड़े चमकने लगे। पृथ्वीमें धानके खेत हरे होगये। सर्प आदि जन्तु उन्मत्त होकर घूमने लगे, जलसे भरनेके कारण पृथ्वी सबको प्यारी लगने लगी. पृथ्वीमें इतना जल भर गया, कि जिससे नीचा ऊंचा जल और थल कुछभी न जान पड़ने लगा। उस समय उमड़े जलसे भरी हुई बड़ी बड़ी नदियोंकी तरङ्ग बाणके समान शीघ्र चलने लगीं और सब नदी तथा वन शोभासे भर गये। उस समय जलसे भींगनेके कारण वनोंसे सूअर, हरिन और पक्षियोंके अनेक शब्द सुनाई देने लगे। पपीहा, मोर, और कोकिल उन्मत्त होकर नाचने और गाने लगे। मतवाले मेंढक आनन्दसे शब्द करने लगे। इस प्रकारके मेघोंके शब्दसे भरी हुई वर्षा ऋतु पाण्डवोंने उसी वनमें बिता दी। अनन्तर सारस और हंसोंको आनन्द देनेवाली शरत् ऋतु आगयी। उसके आतेही सब बन प्रसन्न दीखने लगा। नदियोंके पानी और आकाशके तारे निर्म्मल होगये। इस प्रकार महात्मा पाण्डवोंने हरिन और पक्षियोंसे भरी हुई कल्याणदायिनी शरत् ऋतुको देखा। उस ऋतुमें धूलसे रहित मेघोंसे शीतल चन्द्रमा और तारोंसे विराजमान, रात्रि दीखने लगी। सब पोखरोंमें कमल कुमद खिल गये, सब नदी शीतल और निर्म्मल जलसे भरी हुई दीखने लगीं। आकाशके समान निर्मल तटवाली और बेंतके वृक्षोंसे विराजमान पवित्र सरस्वती अत्यन्त सुन्दरी होगयी। महाधनुषधारी वीर पाण्डव लोग निर्मल जलसे भरी हुई सुन्दर सरस्वती नदीको देखते हुए आनन्दसे विहार करने लगे। हे जनमेजय! उन महात्माओंको शरत् कालकी कार्त्तिकी पूर्णमासी उसी स्थानपर आगयी। पुण्य कर्म्म करनेवाले महातपस्वी ब्राह्मणोंके सहित भरतकुलश्रेष्ठ पाण्डवलोग उसी स्थानपर उत्तम योग करने लगे। जब अगहनका कृष्णपक्ष आरम्भ हुआ, उसी दिन पाण्डवलोग धौम्य मुनि, सारथी और नगर निवासियोंको सङ्गले काम्यक बनको चले गये।

१८२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! युधिष्ठिर आदि सब पाण्डवलोग द्रौपदीके सहित काम्यक बनमें पहुंचे। वहां मुनियोंसे बहुत सत्कार पाकर द्रौपदीके साथ रहने लगे। जब विश्वासयुक्त पाण्डव लोग उस बनमें रहने लगे, तो अनेक ब्राह्मणलोग उनके पास आने लगे। एक दिन एक अर्जुनके प्यारे मित्र ब्राह्मणने कहा, कि हे अर्जुन!

महाबुद्धिमान महाबाहु जितेन्द्रिय श्रीकृष्णजो तुम्हारे पास आवेंगे, क्योंकि उन्होंने आपलोगों-के यहां आनेका समाचार सुन लिया है। कृष्ण सदा आपलोगोंके दर्शन और कल्याणको चाहते हैं। वेदपाठ और तपको करनेवाले महा-तपस्वी चिरजीवी मार्कण्डेयभी आपलोगोंके पास शीघ्रही आवेंगे। जिस समय वह ब्राह्मण ऐसा कह रहा था, उसी समय शैव्य और सुग्रीव घोड़ोंसे युक्त रथपर बैठे हुए, महारथ कृष्ण दिखायी दिये। जैसे शचीके सहित इन्द्र आते हैं, तैसेही सत्यभामाके सहित देवकीनन्दनभी पाण्डवोंको देखने आये। बुद्धिमान कृष्णने रथसे उतरकर प्रसन्न हो युधिष्ठिर और बल-वान भीमसेनको प्रणाम किया। धौम्यकी पूजा की तथा नकुल और सहदेवने कृष्णको प्रणाम किया, कृष्ण अर्ज्जुनसे मिले और द्रौपदीको शान्त किया। दशार्हदेशके स्वामी कृष्णने अपने प्यारे अर्ज्जुनको बहुत दिनपर आया हुआ देख वार वार कण्ठसे लगाया। इसी प्रकार कृष्णकी प्यारी पटराणी सत्यभामाभी पाण्डवोंकी प्यारी पटराणी द्रौपदीसे मिली। तब पाण्डवोंने पुरोहित और स्त्रीके सहित कृष्णकी पूजा की और उनसे कुशल प्रश्न पूछा। श्रीमान् विद्वान् महात्मा कृष्ण अर्ज्जनसे मिलकर ऐसे शोभित हुए जैसे भगवान शिव साक्षात स्वामकार्त्तिकसे मिलकर शोभित होते हैं। श्रीकृष्णजीने पाण्डव, द्रौपदी और धौम्य पुरोहितकी पूजा करके महाराज युधिष्ठिरके पास बैठकर उनकी प्रशंसा करते हुए, कहा हे राजन् ! हे पाण्डव ! राज्य मिलने से उत्तम धर्म्महो करना उचित है, उसका मूल कारण केवल तपही है। आपने सत्य और परलोककी जीत लिया। आपने सब वेदोंको पढ़ा, सब व्रतोंकी किया और धनुर्वेद-को विधि पूर्व्वक समस्त पढ़ा, तथा क्षत्रियोंके धर्म्मसे धन उपार्ज्जन करके सब बड़े बड़े यज्ञभी किया। हे नरेन्द्र ! आपकी इच्छा कभी स्त्री प्रसङ्गमें नहीं होती, आप कामके वशमें होकर कोई काम नहीं करते, आप कभी लोभके वशमें होकर धर्म्मको छोड़ते नहीं हैं। इसीसे सब मनुष्य आपको धर्म्मराज कहते हैं। हे पार्थ ! हे राजन् ! आपमें दान, सत्य, तप, श्रद्धा, बुद्धि और धारणा निवास करती है। आपने इसी सबके द्वारा भोगोंको प्राप्त किया है। आपकी इच्छा सदा धर्म्ममें रहती है। हे पाण्डव ! जिस समय कुरुवंशियोंकी सभामें सब पुरुषोंने द्रौपदीके उस दुःखको देखा, उस अधर्म्मको आपके सिवाय और कौन क्षमा कर सकता था। आप निस्सन्देह सब समृद्धिको प्राप्त करके शीघ्रही प्रजाको पालन करेंगे। जिस समय आपकी प्रतिज्ञा समाप्त होगी, उसी समय हम सब लोग कौरवोंको जीतनेका यत्न करेंगे। दशार्हदेशके स्वामी श्रीकृष्णने धौम्य, भीम, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव और द्रौपदीसे कहा कि,आपलोगोंको प्रारब्धहीसे अर्ज्जुन शस्त्र सीख कर आये हैं। दशार्ह देशके स्वामी श्रीकृष्णने बन्धुओंके सहित बैठी हुई द्रौपदीसे कहा, कि तुम प्रारब्धहीसे अर्ज्जुनसे मिली हो। हे याज्ञसेनि ! हे कृष्णा ! तुम्हारे सुशील पुत्रोंकी इच्छाभी धनुर्वेद सीखनेमें अधिक रहती है, तुम्हारे पुत्र सदा अपने सज्जन बन्धुओंके आचर-णोंको करते हैं। हे द्रौपदी ! वे लोग राज्यसे आमन्त्रित होकर और तुम्हारे पिता और तुम्हारे भाइयोंसे सत्कार पाकरभी अपने मामाके यहां प्रसन्नतासे नहीं रहते हैं। हे कृष्णे ! वे लोग यदि द्वारकामें जाकर और द्वारकामें रह कर धनुर्वेद सीखें तो उनके समान देवताभी नहीं रहेंगे। हे द्रौपदी ! जैसे तुम उनको मानती हो तैसे सुभद्राभी मानती हैं, और जैसे सुभद्रा मानती है, तैसेही कुन्तीभी उनके ऊपर प्रसन्न है ; जैसे वे प्रसन्न हैं,तैसेही ये लोग उनके ऊपर कृपाभी करते हैं। प्रद्युम्न जैसे अनिरुद्ध, अभिमन्यु सुनीथ और भानुको शिक्षा देते हैं तैसेही

तुम्हारे पुत्रोंकोभी शिक्षा देंगे। तुम्हारे पुत्र गदा खड्ग तथा ढाल धारण करनेमें निपुण हैं, उनको आलस्य रहित कुमार अभिमन्यु रथ और घोड़ा चलानेकी विद्या सिखावेंगे, प्रद्युम्नभी तुम्हारे पुत्र और अभिमन्युको अच्छी प्रकार शिक्षा देंगे और शस्त्रोंको सिखा कर उनके पराक्रमसे प्रसन्न होंगे। हे याज्ञसेनी! तुम्हारे पुत्र आनन्दसे सब देशोंको देखते हुए द्वारकाको जायं, इनके संग एक एक रथ, एक एक हाथी और एक एक घोड़ाभी जायगा। अनन्तर धर्मराज युधिष्ठिरसे कृष्णने कहा कि हे धर्म-राज! दशार्ह देशके कुमार और कुकुरान्धक वंशी सूरवीर क्षत्री लोग केवल आपकी आज्ञाका मार्ग देख रहे हैं; हे राजन्! जहां आपकी आज्ञा हो वहांही ये लोग रहें। हे राजन्! आपके शत्रुओंकी सेना बलरामके धनुषसे छूटे हुए बाणोंसे नष्ट हो। हे नरेन्द्र! मथुराकी सब सेना हाथी, घोड़े और रथके सहित जहां आपकी आज्ञा हो वहां रहे; हे धर्मराज! पापियोंमें श्रेष्ठ धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्य्योधन उसी मार्गको जाय जिसको भूमिका पुत्र और शाल्व गया है। हे नरेन्द्र! आपने जो सभामें प्रतिज्ञा की थी, जब तक वह समाप्त न हो तब तक जहां आपकी इच्छा हो रहिये; फिर तो याद-वोंके बाणोंसे नष्ट हुए और अपने शत्रुओंसे रहित हस्तिनापुरको देखेंहींगे; हे महाराज! इस समयको क्रोध और पापसे रहित होकर कहीं इच्छानुसार बस कर बिता लीजिये; फिर तो शोक रहित होकर राज्यके सहित प्रसिद्ध हस्तिनापुरको जाइयेहीगा। महात्मा कृष्णके ऐसे वचन सुन युधिष्ठिरने उनकी बहुत प्रशंसा की और हाथ जोड़ कर कहने लगे, कि हे केशव! निस्सन्देह आपही पाण्डवोंकी गति हैं और पाण्डव लोग आपहीके शरण हैं, निस्सन्देह समय आने पर आप इन सब कर्म्मोंको ऐसेही करेंगे। हम अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार वनमें बारह वर्ष बिता चुके। हे केशव! अब हम लोग तेरहवें वर्षको विधिपूर्व्वक छिप कर बितावेंगे; फिर पाण्डवोंको आपही शरण हैं। हे कृष्ण! आपकी सदा ऐसीही बुद्धि चाहिये; पाण्डव लोग सत्यको पालते है। हे केशव! पाण्डव लोग स्त्री पुत्र और बान्धवोंके सहित दान और धर्म्मको पालते हैं और ये सब आप-होके शरण हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! जिस समय धर्म्मराज युधिष्ठिर श्रीकृष्णसे ऐसा कह रहे थे, उसी समय कई सहस्र वर्षोंके बूढ़े हुए, महात्मा, धर्म्मात्मा, जरा और मरणसे रहित, रूप और उदारतासे भरे हुए, महात्मा मार्कण्डेय दिखाई दिये। उस समय उनका स्वरूप ऐसा था, जैसे पचीस वर्षके पुरुषका। उन कई हजार वर्षके बूढ़े तपस्वीको आये हुए देख सब ब्राह्मण और श्रीकृष्णके सहित पाण्डवोंने उनकी पूजा की। अनन्तर जब मुनि पूजा पाकर सावधान होकर बैठ गये, तब ब्राह्मण और पाण्डवोंकी सम्मतिसे श्रीकृष्ण बोले, कि हे मुने! सब पाण्डव, ब्राह्मण, द्रौपदी, सत्यभामा और हम आपके उत्तम वचनोंके सुननेकी इच्छा रखते हैं, हे मार्कण्डेय! आप हमसे सदाचार राजा और स्त्रियोंकी तथा मुनियोंको पवित्र कथाओंको कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समय ये सब लोग एक स्थान पर बैठे थे, उसी समय पाण्ड-वोंको देखनेकी इच्छासे पवित्र देवर्षि नारदभी आपहुंचे। उन महात्माको आते देख पुरुष-सिंह बुद्धिमान पाण्डवोंने विधिपूर्व्वक पाद्य और अर्घसे पूजन की। देवर्षि नारदनेभी उसी क्षणमें मार्कण्डेयसे कहा, आप कुछ कथा कहिये। समयके जाननेवाले नारद प्रसन्न होकर बोले कि, हे ब्रह्मर्षि! पाण्डव लोग जो कथा सुनना चाहते हैं सो कथा आप कहिये। नारदके ऐसे वचन सुन महामुनि मार्कण्डेय

बोले, आप लोग क्षण भर चुप रहिये, इसके पीछे हम कुछ कहेंगे। महात्मा सनातन मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुन पाण्डव लोग सब ब्राह्मणोंके सहित चुप होकर मार्कण्डेयका मुंह देखने लगे; उस समय उनका ऐसा तेज बढ़ा, जैसे मध्याह्न समयमें सूर्य्यका तेज बढ़ता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! कुरुराज युधिष्ठिरने जब देखा कि अब महामुनि कुछ कहना चाहते हैं, तब हाथ जोड़ कर कथा पूछने लगे। हे मुने! आप पुराने देवता, दैत्य, महात्मा मुनि और सब राजऋषियोंके चरित्रोंको जानते हैं; हमारे पूजनीय सेवनीय और सदाके प्यारे देवकीनन्दन श्रीकृष्णभी हमलोगोंसे मिलनेको यहां आगये हैं। अपनेको सुखसे भ्रष्ट और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको धनवान तथा प्रभुतावान देखकर मेरी बुद्धि भ्रमती है, हे मुने! अच्छे और बुरे कर्म्मोंका करनेवाला पुरुष है और वही फलको भोगता है तो ईश्वर किस तरहसे कर्त्ता हुआ? हे ब्रह्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! सुख दुःखरूपी कर्म्मके फलको जीव इसी जन्ममें भोगता है, वा दूसरे जन्ममें? जीव शरीरको त्याग कर शुभ वा अशुभ कर्मोंको भोगता वा दूसरे शरीरसे भोगता है! हे भृगुवंशी! सुख और दुःखोंका फल लौकिक मरे हुए जीवके कर्म्म यहीं रहते हैं वा परलोकमें संग जाते हैं?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर तुम्हारा यह प्रश्न संसारकी स्थितिके वास्ते है, तुमतो सब ज्ञानको जानतेही हो; जिस रीतिसे जीव इस लोक और परलोकमें सुखको भोगता है, वह मैं तुमसे कहता हूं, एकाग्र-चित्त होकर सुनो। प्रथम प्रजापतिने जीवोंके शरीर शुद्ध और निर्मल और धर्म्म करने योग्य बनाये थे; हे कुरुसत्तम! उस समय सब मनुष्यही ऐसे होते थे जिनके संकल्प कभी निष्फल न जाते थे। सत्य बोलनेवाले सत्यव्रत तथा ब्रह्माके समान पुण्यात्मा पुराने मनुष्य होते थे, सब मनुष्य देवतोंके समान स्वतंत्र आकाश में विचरते थे, वह लोग स्वतंत्रतासे विचरते थे, उन लोगोंका मरना अपने अधीन था, थोड़ी बाधावाले रोग रहित और उपद्रव रहित और सिद्ध मनोरथ वाले होते थे। देवता और महात्मा मुनियोंके दर्शन करनेवाले सब धर्म्मोंको प्रत्यक्ष करनेवाले दानी मद मत्सरसे रहित सहस्र वर्षकी अवस्थावाले, सहस्र पुत्रवाले पुरुष होते थे। उसके अनन्तर मनुष्यलोग कालान्तरमें पृथ्वीतलमात्रमें विचरनेवाले, काम क्रोधसे अभिभूत और माया व्याजोपजीवी हुए। वे अशुभ और पाप कर्म्म करनेसे पापयोनियोंमें जन्म लेते हैं, वे लोग संसारमें वार वार दुःख पाते हैं, वे लोग काम और क्रोधसे भरकर माया और छलसे जीते हैं, अन्तमें लोभ मोहसे पीड़ित होकर शरीरको छोड़ते हैं, उनकी बुद्धि संकल्प ज्ञान और शक्ति थोड़ी होती है, वे लोग सबको दुःख देनेवाले और सबसे शंका रखनेवाले होते हैं, वे लोग प्रायः पाप लक्षणयुक्त होते हैं, वेही लोग नीच कुलमें उत्पन्न होते हैं, वेही लोग दुष्टात्मा और दुःखदाई होते हैं और वेही लोग थोड़ी अवस्था और दुष्टकर्म्म करनेवाले होते है, वे पापी नास्तिक और दुष्कर्मी होते हैं; हे कुन्तीनन्दन! मरे हुए पुरुषकी गति कर्म्मके अनुसार होती है। जीव किसी योनिमें रह कर अपने फलोंको भोगता है, चाहे धर्म्महो चाहे अधर्म्म हो सब होका फल प्राप्त होता है। यह सबसे जो हमने तुमसे कहा इसमेंभी विशेषता सुनो। मनुष्यके शरीरको परमेश्वर बनाता है, मनुष्य उसी शरीरसे पाप और धर्म्म करता है, जब अवस्थाका अन्त हो जाता है, तब शरीर निर्ब्बल हो जाता है, उस समय जीव इस शरीरको छोड़ दूसरी योनिमें जन्म लेता है, इस प्रकार

जन्म लेते लेते अन्तर नहीं मिलता है; इसी प्रकार यह जीव निरन्तर जन्म लेता है, इसका किया हुआ कर्म्म छायाके समान सङ्ग ही रहता है, चाहे वह पापकर्म्म हो वा पुण्यकर्म्म उसका फल अवश्यही होता है। मरनेके समय जो कर्म्म शेष हों पुरुषको वैसेही फल होते हैं; ज्ञानीलोग पापी और धर्म्मीको जान लेते हैं। हे युधिष्ठिर! हमने यह मूर्खोंकी गति तुमसे कही, अब ज्ञानियोंकी उत्तम गतिको सुनो। सब वेदको पढ़नेवाले मनुष्य तथा व्रत और गुरुवोंको पूजा करके और सत्य बोलकर अपनी आत्माको जानते हैं। सुशील उत्तम गतिवाले क्षमा, दान और तेजसे भरे हुए मनुष्य दूसरी योनियोंमें जन्म लेनेसेभी उत्तम लक्षण युक्त होते हैं, वे मनुष्य इन्द्रियोंको अपने वशमें रखते हैं। इसलिये रोगरहित होते हैं, उनको रोग और भय कम होते हैं, इससे उनको कुछ उपद्रव नहीं होता है, वे लोग अपनी ज्ञान-दृष्टिके द्वारा मरते उत्पन्न होते और किसी योनिमें जन्म लेतेही अपनी आत्माको जान लेते हैं। वे दूसरी आत्माकोभी जान सकते हैं, वे महात्मा ऋषिलोग शास्त्र और बुद्धिसे सब कामको सिद्ध करते हैं, वे लोग इस कर्म्मभूमिमें जन्म लेकर फिर स्वर्गको जाते हैं। हे राजन्! तुमको इसमें कुछ सन्देह न होना चाहिये; यह बात ठीक है, कि कर्म्मका फल कुछ प्रारब्ध और कुछ अपने कर्म्मोंसे मिलता है। हे कहनेवालों में श्रेष्ठ! यहां हम तुमसे एक उपमा कहते हैं उसको सुनो; हे युधिष्ठिर! हम इस मनुष्यलोकहीमें कल्याणको श्रेष्ठ मानते हैं। हे युधिष्ठिर! कोई पुरुष ऐसे होते हैं जिन्हें इसलोकमें सुख होता है, कोई ऐसे होते हैं; जिन्हें परलोकमें सुख होता है, कोई ऐसे होते हैं, जिन्हें दोनोलोकमें सुख होता है और कोई मनुष्य ऐसेभी होते हैं, जिन्हें किसी लोकमें सुख नहीं होता है। हे शत्रुनाशन! देखो जो लोग धनवान हैं,वे अनेक आभूषणोंको पहनकर इसलोकमें आनन्द करते हैं, परन्तु उनको परलोकमें सुख नहीं मिलता और जो लोग तप, योग तथा वेदपाठ करके अपने शरीरको निर्बल कर देते हैं, उनको इसलोकमें कुछ सुख नहीं होता परन्तु परलोकमें सुख मिलता है। जो लोग इसलोकमें पहिले धर्म्म करते हैं, फिर उसी धर्म्मसे धन उपार्ज्जन करते हैं, पीछे उसी धनसे पुत्र और स्त्रीके सहित यज्ञादि उत्तम उत्तम कर्म्म करते हैं,उनको इस लोकमें और परलोकमें दोनो जगह सुख मिलता है। जो मूर्खलोग न विद्या पढ़ें न तप करें न दान करें और न सन्तान बढ़ानेका उपाय करें उन्हें कहीं कुछ सुख नहीं मिलता। आप सबलोग महाबलवान दिव्य वीर्य्ययुक्त और सब शत्रुओंके मारनेवाले हैं। आपलोगोंने देवतोंके कार्य्योंके निमित्त परलोकसे आकर इसलोकमें अवतार लिया है, और इसलोकमें आकर अनेक विद्याओंको पढ़ा है। हे सूरवीरो! आपलोग इस लोकमें तप, आचार युक्त और विहारशील हो करके विधिपूर्व्वक देवऋषि,और पितरोंका तर्पण करते हैं। इसलिये अपने कर्म्मोंके अनुसार आप सब लोग पुण्यात्माओंके निवासस्थान स्वर्गको जायंगे। हे कौरवेन्द्र! आप अपने इस क्लेशको देखकर कुछ शङ्का मत कीजिये।

१८३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! महात्मा मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुनकर पाण्डवलोग बोले, हमलोग ब्राह्मणोंके महात्म्यको सुनना चाहते हैं, आप कहिये। पाण्डवोंके ऐसे वचन सुन महातपस्वी महातेजस्वी सब शास्त्रोंके जाननेवाले मारकण्डेय मुनि कहने लगे।

श्रीमारकण्डेय मुनि बोले, हे महाराज! हैहयवंश चलानेवाले शत्रुनाशक रूपवान

बलवान राजकुमार शिकार खेलने गये; उस वृक्ष और तिनकेसे भरे जङ्गलमें घूमते हुए राजाने एक कुटीमें बैठे हुए काले हरिनका चमड़ा ओढ़े एक मुनिको देखा. राजाने उसे हरिन जानकर मार डाला पीछे उसके शोकसे राजा बहुत व्याकुल हो गये और अपने कर्म्मसे बहुत पछताने लगे। कमलनेत्र राज-कुमार वहांसे चलकर विख्यात हैहयवंशी राजोंके पास जाकर पहुंचे और उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया। हे तात! उन्होंनेभी मूल फल खानेवाले मुनिका मरना सुन और कुमारको देख बहुत दुःख किया। वे सब लोग यह कहने लगे, कि यह मुनि पुत्र किसका पुत्र है। ऐसा कह उसके वंशवालोंको चारों ओर ढूंढने लगे, ढूढ़ते ढूंढ़ते शीघ्रही कश्यपगोत्र अरिष्टनेमी मुनिके आश्रममें पहुंचे। उन सबने महात्मा व्रत-धारी अरिष्टनेमी मुनिको प्रणाम किया और उनके पास बैठे; और मुनिनेभी उनकी पूजा करना चाहा परन्तु उन सबने महात्मासे कहा, कि हे महात्मा! हम लोग पूजा आपसे लेने योग्य नहीं हैं, क्योंकि हम लोगोंने एक ब्राह्म-णको मार डाला है, यह कर्म्म हमने पूर्व्व जन्मके दोषसे किया है। उन सबके ऐसे वचन सुन मुनिने कहा कि आप लोगोंने कौनसे ब्राह्मणको कहां मारडाला है, आप हमसे यह सब वृत्तान्त कहो, फिर हमारे तपका बल देखो। उन सबने सब कथा मुनिसे कह सुनायी, परन्तु उस मरे हुए शरीरको वहां न देखा, तब वे उस मुनिको ढूंढने लगे, परन्तु न पानेसे बहुत लज्जित हुए। अनन्तर वह लोग स्वप्नवत् गत चेतनकी भांति अरिष्टनेमी मुनिके पास आये, तब कश्यपवंशी अरिष्टनेमी बोले, कि जिस मुनिको तुमने मारा है, वह तप और विद्यासे भरा हुआ हमाराही पुत्र था, क्या वह यही है? हे पृथ्वीनाथ! उस मरे हुए मनुष्यको उन सब क्षत्रियोंने देख परम आश्चर्य्य माना और कहने लगे यह क्या आश्चर्य्य-की बात है; यह मरा हुआ ब्राह्मण कैसे जी गया? क्या यह तपका बल है, कि जिससे यह फिर जी गया? हे ब्राह्मण! यदि यह कथा हमारे सुननेके योग्य हो तो कहिये, हम सुनना चाहते हैं। मुनि बोले, हे राजन्! हम लोगोंके ऊपर मृत्युकी सामर्थ्य कभी नहीं चल सकती। हम इसका कारण संक्षेपमें तुमसे कहते हैं, इसमें योगही कारण है; हम लोग सदा सत्यहीको अपने चित्तमें रखते हैं। झूठ कभी नहीं बोलते। हमलोग सदा अपनेही धर्म्मको करते हैं। इस लिये हमको मृत्युका भय नहीं है। जो ब्राह्म-णोंके लिये सुखदायक कर्म्म हैं, हमलोग उसीको करते हैं; पापकी बात कभी नहीं करते हैं; इसीसे हमको मृत्युका भय नहीं हैं। हमलोग अन्न और जलसे अतिथियोंकी पूजा करते हैं; तथा अपने परिवारवर्गको खूब भोजन कराकर बचे हुए अन्नको खाते हैं, इसीसे हमको मृत्युका भय नहीं है। हम लोग इन्द्रियोंको वशमें करके क्षमा, दान, शील और तीर्थ सेवन करते हैं, तथा पवित्र और तेजस्वी स्थानोंमें योगसिद्ध महापुरुषोंके संसर्गमें निवास करते हैं, इसीसे हमको मृत्युका भय नहीं है। हे महात्मा क्षत्रियो! हमने यह सब विधान आपलोगोंसे संक्षेपसे कहा, अब आपलोग मत्सरहीन होके चले जाओ, पापसे कुछ भय मत करो। हे युधिष्ठिर! उन सब राजोंने उन मुनिके वचन सुन 'जो आज्ञा' कह उनकी पूजा की। अनन्तर वे सब प्रसन्न होकर चले गये।

१८४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अब आप हमसे ब्राह्मणों का दूसरा महात्मा सुनो। महाराज वैण्यने जब अश्वमेधके लिये दीक्षा ली थी, तब उनके पास धन लेनेको

इच्छासे अत्रि मुनि चले। हमने सुना है, कि मार्गमें चलते चलते उनको यह इच्छा हुई, कि बहुत धन लेना अच्छा नहीं है, क्योंकि धर्म्म-हीसे सब कार्य्य सिद्ध होते हैं; द्रव्यसे नहीं। महा तेजस्वी अत्रिने ऐसा विचारकर बनको जानेकी इच्छा की। फिर अपनी स्त्री और पुत्रोंको बुलाकर कहा, कि तुम लोग बनको चलो, वहां चलने से सब उपद्रव रहित और बहुत सुख 'मोक्ष' मिलेगा। यह सुन उनकी स्त्री धर्म्मके सहित बोली, कि तुम महात्मा वैण्यके पास जाकर बहुतसा धन मांगो, वह राजर्षि यज्ञ कर रहे हैं, वे तुमको बहुत धन देंगे, धन लाकर नोकर और पुत्रोंको बांट कर फिर जहांको इच्छा हो तहां चले जाना, धर्म्म जाननेवाले मनु प्रभृति पुरुषोंने इसीको धर्म्म कहा है। अत्रि बोले, हे महाभागे! मुझसे महात्मा गौतमने कहा है, कि राजऋषि वैण्य धर्म्म और सत्यव्रतमें स्थिर हैं; परन्तु वहांके ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मणोंका द्वेष करते हैं। मैंने जबसे गौतम मुनिके वचन सुने हैं, तभीसे वहां जानेकी इच्छा त्याग दीहै, मैं जब वहां जाऊंगा, तो वे सब कल्याण अर्थ और धर्म्मसे भरी हुई मेरी वाणीके उत्तरमें निरर्थक वाणी कहेंगे। हे महाप्राज्ञे! यदि तुमको यही प्रिय है, तो मैं जाऊंगा। राजा वैण्य मुझको बहुत दान और गौ देंगे। महा तपस्वी अत्रि अपनी स्त्रीसे ऐसा कह कर राजा वैण्यकी यज्ञको चले, वहां वहां जाकर राजा वैण्यकी स्तुति करने लगे। अपने कुशल भरे बचनोंसे राजाकी पूजा करते अत्रि मुनि बोले, हे राजन्! तुम धन्य हो, तुम जगतके स्वामी हो। तुम आदि राजा हो, मुनि लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम्हारे सिवाय और कोई मनुष्य धर्म्मको नहीं जानता है। उनके वचन सुनकर महा तपस्वी गौतम क्रोध करके बोले, हे अत्रि! तुम ऐसे वचन कभी नहीं कहना, हमारे आदिराजा इन्द्र हैं, वेही प्रजापति हैं और वेही आदि राजा हैं। जान पड़ता है, कि तुमको वृद्धि नहीं है, इसीसे तुम ऐसा कहते हो। हे युधिष्ठिर! गौतम ऋषिके वचन सुन अत्रि कहने लगे, कि हमने जो कहा सो सत्य कहा, जैसे इन्द्र राजा हैं, तैसे येभी हैं, तुमही भ्रममें पड़कर भूलते हो। हम जानते हैं, कि तुमको ज्ञान और बुद्धि कुछ नहीं है। गौतम बोले, हे अत्रि! हम सब जानते हैं, तुमही भूलते हो, तुम इस सभामें बैठकर राजाको प्रसन्न करनेको स्तुति करते हो, तुम परम धर्म्मको नहीं जानते हो, और प्रयोजन को नहीं समझते हो। तुम मूर्ख और बालक हो, तुमको कोई किस कारणसे बूढ़ा कह सकता है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जिस समय सब मुनियोंके आगे ये दोनो इस प्रकार विवाद कर रहे थे, उसी समय यज्ञमें बैठे हुए सब मुनिलोग कहने लगे, कि ये लोग किस लिये विवाद कर रहे हैं? इन दोनोंको किसने सभामें आने दिया? ये यज्ञके किस अधिकारमें नियुक्त हैं? ये लोग ऊंचे शब्दसे क्यों बोल रहे हैं? तब सब धर्म्मके जाननेवाले काश्यप कहने लगे कि तुम दोनो जिस प्रयोजनके लिये विवाद करते हो, सो हमसे कहो। तब सभामें बैठे हुए सब मुनियोंसे गौतम बोले, कि हे ब्राह्मणो! हम दोनो तुमसे प्रश्न करते हैं, तुम सुनो। अत्रि कहते हैं, कि राजा वैण्य ब्रह्मा हैं, मुझको इसमें बहुत सन्देह है। उनके वचन सुन महात्मा मुनिलोग शीघ्रही वहांसे चले और धर्म्मके जाननेवाले सनत्कुमार मुनिके पास पहुंचे और अपनी सब कथा कह सुनाई। महात्मा सनतकुमारने उनके बचन सुन धर्म्म और अर्थके सहित उत्तर दिया। सनतकुमार बोले, जैसे अग्नि और वायु मिलकर बनको भस्म कर देते हैं; तैसेही ब्राह्मण और क्षत्री मिलकर शत्रुओंका नाश करते हैं। राजाहीको धर्म्म और प्रजापति कहते

हैं, राजाहोंको इन्द्र शुक्र, धाता और वृहस्पति कहते हैं; जो चत्री जगतका स्वामी है, उसको प्रजापति और सम्राट कहते हैं। जो इन सब शब्दोंसे राजाकी स्तुति करता है उसकी कोई निन्दा नहीं करता है। पहले समयमें राजा-लोग धर्म्मके उत्पत्ति-स्थान, युद्ध जीतनेवाले प्रसन्न, शीघ्र स्वर्ग देनेवाले, शीघ्र विजय करने वाले और विष्णुके नामसे प्रसिद्ध थे। राजा सत्यके उत्पत्ति स्थान पहली बातोंको जाननेवाले सत्य और धर्म्मके प्रवर्तक राजाकी आश्रयसे डरे हुए, मुनियोंदे धर्म्मका रचक बनाया है; जैसे सूर्य्य अपने तेजसे अन्धकारको नाश करता है, तैसेही राजाभी अपने तेजसे अधर्म्मका नाश करता है। शास्त्र देखनेसे भी ऐसाही जान पड़ता है, कि राजा सबसे प्रधान है और राजा ऐसा शब्द कहनेसेभी राजाही प्रधान जान पड़ता है। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! उत्तर सिद्धपच सुनकर राजा वैण्य बहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर उन्होंने अत्रिसे कहा, कि हे विप्र-श्रेष्ठ! तुमने मुझे सर्व्वदेवसम्मित और मनुष्यों। में श्रेष्ठ कहा, इसलिये हम तुमको बहुत धन देते हैं। हम तुमको उत्तम वस्त्र और आभूषण धारण किये एक सहस्र श्यामा दासी देते हैं, दस काड़ार सोनेकी मुद्रा और दसभार सोना देते हैं, हे मुने! हम सत्य कहते हैं, हे मुने हम तुमको सर्व्वज्ञ कहते हैं। महाऋषि अत्रिनेभी उस सब धनको न्याय पूर्व्वक ग्रहण किया। फिर महातपस्वी तेजस्वी अत्रि अपने घरको चले गये। वहां जाकर महात्मा अत्रिने अपने घरपर जाकर वह सब धन पुत्रों-को बांट दिया, फिर तप करनेकी इच्छासे वनको चले गये।

१८५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे शत्रु नाशन युधिष्ठिर! इसी ब्राह्मण महात्मा विषयमें बुद्धिमान तार्च्यने सरस्वतीसे प्रश्न किया था। उस प्रश्नका सरस्वतीने जो उत्तर दिया, सो हम आपसे कहते हैं।

तार्च्य बोले, हे सर्वाङ्गसुन्दरी! ऐसा कौन कल्याणदायक कर्म्म है; जिसके करनेसे मनुष्य अपने धर्म्मसे नष्ट न हो, तुम हमारे इस प्रश्नका उत्तर दो, जिससे हमारा धर्म्म नष्ट न हो। हे सुभगे! कौनसे समयमें और किस प्रकारसे अग्नि-होत्र करना चाहिये, कौन कर्म्म करनेसे मेरा धर्म्म नष्ट न हो, तुम हमसे उस कर्म्मको कहो जिसके करनेसे हम रजो-गुणरहित होकर सुखसे लोकोंमें घूम सकें।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जब तार्च्य मुनिने प्रेम सहित सरस्वतीसे प्रश्न किया। तब उत्तम-बुद्धियुक्त धार्म्मिक तार्च्य मुनिसे सरस्वती कहने लगीं। सरस्वती बोलीं, जो मनुष्य पवित्र और सावधान होकर वेद पढ़ता है तथा ब्रह्मको जानता है, वही दिव्य स्वर्गको जाता है और देवतोंके सहित आनन्द करता है। उस स्वर्गलोकमें रमणीय सुन्दर बड़ी बड़ी पवित्र जलसे भरी हुई पोखर हैं, जिनको देखतेही सब शोक नष्ट हो जाते हैं, जिसमें कुछभी कीचड़ नहीं है, जहां सोनेके बने अनेक कमल विराज-मान हैं, जिन पोखरोंमें उत्तम मत्स्य विहार कर रहे हैं, उन्ही पोखरोंके तटपर धर्म्मात्मा-लोग उत्तम सुगन्ध और अनेक आभूषण धारण किये, सोनेके समान रङ्गवाली अनेक अप्सरा-ओंके सङ्ग विहार करते हैं। जो पुरुष गोदान करते हैं, सो उत्तम लोकको जाते हैं। सांड़-दान करनेसे सूर्य्यलोक, वस्त्रदानसे चन्द्रलोक और सोना देनेसे देवलोक प्राप्त होता है। जो पुरुष सुन्दर रङ्गवाले बछड़े और दूधके सहित उत्तम गो दान देता है, उस गौके जितने रोम रहते हैं, उतने वर्ष देवलोकमें रहता है। जो पुरुष हलमें चलने योग्य बहुत बलवान धुरमें जुड़ने योग्य नवीन बैलका दान करता है;

उसे दस गौ दानका फल मिलता है। जो पुरुष कांसेकी दोहनी द्रव्य और वस्त्रके सहित कपिला गौ दान करता है, उसको वही गौ उन्ही गुणोंके सहित कामना सिद्ध करनेवाली होकर मिलती है। जितने गौके रोवें हैं, गौ दान देनेवाले पुरुषको उतनेही फल मिलते हैं। जो पुरुष गोदान करता है, उसके पुत्र पौत्र और सब कुलका उद्धार हो जाता है। जो दक्षिणा कांसेकी दोहनी धन और वस्त्रके सहित सोनेके बनवा कर तिल गौदान करता है उसको सुखसे वसु लोक मिलता है। हे राजन्! जो पुरुष गौदान करता है, उसको वह गौ दानवोंसे घिरे हुए, घोर अन्धकारसे भरे नरक रूपी महा समुद्रसे नौका बन कर उद्धार करती है। जो पुरुष ब्राह्मणको कन्या दान करता है वा पृथ्वी दान करता है अथवा और भी अनेक प्रकारके दान करता है, उसे सुखसे इन्द्रलोक प्राप्त होता है। जो शीलवान पुरुष नियमपूर्व्वक सात वर्ष अग्नि-होत्र करता है, वह सात अगले और सात पिछले पुरुषोंका उद्धार करता है। तार्च्य मुनि बोले, हे सरस्वती! अग्नि-होत्रका सनातन नियम क्या है? तुम हमसे कहो, हम इस विद्याको तुमसे पढ़कर प्राचीन अग्निहोत्र व्रतको धारण करेंगे। सरस्वती बोलीं, अपवित्र अवेदचारी और मूर्खको अग्निहोत्र न करना चाहिये, क्योंकि देव पवित्रताको चाहते हैं, वे अपवित्र और अश्रद्धा-वालेसे दी हुई आहुतिको नहीं ग्रहण करते। अग्निहोत्र करानेवालेको उचित है कि मूर्खसे अग्निहोत्र कर्म्म न करावे, क्योंकि मूर्ख पूरा कर्म्म नहीं कर सकता है। हे कश्यपमुनि! जिस ब्राह्मणका कुल और शील कुछ नहीं जाना जाता है, उसे भी अश्रोत्रिय कहते हैं, इस लिये उससे यज्ञ न करावे; जो दर्परहित लोग श्रद्धा और सत्यव्रतके सहित अग्निहोत्र कर्म्म करते हैं, तथा उसीसे बचे हुए अन्नको खाते हैं, उनको उत्तम सुगन्धयुक्त गोलोक और देवलोक प्राप्त होता है।

तार्च्य बोले हे दिव्यरूपणी! हम अपनी बुद्धिको स्थिर करके तुमसे पूछते हैं कि तुम कौन हो? तुम हमको बुद्धिमें प्रविष्ट ब्रह्म-रूपिणी और देवी जान पड़ती हो। सरस्वती बोलीं, हे कश्यप! मैं ब्राह्मणोंके अग्निहोत्र आदि सत्कर्म्मसे प्रकट परापर विद्यारूपा सरस्वती हूं, तुम्हारे सन्देह नाश करनेको आई हूं, मैं यहां जो तुमसे कहती हूं सो सब सत्य है।

तार्च्य बोले, हमने तुम्हारे समान कोई तेजस्वी स्त्री नहीं देखी! तुम साक्षात लक्ष्मीके समान हो। हे सुभगे! तुम्हारा रूप और शोभा दिव्य है और तुमको देवी बुद्धि है।

सरस्वती बोली, हे मनुष्यश्रेष्ठ विद्वान विप्र! यज्ञमें जिन सब काष्ठमय लौहमय और पार्थिव वस्तुओंका उपयोग होता है और ऋत्विक लोग जो कुछ श्रेष्ठवस्तु उत्पादित करते हैं, मैं उसीसे सम्वर्द्धित अप्यायित तथा रूपवती होती हूं। तुमने जो मुझ प्रज्ञावती तथा मेरा दिव्यरूप दर्शन किया, उससे बोध होता है, कि तुम्हें अवश्य सिद्धि प्राप्त हुई है।

तार्च्य बोले, धीर मुनि लोग सम्यक विश्वासी होकर जिसे परम श्रेय विवेचना कर इन्द्रियनिग्रहादि करके जिसमें प्रवेश करते हैं, आप उस शोकातीत परमश्रेष्ठ पदार्थ मोक्ष स्वरूपका मेरे निकट वर्णन करिये। ज्ञानी लोग जिस पुरातन परम पदार्थको श्रेष्ठ जानते हैं, मैं उसे नहीं जानता।

सरस्वती बोलीं, स्वाध्यायशील वेद जानने-वाले लोग तपोधन सत्त्व और व्रत पुण्ययोगसे जिसे प्राप्त होकर शोक रहित और विमुक्त होते हैं, वही परसे भी परतर प्रसिद्ध पुरातन परब्रह्म हैं। उस परब्रह्ममें भोगस्थानरूप अनन्त शाखायुक्त, शब्दादि विषयरूप पुण्य-गन्धमय अपरिच्छिन्न ब्रह्माण्डरूप वेतसवृक्ष

प्रकाशित है। उसके अविद्यारूप मूलसे भोग-वासनारूपी निरन्तर प्रवाहवती नदियां उत्पन्न होती हैं। वे आपातरमणीय पुष्पगन्धा नदियां मधुकी भांति मधुर और जलकी तरह तृप्तिकर भोगज सुखोंको प्रस्रवण करती हैं। भूने जौकी तरह अंकुर-उत्पादन-शक्तिहीन, पिष्टककी भांति अनेक छिद्रयुक्त, मांसवत् हिंसालभ्य, शाककी भांति अल्पसार, पायसकी तरह मुखरोचक तथा पाकमें गुरुतर और कीचड़की भांति चित्तको मलिन करनेवाली जो बालूकी तरह परस्पर असंश्लिष्ट पुत्र वित्तादि वासनारूपी महानदियां हैं, वे विविध विषय भोगस्थान स्वरूप उक्त वेतस वृक्षकी शाखा शाखामें प्रवाहित हुआ करती हैं। इन्द्र अग्नि और मरुतगण जिसकी प्राप्तिके लिये यज्ञसे यजन करते हैं, वह परब्रह्मही मेरा प्राप्यस्थान है; मैं विद्यारूपी सरस्वती हूं।

ब्राह्मण माहात्म्य प्रकरण और

१८६ अध्याय समाप्त।

वैवस्वतमनु और मत्स्यावतार उपाख्यान।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय! तब महाराज युधिष्ठिरने मार्कण्डेय ऋषिसे कहा, कि आप हमसे वैवस्वतमनुका चरित्र कहिये, श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! हे नर शार्दूल! सूर्यके पुत्र महाऋषि महाप्रतापवान और प्रजापतिके समान तेजस्वी मनु हुए और वे तेज बल लक्ष्मी और तपसे सूर्य और ब्रह्मासेभी अधिक हो गये। हे पृथ्वीनाथ! उन्होंने वदरिकाश्रममें जाकर ऊर्द्ध्वबाहु हो एक चरणसे खड़े होकर घोर तप किया, उन्होंने दश सहस्र वर्ष तक अपनी जिह्वा शिर और नेत्रोंको स्थिर करके घोर तप किया। एक दिन भीगे वस्त्र और जटाधारी मनुके पास जाकर एक मत्स्य बोला, हे भगवन्! मैं बहुत छोटा मत्स्य हूं, इससे मुझे बड़े मत्स्योंसे बहुत डर लगता है। हे सुव्रत! तुम उन सब मत्स्योंसे हमारी रक्षा करो, हमको उन मत्स्योंसे जीना बहुत दुर्लभ है और हमारी यह सदाकी वृत्ति है, कि एक मत्स्य दूसरेको खा जाता है, इस लिये तुम हमको इस घोर दुःखसे छुड़ाओ, मैंभी इस उपकारका बदला तुमको दूंगा। मनु उसके वचन सुन कृपासे पूर्ण हो गये और उसको अपने हाथसे पकड़ लिया, तब मनुने उसको एक चन्द्रमाके समान निर्मल पानीसे भरे हुए पात्रमें छोड़ दिया। हे राजन्! वह मत्स्य मनुके इससे सत्कृत होकर उसी पात्रमें बढ़ने लगा। मनुभी उसको अपने पुत्रके समान पालने लगे। कुछकालमें वह मत्स्य बहुत बड़ा हो गया और उस बरतनमें उसका शरीर न समाया। तब वह बोला, कि हे भगवन्! आप मेरे लिये कोई दूसरा स्थान बताइये। भगवान मनुने उस मत्स्यको उस बरतनसे उठाकर एक बड़ी भारी बावड़ीमें डाल दिया। हे शत्रु नाशन! बहुत वर्ष बीतनेसे वह मत्स्य वहांभी बहुत बढ़ गया। हे कमलनेत्र! वह बावड़ी आठ कोस लम्बी चार कोस चौड़ी थी; परन्तु वह मत्स्य इतना बढ़ा कि उसमेंभी चल फिर न सका। हे प्रजानाथ! उसने एक दिन मनुसे फिर कहा, कि हे पिता! हे तात! हे भगवन! अब तुम मुझको समुद्रकी प्यारी स्त्री गङ्गामें डाल दो अथवा और आपकी जैसी इच्छा हो, वह कीजिये। हे पापरहित! मैं छल और कपटको छोड़ कर आपहीके पास रहना चाहता हूं, क्योंकि मैं आपहीके कारणसे इतना बड़ा हुआ हूं। भगवान इन्द्रियजित मनुने मत्स्यके वचन सुन मत्स्यको गङ्गामें डाल दिया। हे शत्रुनाशन! वह गङ्गामेंभी बढ़ने लगा तब उसने एक दिन फिर मनुसे कहा, कि हे नाथ! हे भगवन! मैं गङ्गामें चल फिर नहीं सकता हूं, इस लिये आप प्रसन्न होकर हमको समुद्रमें छोड़ दिजिये। तब मनुने उसको गङ्गासे उठाकर

समुद्रमें छोड़ दिया। हे कुन्तीनन्दन! जिस समय मनु उस मत्स्यको लेकर समुद्रको चले। तब वह सुगन्ध भरे वायुसे बहुत प्रसन्न हुआ, जब मनुने उसे समुद्रमें डाला, तब वह हंस कर बोला, कि हे भगवन्! आपने हमारी समयके अनुसार रक्षा की है इस लिये आपको जो काम करने हैं, सो हम कहते हैं सुनिये। हे भगवन! हे महाभाग! थोड़ेही दिनमें इस सब चर और अचर जगतकी प्रलय होगी, यह समय सब लोगोंके नष्ट होनेका आया है, इस लिये हम आपको हितकी बात सुनाते हैं। यह समय स्थावर और जङ्गमके नाश करनेका आया है, इसलिये आप एक नाव बनाइये और उसमें दृढ़ रस्सी बान्धिये। हे महामुने! जब प्रलयका समय आवेगा, तब आप सप्तर्षियोंके सहित उसी नावमें चढ़ियेगा और उसी नावमें सब जगतके वस्तुओंके बीजोंको रक्षा पूर्व्वक क्रमसे रख लीजियेगा! हे मुनिजनप्रिय! हे तापस! आप उस नावमें बैठ कर हमारा मार्ग देखना। तब हम आवेंगे आप हमारे सिर पर सींग देख कर हमको पहचान लेना। हे मुने! हमने आपसे सब कह दिया। अब हम जाते हैं, आप बिना मेरी सहायता उस घोर जलको तैर नहीं सकते हैं; हे विभो! आप मेरे बचनमें शङ्का मत कीजियेगा। मत्स्यके वचन सुन मनुने कहा, कि हम ऐसाही करेंगे। अनन्तर वे दोनो परस्पर आज्ञा लेकर इच्छानुसार चले गये। हे महाराज! उनके पश्चात् मनुने उसके कहनेके अनुसार सब जगतकी वस्तुओंके बीज इकट्ठा किया। फिर एक सुन्दर नावमें बैठ कर घोर तरङ्गवाले समुद्रमें तरने लगे। अनन्तर मनुने उस मत्स्यका ध्यान किया। मनुके ध्यान करतेही वह मत्स्य एक सींग धारण करके मनुके पास पहुंचा। हे भरतसत्तम! हे प्रजानाथ! हे शत्रुनाशन! हे पुरुषव्याघ्र! उस महासमुद्रमें उस सींगवाले मत्स्यको मनुने पर्व्वतके समान शरीर धारण किये हुए देखा। तब मनुने उस रस्सीको मत्स्यके सींगमें बांध दिया। हे पुरुषशार्द्दूल! जब मनुने उसके सींगमें वह रस्सी बांधी, तब वह वेगसे उस नावको समुद्रमें खींचने लगा। हे नरनाथ! मत्स्यके खींचनेसे वह समुद्रमें तैरने लगी। उस समय वह नाव समुद्रकी तरङ्गसे नाचने लगी और उसके शब्दसे शब्द करने लगी। वह वायुके वेगसे समुद्रमें चपला स्त्रीकी भांति घूमने लगी। हे शत्रु नाशन! उस समय नावकी ऐसी दशा हुई, जैसे मतवाली स्त्री नाचती है, उस समय दिशा और पृथ्वी कुछ नहीं दीखती थीं। हे नरश्रेष्ठ! उस समय आकाश और सब दिशा जलमय दीखती थीं। हे भरतकुलसिंह! जब जगत जलसे डूब गया था उस समय केवल सप्तऋषि मनु और वह मत्स्य दिखाई देते थे; इस प्रकार वे सब बहुत वर्षोंतक समुद्रमें घूमते रहे और वह मत्स्यभी उन सबको आलस्य रहित होकर समुद्रमें खींचता रहा। हे कुरुनन्दन! इस प्रकार नावको खींचते खींचते वह हिमाचलके सबसे ऊंचे शिखर पर पहुंचा, वहां पहुंच कर उसने कुछ हंसकर ऋषियोंसे कहा, आप लोग बहुत शीघ्र इस नावको हिमाचलके शिखरमें बांध दीजिये, विलम्ब करना उचित नहीं है। यह सुन उन मुनियोंने बहुत शीघ्र उस नावको हिमाचलके शिखरसे बांध दिया। जिस हिमाचलके शिखरमें उस मत्स्यके कहनेसे नाव बांधी गई थी उसका नाम अबतक नाव-बंधनही है। हे कुन्तीनन्दन! अनन्तर उस मत्स्यने ऋषियोंसे कहा, कि मुनि लोग हमहीको प्रजापति कहते हैं, हमारा ही नाम ब्रह्मा है, हमने मत्स्यरूप धारण करके आप लोगोंको इस भयसे छुड़ाया है; अब मनु सब जगतके देवता, असुर, मनुष्य तथा औरभी चराचर सृष्टिको बनावेंगे, उग्र तप करनेसे इनको सृष्टि करनेकी बुद्धि उत्पन्न होगी

और हमारी कृपासे ये सृष्टि करनेमें भूलेंगे नहीं। ऐसा कहकर मत्स्य अन्तर्द्धान होगया। तब वैवस्वत मनुने सृष्टि बनानेकी इच्छा की, परन्तु बना न सके। तब उन्होंने घोर तप किया, उसके पीछे उन्होंने सृष्टि बनाना आरम्भ किया। हे भरतकुलसिंह! वैवस्वत मनुने सृष्टिको बनाया। हे युधिष्ठिर! यह उपाख्यान मत्स्यपुराण नामसे वर्णित हुआ है। हमने यह पवित्र कथा तुमसे कही। जो इस मनुके चरित्रको आदिसे अन्ततक पढ़ता है, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं और सुख तथा धनसे पूर्ण होकर परलोकमें सुखपाता है।

वैवस्वत मनु, मत्स्योपाख्यान और
१८७ अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय नारायण सम्बाद।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इस कथाको सुन धर्म्मराज युधिष्ठिरने तपस्वी मार्कण्डेयसे फिर प्रश्न किया। हे महामुने! आपने अनेक सहस्र युग देखे हैं, आपके समान महात्मा ब्रह्माको छोड़कर और कोई बूढ़ा नहीं है। हे ब्राह्मण! इस देवता दानवादि रहित जगत्में प्रलय कालमें तुमही ब्रह्माके पास जाते हो; जब प्रलय बीत जाती है और ब्रह्मा जागते हैं, तब तुमही उनकी बनायी सृष्टिको देखतेहो। हे विप्र! ब्रह्माने चार प्रकारकी सृष्टि बनायी है। ब्रह्माने वायु और जलको सब दिशामें फैला दिया है। हे द्विजश्रेष्ठ! आपने समाधि लगाकर सब लोकके पितामह साक्षात ब्रह्माकी उपासना करी है; आपने अनेक वार अपने शरीरको बनाया हैं; आपने घोर तप करके मरीचि आदि ऋषियोंको जीत लिया है। आप ब्रह्माके पास रहनेवाले हैं। जब पुरुष शरीरको छोड़ स्वर्गमें जाता है, तबभी आपकी स्तुति करता है, आपने अपने योगकी शक्तिसे जगत् बनाने-वाले कामरूपी विष्णुके हृदयकमलको खोलकर अनेक वार देखा है। आपने पहली सृष्टिमें परम वैराग्य करके विष्णुके हृदयको देखा है। इसीसे आपको बुढ़ापा और शरीरको नाश करनेवाली मृत्यु दुःख नहीं देती है; हे विप्रश्रेष्ठ! आपको यह सब ब्रह्माके प्रसादसे प्राप्त हुआ है। जिस समय अग्नि, सूर्य्य, चन्द्रमा, आकाश और पृथ्वी कुछ विशेष नहीं थी, जब समस्त जगतमें जल छा गया था, जिस समय देवता और असुरोंके सहित सब चर और अचर नष्ट हो जाता है, जब अनेक महासर्प उत्पन्न होते हैं, जिस समय कमलगर्भमें रहनेवाले ब्रह्मा निद्राके वशमें होकर अपने शरीरको भूल जाते हैं, तब अकेले आपही उनके पास खड़े रहते हैं। हे द्विजोत्तम! आपने यह सब दशा अपने आखोंसे देखी हैं; इस लिये हम कारणोंके सहित सब कथा आपसे सुना चाहते हैं। हे द्विजोत्तम! जगत्में कोई ऐसी बात नहीं, जिसको आप न जानते हों; इस लिये हम आपसे कथा सुनना चाहते हैं।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हम आपसे यह सब कथा कहनेके पहले आपही उत्पन्न होने वाले पुराण अव्यय भेद-रहित सूक्ष्म निर्गुण और सगुण ब्रह्मको प्रणाम करते हैं। हे पुरुषव्याघ्र! वे येही पीताम्बरधारी श्रीकृष्ण हैं; येही जगतके कर्त्ता नाश करनेवाले और सब जगतकी आत्मा हैं; येही सबसे बड़े आश्चर्य्य और विचित्र नामोंसे प्रसिद्ध हैं, येही अनादि अनन्त सब प्राणियोंके कारण और जगत्के कर्त्ता हैं और येही पराक्रमके मूल हैं, ये सबको जानते हैं और इनको वेद भी नहीं जानते हैं। हे राजसत्तम! येही सब आश्चर्य्योंके स्थान हैं। हे पुरुषव्याघ्र! जब सृष्टिका आदि होता है, उस समय देववर्ष परिमाणसे चार सहस्र वर्ष तक सतयुग रहता है, उसकी सन्धि चार सौ वर्षकी है और उतनाही सन्ध्यांस है। तीन

सहस्र वर्षका त्रेतायुग होता है और उसकी सन्ध्या और सन्ध्यांश भी तीन तीन सौ वर्षकी होती है। द्वापर युग दो सौ वर्षका तथा उसकी सन्ध्या और सन्ध्यांश भी दो दो सौ वर्षकी होती है। कलियुगका परिमाण एक सहस्र वर्ष है; उसके सन्ध्या और सन्ध्यांश भी सौ सौ वर्षके होते हैं; सन्ध्या और सन्ध्यांशका परिमाण समान ही है। कलियुग बीतनेसे सतयुग आता है। यह द्वादश सहस्र वर्षोंकी युक्त संख्या हमने आपसे कही, इसी द्वादश सहस्र वर्षको ब्रह्माका दिन भी कहते हैं; इसी समयमें ब्रह्मा सब जगतको बनाते हैं। हे पुरुषसिंह! इसके पीछे जो समय होता है उसमें ब्रह्मा तब जगत्को अपने स्थानमें विसर्जन करते हैं, इसी समयको प्रलय कहते हैं। हे कुन्तीनन्दन! जब इस प्रलयके होनेको थोड़े दिन रह जाते हैं अर्थात् एक सहस्र वर्ष शेष रह जाते हैं, तब सब पुरुष झूठ बोलने लगते हैं। हे कुन्तीनन्दन! उस समय यज्ञ, दान, व्रतादि कर्मोंके स्थानो पर उनके समान छोटे छोटे कर्म्म चलने लगते हैं, उस समय ब्राह्मण लोग शूद्रोंके कर्म्म करने लगते हैं। और शूद्र लोग धन उपार्जन करने लगते हैं; अथवा शूद्र लोग क्षत्रियोंका कर्म्म करके जीविका पालन करते हैं। हे तात! कलियुगमें ब्राह्मण लोग यज्ञ, वेद पाठ, दण्ड और मृगचर्म्मसे रहित हो जायंगे, वे लोग सर्व्वभक्षी और जपसे रहित हो जायंगे। शूद्र मन्त्रको जपने लगेंगे! हे पृथ्वीनाथ! जब ऐसा घोर समय आवेगा, तब जानना कि अब प्रलय होनेवाली है। उस समय जगत्के सब राजा म्लेछ हो जायंगे, वे लोग झूठ बोल बोल अन्याय और पापसे राज्य करेंगे। हे पृथ्वीनाथ! अन्ध्र, शक, पुलिन्द, यवन, काम्बोज, वाह्लीक और आभीर लोग राजा होंगे। हे नरोत्तम! उस समय कोई ब्राह्मण अपने धर्म्मको पालन नहीं कर सकेगा, इसी प्रकार क्षत्री और वैश्यभी अपने अपने कर्म्मोंको छोड़ देंगे। कलियुगके पुरुष थोड़े बल, थोड़े पराक्रम, थोड़े वीर्य, थोड़ी अवस्था, थोड़ा उत्साह, थोड़ा शरीर और थोड़े साहसवाले होंगे। अनेक नगर मनुष्योंसे शून्य होजायंगे। सब और हरिन और सर्पही दिखाई देंगे। कलियुगमें सब लोग कहते फिरेंगे, कि हमने भी वेद पढ़ा है, हमने भी वेद पढ़ा है। शूद्र लोग ब्राह्मणोंको झूठे और ब्राह्मणलोग शूद्रोंको झूठे कहेंगे। हे पुरुषसिंह! युगके अन्तमें बहुत जन्तु उत्पन्न होंगे। हे पृथ्वीनाथ! उस समय नासिका सब सुगन्धियोंको नहीं संघ सकेगी। रसोंमें इतना स्वाद नहीं रहेगा। मनुष्योंको बहुत सन्तान होंगी, परन्तु सबके छोटे शरीर होंगे और कोई भी शील और आचारको नहीं करेगा। उस समयमें स्त्रीलोग, मुखसे मैथुन करेंगी; उस समय सब नगरोंमें अकाल पड़ जायगा। सब पुरुष अन्न बेचनेवाले। ब्राह्मण लोग वेद बेचनेवाले और स्त्रीलोग योनि बेचनेवाली हो जायंगी। हे पृथ्वीनाथ! गाय बहुत कम दूध देने लगेंगी; वृक्षों पर फल बहुत कम आवेंगे, कौवे बहुत बढ़ जायेंगे, ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंको मारनेवाले और मिथ्यावादी राजाओंसे प्रतिग्रह ग्रहण करने लगेंगे। लोभ और मोहसे भरे हुए धार्म्मिक चिह्नधारी होकर बार बार चोरी करनेमें प्रवृत होंगे; गृहस्थ लोग राजकरसे पीड़ित होकर वञ्चनापूर्व्वक अर्थसंग्रह करने लगेंगे। द्विज लोग कपटसे मुनियोंका वेष बनाकर घूमेंगे। कलियुगमें ब्राह्मण लोग वृथाही बाल और नाखूनोंको बढ़ावेंगे; धनके लाभसे अनेक लोग ब्रह्मचारी होंगे; कोई आश्रम ठीक नहीं रहेगा। सब लोग मदिरा पीने लगेंगे, सब लोग गुरुके आसन पर बैठने लगेंगे; उस समयके पुरुष केवल मांस और रुधिरके बढ़ानेहीको अपना कर्म्म समझेंगे। हे

पुरुषव्याघ्र! उस समयके पुरुष अनेक पाखण्डोंसे पूर्ण और पराये अन्नको प्रशंसा करनेवाले होंगे। उस युगके आनेसे ठीक समय पर इन्द्र वर्षा नहीं करेंगे और बीज भी अच्छी प्रकारसे उत्पन्न नहीं होंगे, ब्राह्मणादिक सब वर्ण हिंसा करने लगेंगे; उस समय सब ओर पापहीका फल दिखाई देने लगेगा। हे पृथ्वीनाथ! उस समय जो धर्म्म करेगा, वही थोड़े दिन जीयेगा। इस लिये सब जान जायंगे कि धर्म्म कुछ वस्तु नहीं है; उस समय सब लोग छल करके कपटके बाटोंको बनावेंगे। बनिये लोग अनेक प्रकारके छल करेंगे धर्म्मात्माओंकी हानि और पापियोंकी वृद्धि होगी। धर्म्म हीन और अधर्म्म बलवान हो जायगा, धर्म्म करनेवाले पुरुष थोड़े दिन जीनेवाले और दरिद्री होंगे; अधर्म्मी लोग दीर्घायु और धनवान होंगे, उस युगके अन्तमें अधर्म्मी लोग नगरोंमें आनन्द करेंगे। वे लोग अनेक अधर्म्मोंसे प्रजाको ठगेंगे। थोड़ा धन इकट्ठा होनेसे भी उन लोगोंको बहुत अभिमान होगा। उस समयके पुरुष अपने धनको बहुत विश्वाससे व्यवहार करेंगे, वे पापी लोग दूसरेके धन लेनेका बहुत उपाय करेंगे, वे निर्लज्ज लोग अपनी बातको कहेंगे, कि यह हमारी कही नहीं है। पुरुषोंको खानेवाले जन्तु, पक्षी और हरिन लोग नगरोंके बागोंमें और श्मशानोंमें विहार करने लगेंगे। दस अथवा बारह वर्षके लड़का सात अथवा आठ वर्षको लड़कीसे सन्तान उत्पन्न करेगा, सोलहवां वर्ष आनेसे पुरुष बूढ़े हो जायंगे, उनकी अवस्था बहुत कम होगी। हे महाराज! उस समयके बूढ़े तरुण और तरुण बूढ़ेके समान हो जायंगे। उस समयकी स्त्रियां अपने उत्तम पतिको धोखा देकर दास और पशुओंके संङ्ग विहार करेंगी। हे नरनाथ! वीरोंकी स्त्री भी दूसरे पुरुषोंका आश्रय लेंगी, वे लोग अपने जीते पतिको छोड़ दूसरोंसे व्यभिचार करेंगी। हे महाराज! जब ऐसा घोर युगका अन्त आवेगा, तब अनेक वर्षों तक जल नहीं वर्षेगा। हे पृथ्वीनाथ! उस समय वे थोड़े पराक्रमवाले जीव भूखसे व्याकुल होकर मर जायंगे। उस समय बहुत प्रकाशमान सूर्य्य उदय होंगे, वे सब समुद्र और नदियोंके जलको सुखा देंगे। हे भरतकुलसिंह! इस समय जो लाल और हरे तिनके और काठ दिखाई देते हैं, वे सब भस्म हो जायंगी, उस समय सब जगतको जलाने वाली आग सूर्य्यसे सुखाये हुए जगत्में वर्षेगी; वह इस पृथ्वीको भस्म करके पातालको जायगी, वहां दानव और यक्षोंको भस्म करेगी, नाग लोग और पृथ्वीको जला कर इन सबके नीचे चली जायंगी और वहां भी क्षण भरमें सब वस्तुओंको भस्म कर देगी। तब अस्सी लाख और अस्सी हजार कोस तक एक अशुभ वायु चलेगी। वह सबको भस्म कर देगी। वही अग्नि देवता, असुर, गन्धर्व्व, यक्ष और राक्षसोंके सहित सब जगत को जलावेगी। उसके पश्चात् बिजलीके सहित हाथियोंके समान शरीर अद्भुतरूपी मेघ आकाशमें उठेंगे; उनमें कोई नील मेघके समान रूप वाले, कोई लाल कोई काले और कोई पीले होंगे; कोई हल्दिके समान सुन्दर कोई कौवेके अण्डेके समान रूपवान, कोई कमलके पत्तेसे सुन्दर और कोई सिंगरिफके समान रंगवाले होंगे। कोई मेघ नगरके समान, कोई हाथियोंके झुण्डके समान शरीरवाले, कोई अनन्तके समान काले और कोई मगरके समान होंगे। हे महाराज! उस समय कोई बिजलीकी मालासे शोभायमान शरीरवाले घोर शब्द करते हुए मेघ निकलते हैं; तब वह मेघ सम्पूर्ण आकाश मण्डलमें छा जाते हैं, उनसे यह पृथ्वी सम्पूर्ण पर्व्वत और वनोंके सहित पूरित होकर जलसे भरजाती है। हे पुरुषश्रेष्ठ! तब वह

घोर शब्द करनेवाले मेघ परमेश्वरकी आज्ञासे चारों ओरसे पृथ्वीको डुबा देते हैं, बहुत जल बर्षाते हुए सम्पूर्ण पृथ्वी को भरदेते हैं, वह घोर भयानक जल अग्निको भी नाश कर देता है। परमेश्वरके भेजे हुए वह मेघ बारह वर्ष तक जल वर्षाकर प्रलय करते हैं। हे भारत! तब समुद्र अपनी मर्यादा छोड़कर पर्व्वतोंको डुबाने लगता है। सब पर्व्वत पृथ्वी सहित जलमें डूब जाते हैं। वह भ्रान्त मेघ वायुसे इधर उधरको नाश होते हैं। हे नरनाथ! तब उस भयानक पवनको ब्रह्मा पीकर कमल पर सो रहते हैं। उस महा प्रलयके घोर समयमें चर, अचर, देवता, असुर, यक्ष, राक्षस, मनुष्य, पशु, पक्षी और वृक्षादि नष्ट होजाते हैं। तब मैं अकेला केवल एकार्णवमें घूमा करता हूं। हे राजसत्तम! उस समुद्र पूरित घोर जलमें प्राणियोंको बिना देखे मैं बहुत विकल हुआ, तब बहुत दूर तक तैरता हुआ चला गया; दूर तक जाने परभी कहीं पर आश्रय न मिला; तब मैं थक कर बैठ गया; तब मैंने एक समय उस जलमें बड़ाभारी विशाल बड़ देखा। हे पृथ्वीनाथ! उस वृक्षकी एक बहुत लम्बी शाखामें दिव्य आभूषण पहिने हुए फूले कमलके समान नेत्रवाले और कमलके समान मुखवाले एक बालकको देखा; हे पृथ्वीपाल! उस बालक को देख कर हमको बड़ाही आश्चर्य हुआ, कि संसारके नाशके समय यह बालक कैसे बचा। हे प्रजानाथ! मैं यद्यपि योगदृष्टिसे भूत भविष्यत वर्त्तमानको देखता था तौभी उस बालकको न जान सका। तब अलसीके फूलके समान श्रीवत्समणि पहरे हुए साक्षात लक्ष्मीपतिके समान वह मुझे मालूम हुआ। तब वह कमलनेत्र बालक मुझसे कहने लगा, हे भार्गव! मैं तुमको जानता हूं, कि तुम थके हुए मार्कण्डेय मुनि विश्राम चाहते हो। हे मार्कण्डेय! जब तक विश्राम करना चाहिये, तब तब हमारे यहां आकर विश्राम करो, पश्चात् मेरे शरीरमें प्रवेश करके आनन्दसे रहो, हम तुम पर प्रसन्न हैं। हे राजन्! तब उस बालकके ऐसे वचन सुनके मुझे अपने अधिक जीने और अपने मनुष्यपने पर ध्यान आया। तब उस बालकने अपने मुखको बहुत फैलाया, मैं बेवश होकर उसके मुहमें घुस गया। तब मैंने उसके पेटमें जाकर देखा, कि सम्पूर्ण पृथ्वी समेत नगर और बन विराजमान हैं; गङ्गा, जमुना, सतलज, सीता, कौशल्या, चम्बल, वेत्रवति, चन्द्रभागा, सरस्वति, सिन्धु, व्यासा गोदावरी, बस्वोक सारा, ताम्रा, वेणा, पवित्र जलवाली वेणा, कृष्णावेणा, महानदी, इरामा, वितस्ता, कावेरी, शोण भद्र, विशल्या, पुनपुना, हे महाराज! जिन नदियोंको मैंने पृथ्वीमें देखा था, उन सब नदियों को उस महात्मा बालकके पेटमें देखा। हे शत्रुनाशन! अनेक जल जन्तुओंसे भरे रत्नोंकी खान समुद्र को भी मैंने वहां देखा, उस बालकके पेटमें आकाशमें प्रकाशलान सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निको देखा, हे राजन्! अनेक बनोंसे शोभायमान ऐसी पृथ्वीको देखा, जिसमें सहस्रों ब्राह्मण यज्ञ कर रहे थे, अनेक क्षत्रिय लोग प्रजापालनमें तत्पर, वैश्य खेतीमें लगे हुए थे; शूद्र लोग द्विजातियोंकी सेवामें लगे थे; उसकेपेटमें कुछ दूर आगे चलके हिमाचल पर्व्वतको देखा। हेमकूट, निषध, चांदीसे भरे हुए श्वेतगिरी को देखा। हे राजन्! गन्धमादन पर्व्वत को, मन्दराचलको, नीलगिरी, महापर्व्वत मेरुको भी देखा। महेन्द्र पर्व्वतको, विन्ध्याचलको, मलयगिरको पारपात्र पर्व्वतको इनको आदि लेके और जितने पर्व्वत हैं सबको उस बालकके पेटमें देखा। यह सब पर्व्वत अनेक रत्नोंसे भरे हुए विराजमान थे। हे राजन्! सिंह, व्याघ्र शूकर आदि अनेक प्रकारके जीव जन्तुओंको उसके पेटमें देखा। मैं उसके पेटमें इधर उधर विचरने लगा। हे

नरसिंह ! उसकी कोखमें घूमते मैंने इन्द्रादिक सम्पूर्ण देवताओंको देखा। साध्य, रुद्र, आदित्य गुह्यक, पितर, सर्प, नाग, सुपर्ण, वसु, अश्विनि-कुमार, गन्धर्व्व, अप्सरा, ऋषि, यक्ष, दैत्यों और दानवोंके समूहोंको मैंने वहां देखा। हे नर-नाथ ! मैंने वहां पर सिंहिकाके पुत्र देव-शत्रु, केतु आदिक तथा जङ्गलके सब चर अचरकी जो इस लोकमें देखा था, उन सबोंको महात्मा बालकके पेटमें देखा। इस जगत्को देखते हुए मैं फलाहार करके जीने लगा। हे राजन्! उस बालकके पेटमें मैं इसी तरह कई सौ वर्ष तक घूमता रहा। परन्तु उसके शरीरका अन्त न मिला। हे पृथ्वीनाथ! मैं उसके शरीरमें घूमता और सोचता था, कि इस पुरुष-के शरीरका अन्त कहां है, परन्तु मुझे उसका अन्त न मिला। तब मैं उसी वरदेनेवाले देवताकी विधि पूर्व्वक मन और कर्म्मद्वारा शरणमें गया। हे नरनाथ! तब मैं उस महात्माके सांसके सङ्ग बाहर आपड़ा। हे पृथ्वीनाथ! उस बटकी शाखा पर सम्पूर्ण जगत्को लेकर वह बालक विराजमान था। मैंने बाहर आकर श्रीवत्समणिसे आभूषित उस तेजवाले बालक को देखा। तब उसने महा शोभायमान पीतवस्त्रधारी प्रसन्नमुखसे कहा, हे मार्कण्डेय ! तुम मेरे शरीरमें घूमनेसे बहुत थक गये हो ; हे राजन् ! तब मेरी एक मुहूर्तके पश्चात् नयी दृष्टि उत्पन्न हुई। तब मैंने अपनेको छुटा हुआ देखा। उसके तांबेके समान लाल प्रतिष्ठित कोमल उंगलियोंसे शोभायमान दोनों चरणोंको सिर पर रख कर प्रणाम किया और उस अतुल प्रतापी बालकके भावको जाना। विनयपूर्व्वक हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ा हुआ और प्रणाम करके प्रश्न किया, कि हे देव ! मैं आपको और आपकी उत्तम मायाको जानना चाहता हूं। मैं आपके मुखमें होकर शरीरके भीतर चला गया था ; वहां मैंने आपके पेटमें सम्पूर्ण जगत्को देखा था। हे देव ! आपके शरीरमें देवता, दानव, राक्षस, यक्ष, गन्धर्व्व, नाग आदि सब चराचर विराजमान हैं। हे देव ! आपकी कृपासे मेरी स्मृति नष्ट नहीं होती है ; मैं आपके शरीरसे निकलकर शीघ्रतासे बाहर आया हूं और आपको जानना चाहता हूं कि आप कौन हैं? हे कमल-नयन ! आप बालक होकर और सब जगत्को पीकर इस जगह क्यों सोते हैं ? आप यह सब वृत्तान्त मुझसे कहिये। हे शत्रुनाशन ! किस-कारणसे सम्पूर्ण जगत आपके शरीरमें है; और कितने काल तक आप इस स्थान पर रहेंगे, मैं इन सबको जाननेके वास्ते पूछना चाहता हूं। आप विस्तारपूर्व्वक वर्णन कीजिये, जो मैंने आपके शरीरमें देखा यह बहुत विचित्र है। हे राजन् युधिष्ठिर ! मेरे ऐसे वचन सुन कर वह प्रकाशमान देवोंके देव ऐसे वचन मुझे समझाते हुए बोले।

१८८ अध्याय समाप्त।

देव बोले, हे ब्राह्मण ! मुझे यथार्थ रूपसे देवता लोग भी नहीं जानते हैं; किन्तु तुम्हारी प्रीतिसे मैं इस प्रलयके वृत्तान्तको सुनाता हूं ; तुम पितृभक्त हो और मेरी शरण आये हो ; विशेषतः तुमने ब्रह्म-चर्य्य भी बहुत किया है। हे विप्रर्षे ! पुराने कर्म्म करनेवालोंने जलकी नार संज्ञा लिखी है। वह नार जिसका स्थान हो उसे नारायण कहते हैं। हे ब्राह्मण मैंही नारायण सम्पूर्ण जगतका उत्पन्न करनेवाला और नाश करनेवाला हूं, मैंही विष्णु, मैं ब्रह्मा, मैं देवतोंका स्वामी इन्द्र, मैं कुवेर और मैंही प्रेतोंका स्वामी राजा यम हूं। मैं शिव, चन्द्रमा कश्यप, और प्रजापति तथा धाता विधाता और यज्ञ हूं। मेरा मुख अग्नि, पैर पृथ्वी, सूर्य्य, चन्द्रमा नेत्र, अन्तरीक्ष शिर, दिशा कान, जल पसीना, आकाश शरीर, वायु मन

है। हे ब्राह्मणोत्तम! मैंने भारी दक्षिणा वाली सैकड़ों यज्ञ की है; वेदके जाननेवाले मुझ यज्ञस्थितको पूजा करते हैं; पृथ्वीमें क्षत्रिय राजा लोग स्वर्गकी इच्छासे मेरे लिये यज्ञ करते हैं, ऐसेही वैश्य लोग स्वर्ग जीतनेकी इच्छासे मुझे पूजते हैं। मैं चारो समुद्रों और मेरु पर्व्वतको धारण करता हूं। मैंही पहले वाराह रूप धारण करके जलमें डूबती हुई पृथ्वीको निकाल लाया था। हे द्विज-सत्तम! मैं ही बड़वानल होकर सम्पूर्ण जलको पी जाता हूं और फिर उगल देता हूं। ब्राह्मण मेरा मुख, क्षत्रिय भुजा, वैश्य जंघा, शूद्र चरण हैं। ऋग्वेद सामवेद, यजुर्वेद, और अथर्व्व-वेद मुझसे ही उत्पन्न होते हैं और फिर मुझ-हीमें लय हो जाते हैं। परमस्थानवाले अपने आत्माको आहुति करनेवाले और काम क्रोध, राग, द्वेषसे रहित, अहङ्कारशून्य, आध्यात्मविद्याको जाननेवाले यति ब्राह्मण मेरी ही उपासना करते हैं। मैं ही प्रलयको अग्नि प्रलयका वायु और प्रलय का सूर्य हूं। हे ब्राह्मणोत्तम! यह जितने प्रकाशमान तारा दीखते हैं, उन सबको मेरा रोवां समझो। रत्नखान समुद्र और चारों दिशाको मेरा ओढ़ना और बिछावन समझो। यह सब वस्तु मैंनेही देवतोंकी कार्य्यसिद्धिके लिये अलग अलग रचो है। हे द्विजसत्तम! काम, क्रोध, लोभ, मोह, हर्ष, भय, यह सब मेरेही रोवें हैं। जिन उत्तम कर्म्मोंको करनेसे मनुष्योंको स्वर्ग मिलता है; वह सब तप, दान, सत्य और हिंसा मेरी बनाई और मेरे ही शरीरमें रहनेवाली हैं। मेरी इच्छासे जगत्‌के सब प्राणी चेष्टा करते हैं, अपने मनसे नहीं। भली भांति वेदको पढ़नेवाले शान्तआत्मा क्रोधको जीतनेवाले द्विजाति लोग जो अनेक प्रकारकी यज्ञ करते हैं, उन्हींको मैं प्राप्त होता हूं। बुरे कर्म्म करनेवाले, लोभी, कृपण, अपने आत्माके शत्रु मुझे नहीं पा सकते हैं। हे द्विज! जब जब धर्म्मकी हानि और अधर्म्मकी वृद्धि होती है, तब तब मैं अवतार लेता हूं। जब हिंसा करनेवाले देवताओंके मारनेके योग्य भयानक राक्षस उत्पन्न होते हैं, तब मैं पुण्यात्मा सुकर्म्म करनेवाले मनुष्योंके घरमें मनुष्य शरीर धारण करके उत्पन्न होता हूं। सुर असुर, गन्धर्व्व और राक्षसोंको बनाकर प्रलय-कालमें सबका नाश कर देता हूं, फिर सृष्टिके कालमें अचिन्त्यशरीर धारण करता हूं। इसमें केवल मनुष्योंके शरीरमर्य्यादा बांधनाही कारण है। सतयुगमें मेरा स्वरूप श्वेत, त्रेतामें पीला, द्वापरमें लाल और कलियुगमें काला रहता है। उस कलिकालमें अधर्म्मके तीन भाग रहते हैं। जब अन्त काल प्राप्त होता है, तब मैं अकेला तीनों लोकोंके सम्पूर्ण चराचरको नाश कर देता हूं। तीन मार्गवाला, संसारमें व्यापक, सब लोकोंको सुख देनेवाला प्रकट होता हूं। हे ब्राह्मण! मैंही इस कालचक्रको चला रहा हूं, मैं सब भूतोंको शान्त करनेवालेको उद्योगमें लगाने वाला हूं। हे मुनियोंमें उत्तम! सब भूतोंमें मेरा आत्मा सम्यक प्रणिहित है, किन्तु मुझको कोई भी यथार्थ रूपसे नहीं जानता है। हे विप्रेन्द्र! मैंही सबमें व्यापक हूं, संसारमें सब भक्त मेरी पूजा करते हैं। हे द्विज! तुमने जो मेरे शरीरमें दुःख पाया, वह सब तुम्हारे वास्ते सुख और कल्याण देनेवाला होगा। जो तुम संसारमें स्थावर, जङ्गम देखते हो, यह सब मेरी ही आत्मा हैं। मेरे शरीरका आधा भाग ब्रह्मा हैं और आधा शङ्ख, चक्र, पद्म धारी मैं नारायण हूं। हे विप्रर्षि! जब तक चारों युग हजार बार बीतते हैं, तबतक मैं सब प्राणियोंको मोहित करके सोता हूं। हे मुनिसत्तम! उसी प्रलयकालसे मैं यहां सो रहा हूं। यद्यपि मैं बालक नहीं हूं, तौभी बालकरूप मैं तबतक रहूंगा जब

तक ब्रह्मा न जागें। हे ब्राह्मणोत्तम! मैं ब्रह्मरूपी हूं, मैंने तुम्हें वरदान दिया है। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ हूं। तुम जो स्थावर जङ्गमको जलमें डूबा हुआ देखकर घबराये थे, इसलिये मैं ने शरीरके भीतर तुम्हें जगत् दिखलाया। जब तुम मेरे शरीरके भीतर गये थे, तब सम्पूर्ण जगतको देखकर घबड़ा गये थ और थक गये थे, इस लिये हमने शीघ्रतासे तुमको बाहर निकाल दिया। मैं ने अपने उस स्वरूपको तुमसे वर्णन किया जिसे देवता और असुर नहीं जान सकते हैं। हे विप्रर्षे! जब तक ब्रह्मा न जागें, तब तक सुखपूर्व्वक तुम यहीं विश्राम करो। जब सब लोकोंके पितामह ब्रह्मा जागेंगे तब फिर मैं सृष्टिका आरम्भ करूंगा। आकाश पृथ्वी ज्योति, वायु और जल जो कुछ लोकमें चाहिये सबको मैं बनाऊंगा। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे प्यारे! वह अद्भुत देव ऐसा कहकर अन्तर्द्धान होगये। मैं ने वहां पर और अनेक प्रकारकी सृष्टि देखी। हे राजन्! उस प्रलयमें मैं ने बहुत आश्चर्य्य देखा। हे सब धर्म्म कर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ! जिस कमलनेत्र देवताको उस समय देखा था, ये वही जनार्द्दन तुम्हारे सम्बन्धी हैं, इन्हीके वरदानसे मेरी स्मृति नष्ट नहीं होती है। हे कुन्तीनन्दन! इन्हीकी कृपासे मरना मेरे आधीन है और मेरी आयु बड़ी हुई। यह वही वृष्णिवंशी पुराण-पुरुष व्यापक अचिन्त्यात्मा महाभुज क्रीड़ा करनेवाले कृष्ण हैं। यही धाता बिधाता जगत्‌के धारण करनेवाले, गोबिन्द प्रजापति और प्रभु हैं। इनको देखकर मुझे स्मरण आगया, कि यही आदिदेव व्यापक आदि देवपति वस्त्रधारी विष्णु हैं, यही सब प्राणियोंके माता पिता लक्ष्मीपति हैं। हे कुरु-श्रेष्ठ! तुम इन्ही शरणागतवत्सलकी शरणमें जाओ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! कुन्ती-पुत्र पाण्डव मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुनकर कृष्णको नमस्कार करने लगे, कृष्णने भी पुरुषसिंह पाण्डवोंको शान्त किया

मार्कण्डेय नारायण सम्वाद और
१८८ अध्याय समाप्त।

कलियुग विवरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! कुन्ती-पुत्र युधिष्ठिरने महामुनि मार्कण्डेयसे जगत्‌की होनेवाली गति और अपने कर्त्तव्यको फिर पूछा। राजा युधिष्ठिर बोले, हे भार्गव! हे महामुने! तुम्हारा वृत्तान्त बहुत आश्चर्य्यका देनेवाला है; इस कलियुगमें धर्म्म नाश होनेपर क्या होगा? मनुष्य कैसे पराक्रमी कैसे आहार विहारवाले, कितनी अवस्थावाले और कैसे वस्त्र-वाले होंगे। युगके नाशमें मनुष्य कैसे होंगे तथा कौनसी अवधिको पाकर फिर सतयुग आवेगा? हे मुनि! विस्तारपूर्व्वक आप मुझसे कहिये. यह मुझे बहुत अचर्य्य मालूम देता है। इस प्रकारसे मुनिश्रेष्ठ मार्कण्डेय युधिष्ठिरके वचन सुन करके वृष्णिवंशी कृष्ण और पाण्डवोंसे कहने लगे।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! प्रथम जो मैंने देखा, सुना तथा अनुभव किया है, और हे राजेन्द्र! देवादि देव विष्णुको कृपासे संसारका भविष्यत वृत्तान्त जैसा मैं जानता हूं, उसके अनुसार कलियुगका वृत्तान्त कहता हूं सुनो। सतयुगके मनुष्योंमें कपटरहित धर्म्म वृषके चारो पैरोंसे विद्यमान था। हे भरतर्षभ! त्रेतायुगमें धर्म्मके तीन भाग थे और एक भाग अधर्म्मसे नष्ट हो गया था; द्वापरमें आधे धर्म्मको अधर्म्मने नष्ट कर दिया; हे भरतसत्तम! कलि युगकी सन्धिमें धर्म्मके तीन अंश नष्ट होगये और कलियुगमें चौथा अंश धर्म्मका मनुष्योंमें रहता है। हे पाण्डव! सुनो। आयु, पराक्रम, बुद्धि, बल और तेज युग युगमें ह्रास हुआ करता है। हे युधिष्ठिर! कलियुगके ब्राह्मण, शूद्र सबही-

कपटसे धर्म्म करते हैं, सबही धर्म्मको बेचनेवाले होते हैं। पण्डित मानी वही सत्यको घटा देते हैं, और सत्यकी हानिसे मनुष्योंकी अवस्था थोड़ी होती है। आयुके क्षीण होनेसे आजीविका नहीं करसक्ते हैं। कलियुगके मनुष्य विद्या-हीन, विज्ञानरहित और लोभी होते हैं। काम और क्रोधसे पूरित वैरसे भरे हुए एक दूसरेको मारनेकी इच्छा करनेवाले ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रोंके समान तप सत्यसे रहित हो जायंगे। नीच उत्तम और उत्तम नीच हो जायंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें सब लोग ऐसे ही जायंगे। वस्त्र सनके बनने लगेंगे और धान्य कोरदूषक श्रेष्ठ होंगे; पुरुष केवल अपनी स्त्री हीको प्यार करेंगे। मछलीका व्यवहार करके जीयेंगे। बकरी तथा भेड़ीको दुहेंगे; गौ नष्ट हो जायंगी। जो व्रतको धारण करनेवाले हैं, वेभी लोभी हो जायंगे, आपसमें एक दूसरेको चोरी करेंगे। मारामारी करेंगे, जप नहीं करेंगे, नास्तिक हो जायंगे, चोर हो जायंगे नदियोंके किनारेपर औषधियोंको बोवेंगे और वेभी थोड़ी फलवाली होंगी। जो व्रतधारी ब्राह्मण हैं, वेभी लोभके वश होकर पितरोंके श्राद्धमें भोजन करेंगे। पितापुत्रका अन्न भोजन करनेवाले और पुत्र पिताका अन्नके भोजन करनेवाले होंगे। भोजनका व्यवहार बहुत उलट पुलट हो जायगा; ब्राह्मण लोग व्रत नहीं करेंगे वेदकी निन्दा करेंगे। कुतर्कोंसे मोहित होकर यज्ञ होम कुछ नहीं करेंगे, किसान लोग नीची भूमिमें खेती करेंगे। हलमें गौको जोड़ेंगे; एक वर्षके बछड़ेको जोतेंगे। हे राजन्! पिता पुत्रको और पुत्र पिताको मार कर निन्दित नहीं होंगे, सम्पूर्ण पृथ्वी म्लेच्छोंसे भर जायगी, सब क्रिया और यज्ञसे रहित हो जायंगे, सब लोग आनन्दसे और उत्सवसे रहित हो जायंगे। प्रायः मनुष्य कृपण होंगे, भाई और विधवाओंसे धन हरेंगे; थोड़े वीर्य्य और बलवाले, कर्कश, लोभ मोहसे भरे, अपनी प्रशंसासे प्रसन्न होनेवाले मनुष्य होंगे; कपट व्यवहारसे पूरित, जूआ खेलनेवाले और पापी राजा होंगे। हे कुन्ती-पुत्र! परस्पर वैरवाले, पण्डित मानी और लोककण्टक क्षत्री कलियुगमें होते हैं; प्रजाको रक्षासेहो लोभी अहंकारी पाखण्डी केवल दण्ड देनेवाले क्षत्री होते हैं। हे भारत! साधु लोगोंको दबा कर उनके धन और स्त्रीको दुष्ट लोग हरते हैं। न कोई कन्यादान मांगता है और न कोई कन्या दान देता है। युगके अन्तमें आपही सब परस्पर विवाह करते हैं। राजा लोग असन्तोषी सब उपायोंसे पराये धनको छीननेवाले, युगके अन्तमें होते हैं। हे राजन्! युगके अन्तमें सब जगत् म्लेच्छ हो जायगा, एक हाथ दूसरे हाथकी वस्तुको चोरावेगा। सब लोग सत्यको छिपावेंगे, सब लोग अपनेको पण्डित मानेंगे, बालकोंकी बुद्धि बूढ़ोंकीसी और बूढ़ेकी बालक कीसी होजायगी। जब युगका अन्त आवेगा, तब डरपोक लोग अपनेको वीर कहेंगे और वीर लोग डरपोक होकर बैठेंगे। एक दूसरेको विश्वास नहीं करेगा, सम्पूर्ण जगत् लोभ और मोहसे भर जायगा, अधर्म्मकी वृद्धि और धर्म्मका नाश हो जायगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य कोईभी श्रेष्ठ नहीं रहेगा, सब शूद्र हो जायंगे। युगके अन्तमें नामको केवल शुद्ध वर्ण रह जायगा। पुत्र पिताको और पिता पुत्रको नाश करेंगे, स्त्री पतिकी सेवा नहीं करेंगी, जौ गेहूं, आदि अन्न उत्पन्न होंगे वह देशान्तरको चले जायंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें स्त्री और पुरुष सब इच्छाचारी हो जायंगे, कोई भी एक दूसरेकी बातको नहीं सुनेगा। हे युधि-ष्ठिर! सब जगत् म्लेच्छ हो जायगा। कोई मनुष्य देवतोंको पूजा श्रद्धासे नहीं करेगा, हे नरनाथ! कोई न किसीका गुरु होगा न किसीका चेला होगा, सब जगत् अन्धकारमय

हो जायगा। युगके अन्तमें मनुष्यकी परम आयु सोलह वर्षकी होजायगी। तब युगके अन्तमें सब प्राणी नष्ट हो जायंगे, पाचवें या छठें वर्षमें कन्याके पुत्र होगा। सातवें वर्षके मनुष्य पुत्र उपजावेंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें पति स्त्रीसे और स्त्री पतिसे सन्तोष न पावेंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें थोड़े धनवाले मनुष्य होंगे, वृथा इन्द्रियवाले और न कोई किसीका दानी होगा। देश दूकानोंसे भर जायंगे। चौराहे शिवालयोंसे भर जायंगे और स्त्रियोंके शरीर पर रोम भर जायंगे, सब लोग स्वेच्छाचारी हो जायेंगे, सब भच्य खायेंगे, सब कठोर कर्म्म करनेवाले हो जायेंगे। हे राजन्! इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! वे देने और लेनेके समय सब सबको ठगेंगे; हे राजन्! युगका अन्त आनेपर ज्ञानको बिना जाने लोग आपही सब क्रिया करेंगे। अपनी रुचिके अनुसार बरतेंगे, स्वभावहीसे सब लोग कुकर्म्म करेंगे, तौभी परस्पर सब आपसमें प्रशंसा करेंगे। हे राजन्! कलियुगके मनुष्य बाग और वृक्षोंको वृथाही नष्ट करेंगे; हे राजन्! सबको अपने जानेकी शंका रहेगी, सब लोग लोभसे भरे ब्राह्मणोंको मारेंगे और उनके धनसे भोग करेंगे। ब्राह्मण लोग शूद्रोंके डरसे हाहाकार मचावेंगे; कोई जगत्में उनकी रक्षा करनेवाला न होगा। वे इधर उधर मारे फिरेंगे, हे राजन्! जब जीवोंके नाश करनेवाले भयानक प्राणियोंके हिंसक मनुष्य होंगे, तब युगका अन्त होगा। हे कुरुकुलनाथ! द्विज-लोग नदी और दुर्गम पहाड़ोंपर भयके मारे छिपेंगे। हे कुरुश्रेष्ठ! राजदण्डसे पीड़ित होकर द्विज लोग ऐसे घबड़ायंगे जैसे बधिकोंसे गो घबड़ाती हैं। दुष्ट राजोंकी प्रजा करभारसे पीड़ित हो जायगी। हे महिपाल! युगके अन्तमें शूद्रोंके नौकर धैर्य्यको त्यागकर अनेक कुकर्म्म करेंगे, शूद्र धर्म्म उपदेश करेंगे और ब्राह्मण उनके श्रोता तथा उपासक होंगे। यह सब लोक विपरीत हो जायंगे, हड्डियोंकी बनी हुई कुटियोंको लोग पूजा करेंगे और देवतोंको त्याग देंगे; शूद्र लोग ब्राह्मणोंकी सेवा न करेंगे। ऋषियोंके आश्रममें, ब्राह्मण और देवतोंके स्थानमें, अटारियोंमें, नागोंके स्थानोंमें हड्डियें भर जायंगी, देवभाव जाता रहेगा, हे राजन्! युगके अन्तमें यह लक्षण होंगे। पृथ्वी भयानक मालूम होने लगेगी, सब लोग मांस खाने और मदिरा पीने लगेंगे। अकालमें मेघ बर्षेंगे, मनुष्योंको क्रियाका समय न रहेगा, शूद्र ब्राह्मणोंसे वैर करेंगे, पृथ्वी म्लेच्छोंसे भर जायगी, ब्राह्मण लोग कर भारसे पीड़ित होकर इधर उधर भाग जायंगे, सब देश एकसे हो जायंगे। नशोंसे व्याकुल रहेंगे, आश्रमोंको कोई पावेगा नहीं, सब लोग फल मूल खाकर जीयेंगे। हे राजन्! जब ऐसे मर्य्यादा-रहित लोग हो जायंगे, तब युगका अन्त समझना। शिष्य गुरुका उपदेश नहीं सुनेंगे, गुरुका अप्रिय कार्य्य करेंगे, आचार्य्योंकी दरिद्र लोग निन्दा करेंगे, सोभी धर्म्मके वास्ते नहीं धन लेनेके वास्ते। युगके अन्तमें सब प्राणियोंका अभाव हो जायगा; दिशा जलने लगेंगी, तारे छिप जायंगे, प्रकाशित चीज उलटी हो जायंगी, वायु भयानक उलटा चलने लगेगा, अनेक उल्कापात भयको बढ़ाने वाले हुआ करेंगे; ६ और सूर्य्योंके सहित यह सूर्य्य प्रकाशित होंगे, भयानक शब्द होंगे दिशा जलने लगेगी, राहुमें सूर्य्य छिपेगा। भगवान् इन्द्र अकाल बर्षा करेंगे, खेतसे अन्न उत्पन्न नहीं होगा, स्त्री अपने पतियोंको कटु बात कहेंगी गाली देंगी, पतियोंके वचनोंको न मानेंगी, पुत्र माता पिताओंको मारेंगे, स्त्री पतिको मारेंगी, पुत्रोंको परित्याग कर देंगी। हे महाराज! बिना योग केही राहु सूर्य्यको ग्रहण करेगा। युगके अन्तमें बहुत अग्नि लगेगी, मार्ग चलनेवालोंको मार्ग नहीं मिलेगा, व-

ठहरनेको स्थान मिलेगा. वह रात्रिको मार्गमें विश्राम करेंगे, कोव्वे। नाग, पच्ची,मृग भयानक और रूखे शब्द करेंगे। मित्र और सम्बन्धियोंको मनुष्य छोड़ देंगे, जन्मभूमि और देशको त्याग देंगे, और नगरोंमें जा बसेंगे। हा पुत्र हा प्यारे! ऐसे एक दूसरेके लिये रोते हुए मनुष्य पृथ्वी पर मरेंगे। युगनाशकी ऐसी भयानक अवस्थामें क्रमसे ब्राह्मण लोग नष्ट हो जायंगे,। कुछ कालके पश्चात् दैवकी कृपासे फिर संसारकी वृद्धि होगी। जब सूर्य्य, चन्द्रमा और बृहस्पति पुष्य नचत्रमें आवेंगे, तब फिर सतयुग होगा। उस समयमें प्रारम्भ मेघ समय पर वर्षेंगे, नचत्र प्रकाशित होंगे, सब ग्रह आकाशमें अपनी शुद्ध गतिसे चलेंगे; रोग जाता रहेगा सुकाल होगा। हे राजन्! उस समयमें कलकि विष्णु-यश नामक ब्राह्मण उत्पन्न होगा, वह महा-बली, पराक्रमी, महा बुद्धिमान, होगा। सम्भल गांवके एक ब्राह्मणके घरमें उत्पन्न होगा, उसे शस्त्र और वाहन आपसे आप प्राप्त होगा, उसके पास बड़े बड़े योधा अस्त्र-शस्त्र लिये आपही आजायंगे, वह धर्म्मसे जगत्‌को जीत कर एक चक्रवर्त्ती राजा होगा वह इस व्याकुल हुए जगत्‌को प्रसन्न करेगा, वह तेजस्वी उदार-बुद्धि ब्राह्मण जगतकी रचा करेगा, वह कलि-युगका अन्त करेगा और सब छोटे छोटे म्लेच्छोंको ब्राह्मणोंके सहित नाश करेगा।

कलियुग विवरण और

१९० अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! इस तरहसे दस्युओंका नाश करके अश्वमेध यज्ञ करके वह सम्पूर्ण पृथ्वीको ब्राह्मणोंको दान कर देगा, पवित्र मर्य्यादाको स्थापित करके वह आप रमणीय बनको चला जायगा, संसारके मनुष्य उसीके उपदेशके अनुसार सुकर्म्म करेंगे ब्राह्मणो-के उपदेशानुसार सत्यमें फिर बाह्मण होगा। काला मृगचर्म्म ब्रह्मचारी ओढ़ेंगे, त्रिशूल आदि शस्त्र चत्री लोग धारण करेंगे। वह ब्राह्मणश्रेष्ठ कलकि अपने जीते हुए देशमें धर्म्मकी स्थापन करके ब्राह्मणोंसे प्रशंसा पाकर ब्राह्मणोंका सम्मान करके पृथ्वी परसे शत्रुओंका नाश करके विचरेगा। डाकू लोग हाय मा, हाय बाप, हाय प्यारे ऐसा भयानक शब्द करके कलकिके हाथसे मारे जायंगे; तब हे भारत! अधर्म्मका नाश और धर्म्मकी वृद्धि होगी उस सतयुगमें सब मनुष्य क्रियावान होंगे। बाग, तलाव, पोखर, देवतोंके स्थान, यज्ञ और क्रिया आनन्द पूर्व्वक सतयुगमें सब लोग करेंगे। ब्राह्मण साधु, मुनि तपस्वी, सत्य बोलनेवाले, प्रजाके लोग होंगे। पृथ्वीमें बोये हुए बीज अच्छे फल देंगे, सब ऋतुओंमें खेती उत्तम होगी। सब मनुष्य दान, तपस्या, व्रतमें लगे रहेंगे; ब्राह्मण लोग जप,यज्ञ और धर्म्म कार्मोमें चित्त लगाये रहेंगे, वैश्य लोग व्यापार करेंगे। हे राजन्! ब्राह्मण छः कर्म्मोंके करनेवाले, चत्रिय बलवान, शूद्र तीनो वर्णोंकी सेवा करनेवाले होते हैं। यह धर्म्म सतयुग त्रेता,द्वापरमें रहते हैं। कलियुगका धर्म्म पहिलेही कह चुका हूं। हे पाण्डव! सब युगोंकी संख्या तुमको मालूम होगयी। यह मैंने तुमसे इसके भूत और भविष्यत सब कहा, इस तरहसे मैंने संसारको गति दीर्घ आयु होनेके कारण आपही देखी और भोगी है, उसीके अनुसार तुमसे वर्णन की।' हे अच्युत धार्मिक वर! धर्म्म सन्देह मिटानेके वास्ते भाइयोंके सहित मेरे वचनको सुनो। हे धर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर! तुमको अपना चित्त धर्म्महीमें लगाना चाहिये; क्योंकि धर्म्मात्मा इस लोक और परलोकमें सुखी रहते हैं। हे पापरहित! मैं तुमसे कल्याणकारी वचन कहता हूं उनको; समझो ब्राह्मणका कभी अपमान तुम मत करना। ब्राह्मण क्रोध करने

पर प्रतिज्ञा पूर्व्वक संसारका नाश कर सकता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषश्रेष्ठ बुद्धिमान तेजस्वी महाराज युधिष्ठिर मार्कण्डेयका वचन सुनकर बोले, हे मुनि! हम प्रजाकी रक्षा करनेके लिये कौनसे धर्म्मको करें, वह कौनसा कर्म्म है, जिसमें मेरा धर्म्म नष्ट नहो? मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! तुम कृपावान सब प्राणियोंके हिताभिलाषी निन्दा रहित, सत्यवादी, मीठे शिक्षायुक्त प्रजाकी रक्षामें तत्पर रहकर धर्म्म करो; अधर्म्मोंको त्यागो; देवता और पितरोंकी पूजा करो; जो कुछ कि तुमने प्रमादसे पाप किया हो उन्हें दानसे जीतो; अभिमान करना वृथा है; सदा शीलयुक्त रहो, सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर आनन्दसे भोगो; यह मैंने तुमसे भूत और भविष्यत धर्म्म कहा। हे प्यारे! पृथ्वीमें तुमसे कोई भूत और भविष्यत छिपा नहीं रहा, इस लिये अपने हृदयमें क्लेशको धारण मत करो। हे तात! बुद्धिमान लोग दुःखी होकर भी मोहको प्राप्त नहीं होते। हे महाभुज! यह सब देवतोंका समय है; इसमें सब प्रजा कालकी श्रेणीसे मोहित होती है, तुम मेरे कहे धर्म्ममें शंका मत करना। मेरे वचन शंकारहित हैं; मेरे वचनोंमें शंका करनेसे तुम्हारा धर्म्म लोप होगा। हे भरतर्षभ! तुम उत्तम कुलमें, उत्पन्न हुए हो; इस लिये मनसे कर्म्मसे वचनसे मेरे कहे कर्म्मको करो।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! जो आपने कानोंको सुख देनेवाले उत्तम वचन कहे, मैं आपकी इस आज्ञाको ऐसीही करूंगा, हे विप्रेन्द्र! मुझे लोभ, भय और मत्सर नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान मार्कण्डेय ऋषिके ऐसे वचन सुनकर कृष्ण, और पाण्डव लोग बहुत प्रसन्न हुए; विप्रर्षियोंके समान शोभावाले जो लोग वहां आये थे, बुद्धिमान मार्कण्डेयकी उत्तम और पुरानी कथा सुनकर सब विस्मित हुए।

१६१ अध्याय समाप्त।

महाराज जन्मेजय बोले, हे ब्रह्मन्! आप फिर ब्राह्मणोंकी माहात्म्य वर्णन करिये। जो कि महातपस्वी मार्कण्डेय मुनिने पाण्डवोंके निकट वर्णन किया था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! मार्कण्डेय मुनिसे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर फिर ऐसा बोले, कि आप और कुछ ब्राह्मणमाहात्म्य वर्णन कीजिये। मार्कण्डेय बोले, ब्राह्मणोंके चरित सुनो। इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए अयोध्याके राजा परीक्षित एक समय शिकार खेलने गये। वह अकेले घोड़े पर चढ़े हुए एक हरिणके पीछे दूरको चले गये। चलते चलते मार्गमें राजाको बहुत प्यास लगी और थकाई भी आगयी; राजाने बहुत सघन बनका टुकड़ा देखा। राजा उस बनके टुकड़ेके बीचमें चले गये, वहां पर उन्होंने एक बड़ा मनोहर तालाव देखा और घोड़ेके सहित उसमें नहाके तब राजा स्वस्थ होकर कमलोंकी डंटी (नाल) घोड़ेके आगे डालकर पोखरके किनारे बैठ गये। तब राजाने सोनेके समय मीठे स्वरके गीत सुने गीतोंको सुनकर राजा सोचने लगे कि यहां मनुष्य नहीं, पर गीत किसका है। इसके पश्चात् राजाने एक परम मनोहर रूपवाली कन्याको फूल बीनते हुए देखा, वह कन्या राजाके समीप आई; राजाने उस कन्यासे पूछा, कि तुम कौन और किसकी कन्या हो? वह बोली, मैं कन्या हूं। राजा बोले, मैं तुमको लेना चाहता हूं। तब कन्याने कहा, तुम इस समय एक प्रतिज्ञा करके मुझे ले सकते हो, मैं यह सत्य कहती हूं। राजाने कहा, कौनसी समय तक प्रतिज्ञापूर्व्वक

ले सकता हूं ? कन्याने कहा, जबतक मुझे जल न दीखे। राजाने कहा ठीक है। राजाने उससे विवाह करके परम आनन्दके साथ मौनी होकर उससे क्रीड़ा की। राजाके वहीं बैठे बैठे सेना आगई। कन्या राजा और सेनाको छोड़ अलग बैठ गई; तब राजाने उसे समझाकर और सम्मान करके पालकीमें चढ़ाया और अपने नगरमें लाके एकान्तमें क्रीड़ा करने लगे। राजा उसकी क्रीड़ामें ऐसे मग्न हुए, कि किसीको उनके दर्शनभी न होतेथे। एक दिन प्रधान-मन्त्रीने उनके समीपचारिणी स्त्रियोंसे पूछा कि क्या करना चाहिये ? स्त्रियोंने कहा कि मैं अद्भुत लीला देखती हूं, कि राजाके क्रीड़ास्थानमें जल नहीं जाता। राजा एक अपूर्व्व स्त्री लाये हैं, उसने उनसे कहा है कि, मुझे जल न दिखाना। राजा उसकी बात स्वीकार करके उसके सङ्ग क्रीड़ा करते हैं। तब प्रधान-मन्त्रीने एक बाग ऐसा बनवाया जिसमें पुष्प और फूलोंसे भरे वृक्ष थे किन्तु जल नहीं था। माधवीलताकुञ्ज-जालके बीचमें एक अमृतके समान जलसे भरी हुई बावड़ी बनाई थी। तब एकान्तमें जाकर राजमन्त्रीने कहा महाराज! एक विचित्रबन जलरहित बना है, आप उसमें चलके बिहार कीजिये। राजा मन्त्रीके वचनसे उस स्त्रीके सहित उस बनमें गये। एक दिन राजाको विहार करते करते प्यास लगी और बहुत थक गये, तब राजाने उस माधवीलताकुञ्जको देखा। तब राजा उस स्त्रीके सहित उस घरमें गये और स्वच्छ जलसे भरी उस बावड़ीको देखा और उसके किनारे पर रानीके सहित बैठ गये, रानीको कहने लगे देखो, यह क्या सुन्दर जल है, इसमें तुम स्नान करो। रानी राजाके वचन सुनके उस जलमें घसी और फिर न निकली। राजाने उस बावड़ीका सब जल निकलवा कर उसे बहुत ढूंढ़ा पर वह कहीं न मिली, किन्तु उस बावड़ीके एक गढ़ेमें एक मेढ़कका शब्द सुना। मेढ़कको देखकर राजाने आज्ञा दी कि सब मेढ़कोंको मार डालो। जो कोई मेढ़कको मार लावेगा उस राज्यसे धन मिलेगा। जब मेढ़कोंका भयानक वध आरम्भ हुआ, तो मेढ़क भयके मारे दशों दिशाको भागने लगे और मेढ़कराजसे जाकरके अपने दुःखको कहा। मेढ़कराजने तपस्वीका रूप धारण करके राजाके पास जाकर कहा, हे राजन्! क्रोधके वशमें न हो, कृपा करो, निरपराधो मेढ़कोंको मत मारो। यहां पर पुराणके दोश्लोक हैं। हे राजन्! तुम क्रोधको छोड़ो मेढ़कोंको न मारो, अविवेकीपुरुषका धन नष्ट हो जाता है, मेढ़कोंके मारनेसे तुम्हारी स्त्रीका शोक दूर नहीं होगा। इस अधर्म्म करनेसे तुम्हारा कोई हित नहीं होगा। ऐसे शोकसे भरे हुए वचन राजाने सुनकर कहा, हे विद्वन्! इन दुष्टोंने मेरी स्त्रीको खा लिया है, इस लिये मैं इनपर क्षमा नहीं कर सकता हूं, मेढ़क मेरे मारनेके योग्य हैं, आप न रोकिये। राजाके वचन सुन मेढ़कराज बहुत व्याकुल हुआ और कहने लगा। महाराज! कृपा कीजिये, मैं आयु नामक मेढ़कोंका राजा हूं, वह मेरी शोभना नामक कन्या थी, यह उसीकी दुष्टता है; इसी तरह उसने अनेक राजोंको ठगा है। राजाने मेढ़कराजसे कहा, कि उस कन्याको तुम मुझे देदो। मेढ़कराजने कन्यादान राजाको दे दिया और कन्यासे कहा, कि तुम इस राजाको सेवा करो; ऐसा कहकर अपनी कन्याको मेढ़क-राजने शाप दिया, कि जिस कारणसे तैंने बहुत राजाको ठगा है, इसलिये तेरे प्रमादसे तेरी सन्तान ब्राह्मणभक्त न हो। राजा परीक्षित उस स्त्रीको पाकर ऐसा आनन्दित हुआ, मानो तीनलोकका राज्य उसे मिला, आनन्दकी आंसू आंखोंमें भरकर मेढ़कराजसे बोला, कि आपने मुझे कृतार्थ किया। मेढ़कराजभी अपनी कन्याको

उपदेश देकर चले गये। कुछ कालके पीछे उस राजाको उसी कन्यासे तीन पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम शल, दूसरेका दल, तीसरेका वल उनमेंसे बड़े शलको राजा राज्य देकर तपस्या करनेकी इच्छासे बनको चले गये। एक समय राजा शल रथमें बैठकर शिकार खेलनेको गया, दौड़ते हुए मृगको देखकर राजाने सारथीको कहा कि शीघ्र मेरे रथको इसके पीछे ले चलो। सारथी बोला, हे राजन्! तुम इस मृगको नहीं पकड़ सकते हो; यदि तुम्हारे रथमें वामी घोड़े जुते होतेतो आप पकड़ सकते तब राजाने सूतसे कहा, कि बतला वामी घोड़े कहा हैं? नहीं तो मैं तुम्हें और खचरोंको मारडालूगा, राजाके ऐसे वचन सुनके सूत डरा और वामदेव ऋषिके शापसे डर कर कुछ न बोला। तब राजाने खड्ग उठाकर सूतसे कहा, कि जल्दी बतला नहीं तो मैं तुझको मारता हूं। तब सूत बहुत डर कर बोले, हे महाराज! वामदेव ऋषि के घोड़े, मनके समान चलनेवाले हैं। ऐसा सुन कर राजाने सूतसे कहा, वामदेव मुनिके आश्रम पर चल, ऋषिके आश्रमपर जाकर राजा ऋषिसे बोले, हे भगवन्! मेरे वाणसे विधा हुआ मृग भागा जाता है, आप मुझे घोड़े दीजिये, ऋषिने कहा अच्छा देता हूं, परन्तु अपना काम करके शीघ्र मुझे लौटा देना। राजा ऋषिसे घोड़े लेके ऋषिके आज्ञा-नुसार उनको रथमें जोड़ कर मृगको मारने चले, चलते चलते राजाने सूतसे कहा कि यह घोड़े रत्नके समान हैं इस लिये ब्राह्मणके पास रहने योग्य नहीं हैं, वामदेवको यह घोड़े नहीं देना चाहिये, ऐसा कह कर मृगको पकड़ लिया और अपने नगरको चलाआया और घोड़े वहीं रख लिया। तब ऋषिने विचारा, कि राजपुत्र युवा है। अपने कल्याण को नहीं सोचता, मेरे घोड़ोंको लेकर रमण करता है। एक महीना पूरा होनेके पश्चात् अपने शिष्यको वामदेवने राजाके पास भेजा, वामदेवने कहा, हे आत्रेय! राजासे जाकर कहना, कि तुम्हारा कार्य्य सिद्ध हो गया, अब घोड़े देदो। आत्रेयने राजासे जाकर ऐसाही कहा। राजाने आत्रेयको उत्तर दिया, कि यह रत्नके समान घोड़े राजोंके योग्य हैं, ब्राह्मणोंको घोड़ोंसे क्या काम, आप जाइये। आत्रेयने आकर वामदेवसे राजाके वचन कह दिये। राजाकी अप्रिय बातोंको सुनकर वाम-देवको बड़ा क्रोध हुआ और आपही राजाके पास जाकर घोड़े मांगे, पर राजाने न दिये। वामदेव बोले, हे राजन्! तुमने इन घोड़ोंसे अपना काम पूरा कर लिया; अब मुझे देदो, ब्राह्मण और क्षत्रियोंमें बहुत भेद है। वरुण तुमको अपने फांसीसे गलेमें न बांधे वैसा करो। राजा बोले, हे महर्षि वामदेव! ये बहुत सीधे और स्वरूपवान दोवैल ब्राह्मणोंकी सवारीके योग्य हैं, इन्हें तुम लेकर जहां इच्छा हो जाओ, ब्राह्मणको व्रत वेदाध्ययन है। वाम-देव बोले, हे राजन्! वेदही हमारे मुख्य हैं, तौभी इस लोकमें यह मेरी सवारी हैं; इस लिये मुझे देदो। राजा बोले, हे वामदेव! मैं तुम्हे चार गधे देता हूं; उन पर चढ़कर जहां चाहो वहां जाओ, अथवा यह वायुके समान चालवाली खचरी लेलो, परन्तु यह दोनो वामी घोडि क्षत्रियोंके योग्य हैं, इस लिये मेरे समझो। वामदेव बोले हे राजन्! यह ब्राह्मणोंकी घोर प्रतिज्ञा है, कि अपराधी क्षत्रियोंको जीने नहीं देते। इस लिये चार भयानक राक्षसोंको मैं आज्ञा देता हूं, कि वे तुम्हें त्रिशूल धारण करके मारडालेंगे। राजा बोले, हे वामदेव! जो तुम्हें ब्राह्मण जानते हैं, वह मन और वचनसे कभी नहीं मारते; अब मेरी आज्ञासे शस्त्रधारी वीर शिष्य सहित तुम्हें मारडालेंगे। वामदेव बोले हे राजन्! यह घोड़े मेरे हैं, 'तुमको फिर दे दूंगा' ऐसा कहके तुम घोड़े लाये थे, -

पर तुम जो जोना चाहते हो तो मेरे घोड़े सुझे देदो। राजा बोले हे द्विज! ब्राह्मणोंको शिखार खेलना नहीं होता; मैं असत्य वादीको दण्ड दूंगा और इसीसे मैं उत्तम लोक को प्राप्त होऊंगा। वामदेव बोले, हे राजन! ब्राह्मणोंको मन और वचन सेभी दण्ड नहीं दिया जाता। जो श्रेष्ठ विद्वान हैं, वही इस लोकमें जीते हैं।

श्री मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन! वामदेवके ऐसे बोलतेही घोररूपी राक्षस हाथमें त्रिशूल लिये आकर राजाको मारने लगे। तब राजाने कहा, कि चाहे इक्ष्वाकु वंशका नाश हो जाय, चाहे दल मारा जाय, तौभी वामदेवके घोड़े नहीं दूंगा। ऐसे कहतेही कहते राक्षसोंने राजाको मार डाला। इक्ष्वाकुवंशियोंने राजा शलको मरा हुआ देख, उसके छोटे भाई दलको राज्यतिलक दिया, तब वामदेवने राज्यमें आकर कहा, कि ब्राह्मणोंका धन देदो, क्योंकि यह सब धर्म्मोंमें लिखा है, कि ब्राह्मणोंका धन कभी नहीं रखना चाहिये, हे राजेन्द्र! यदि तुम अधर्म्मसे डरते हो तो मेरे घोड़े जलदी दे दो। वामदेवके वचन सुनके राजा दलने क्रोध करके सूतसे कहा, कि मेरा विषसे भरा हुआ बाण लेआ जिससे, विंधकर वामदेव दुःखी होकर पृथ्वीमें गिर जाय। वामदेव बोले, हे राजन्! मैं जानता हूं कि तुमको दश वर्षका पुत्र है, वह तेरी पटरानीसे उत्पन्न हुआ है, श्येनजित जिसका नाम है, मेरे घोर वचनसे प्रेरित होकर इन घोर बाणोंसे अपने प्यारे पुत्रको मार।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, वामदेवके ऐसे वचन सुनकर राजाने उस बाणको छोड़ा और उस बाणने रणवासमें जाकर उसके राजपुत्रको मारडाला। तब वह बहुत क्रोध करके बोला हे इक्ष्वाकुवंशिय राजगण! मैं तुम्हारे कल्याणके लिये अभी इस ब्राह्मणको मार डालता हूं, मेरा महातेजस्वी दूसरा बाण लाओ और मेरे पराक्रमको देखो। वामदेव बोले जो इस विषसे बुझे बाणको मेरे ऊपर चलाना चाहता है, इस लिये तू इस बाणको मेरे ऊपर नहीं चला सकेगा। राजा बोले, हे इक्ष्वाकु वंशियो! तुम मुझे देखो कि मैं बाण नहीं चला सकता हूं, अब यह ब्राह्मण वामदेव दीर्घआयुही और जीता रहै। वामदेव बोले, हे राजेन्द्र! तू इस बाणसे अपनी स्त्रीको स्पर्शकर, तब तेरा कल्याण होगा। राजाने वैसाही किया, तब राजाकी पटरानी मुनिसे बोली कि हे वामदेव! मैं प्रतिदिन इस निर्लज्ज पतिको अच्छा उपदेश करती रहती थी। ब्राह्मणोंकी सेवाके वास्ते कहती रहती थी, इस कारणसे सुझे उत्तम लोक प्राप्त हो। वामदेव बोले, हे सुलोचने! तूने दोनो राजकुलको पवित्र किया, जो तेरी इच्छा हो सो वर मांग, मैं तुझे दूंगा। हे राजपुत्री! तू अपने कुलके मनुष्योंकी और इक्ष्वाकुकुलके राज्यकी रक्षा कर। रानी बोली, हे भगवन! मैं यही वर मांगती हूं कि मेरा पति पापसे छूट जाय। राजाका पुत्र और भाइयोंके रक्षित कल्याण हो। हे ब्राह्मणोत्तम! मैं यही वर मांगती हूं।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, रानीके ऐसे वचन सुनके वामदेवने कहा ऐसेही हो। राजा दलभी वामदेवका बचन सुनकर प्रसन्न हुआ और बामीघोड़े देकर वामदेवको प्रणाम किया।

ब्राह्मण माहात्म्य और

१६२ अध्याय समाप्त।

बक इन्द्र सम्वाद।

श्रीवैशम्पान मुनि बोले, हे राजन्! युधिष्ठिर ब्राह्मण और ऋषि लोग, फिर मार्कण्डेय मुनिसे पूछने लगे कि हे महामुनि! बकको दीर्घ अवस्था क्यों हुई?

श्रीमार्कण्डेय मुनि उन लोगोंसे कहने लगे, कि राजर्षि बक दीर्घ आयु थे; इसमें कुछ सन्देह नहीं है। हे भारत! ऐसा सुनके धर्म्मराज युधिष्ठिर भाइयोंके सहित मार्कण्डेय मुनिसे पूछने लगे; हे भगवन! बक और दालभ्य नामक महात्मा चिरजीवी सुने जाते हैं, वह दोनो राजऋषि इन्द्रके मित्र हैं। मैं यह सुनना चाहता हूं, कि राजा इन्द्रसे और इनसे कैसे समागम हुआ और उन्होंने कैसे सुख दुःख सहे, आप मुझसे सब कहिये। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कि भयानक देवासुरसंग्रामके समाप्त होनेपर इन्द्र महाराज तीनो लोकोंके स्वामी हुए, उस समयमें मेघ ठीक वरसते थे, प्रजा धर्म्मात्मा निरोग सुख और सम्पत्तिसे भरी थी। सब मनुष्य अपने धर्म्ममें स्थिर और प्रसन्न चित्तसे रहते थे। सब प्रजाको सुखी देखकर राजा इन्द्र प्रसन्न हुए, एक दिन ऐरावत हाथीपर चढ़कर प्रजाको देखनेके लिये चले। चित्र विचित्र आश्रम, नदी, नगर ऋद्धि सिद्धिसे भरे हुए देश, प्रजापालनमें निपुण राजा, बावड़ी, तलाव, पोखर और ब्राह्मणोंसे सेवित तीर्थोंको देखते हुए पृथ्वीपर उतरे। हे राजन्! पूर्वदिशामें मनोहर अनेक वृक्षोंसे पूरित समुद्रके तटपर एक देश देखा, उसमें अनेक मृग और पक्षियोंसे पूर्ण एक मनोहर पवित्र आश्रममें बक रहते थे। बकने महाराज इन्द्रको देखकर बहुत प्रीति करी। अर्घपाद्य और आसन देकर इन्द्रकी पूजा की। जब महाराज इन्द्र सुखसे बैठ गये, तब इन्द्रने बकसे प्रश्न किया है, पाप रहित मुने! तुम्हारी अवस्थाके एक लाख वर्ष बीत गये हैं; मुझसे कहो कि अधिक जीनेवाले मनुष्योंको क्या दुःख होता है। बक बोले, चिरजीवियोंको उनके सङ्ग वास करना होता है, जो प्यारे हों या नहीं, दुष्टोंके संग व्यवहार करना होता है, यही उनको दुःख है। स्त्री, पुत्र, जातिवाले, और मित्रोंका नाश और लोगोंके संग रहना इससे अधिक क्या दुःख होगा? हे देवराज! जगतमें धनहीन होकर रहना इससे अधिक दुःख नहीं है, दीर्घजीवी लोग कुलहीनोंके कुलकी वृद्धि और कुलीनोंके कुलका क्षय और अनेक प्रकारके संयोग वियोग देखते हैं। हे इन्द्र! तुम इसको जानते हो, कि कुलहीनोंके कुलकी वृद्धि और नाश कैसे होती है। देवता, दानव, गन्धर्व्व, मनुष्य, यक्ष, राक्षस, और सर्पोंके नाशको देखना बहुत बड़ा भारी दुःख है; अपने कुलमें उत्पन्न हुए अनेक मनुष्योंको दुःखी देखके छोटे कुलवालोंके वशमें हुआ देखकर धनाढ्योंको दरिद्र देखके किसे दुःख नहीं होता? लोकमें बहुत ही विपरीत धर्म्म देखते हैं। ज्ञान रहित मनुष्य सुखी और विद्वान दुःखी देख पड़ते हैं; हे देवेन्द्र! मनुष्य जन्ममें अनेक क्लेश और अनेक दुःख हैं। इन्द्र बोले, हे महाभाग! हे ऋषियोंसे सेवित! आप मुझसे यह भी कहिये कि दीर्घ-जीवियोंको क्या सुख मिलते हैं। बक मुनि बोले, हे देवेन्द्र! हे भगवन! कुमित्रके आश्रय न करके दिनके आठवें या द्वादसवें भागमें जो अपने घरमें साग पका खाते हैं, अपने मित्रोंमें बैठते हैं इससे अधिक सुख क्या होगा? क्योंकि उनमें बैठनेसे दिनको गिनती नहीं जान पड़ती है। जो अपने बलसे उत्पन्न हुए सागको अपने घरमें खाता है, उसके बराबर कोई सुखी नहीं है; और जो दूसरेके आश्रयसे रहता है उसके बराबर दुःखी कोई नहीं है; अपने घरमें बैठ कर साग और फल खाना भी बहुत उत्तम है; परन्तु दूसरेके घरमें उत्तम भोजन करना भी उत्तम नहीं है, महात्माओंने कहा है, कि दूसरेके घरमें उत्तमसे उत्तम परम स्वादु भोजन करना भी वैसाही है, जैसे कौव्वे या कुत्ते को टुकड़ा डाल देते हैं। दूसरेके यहां भोजन करनेवालेको महात्माओंने कुत्ता और रुधिर पीनेवाला कहा है।

उस पापी दुष्टको धिक्कार है, जो अतिथि और पितरोंको विना दिये खालेता है। जो मनुष्य अपने घरमें पितृ और अतिथिको देकर पवित्र अन्न खाते हैं, उनके बराबर कोई सुखी नहीं है। हे इन्द्र! अपने अन्नके समान स्वादु और पवित्र और कोई अन्न नहीं है। जो गृहस्थ अपने घरमें अतिथिको देके भोजन करता है, वह अतिथि जितना ग्रास खाता है, उस गृहस्थ को उतनेही सहस्र गौदानका फल होता है और उसने जो पाप किया है, सो सब नष्ट हो जाता है। जो अतिथिको भोजन कराकर दक्षिणा देता है उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं, अतिथि जिस समय भोजन करके कुल्ला करते हैं, गृहस्थके सब पाप उसी समय नष्ट हो जाते हैं। हे युधिष्ठिर! इन्द्रने वक मुनिसे इस कथाको आदिसे लेकर अनेक उत्तम कथा कही सुनी, फिर उनकी आज्ञा लेकर स्वर्गको चले गये।

वक इन्द्र सम्वाद और

१९३ अध्याय समाप्त।

राजन्य माहात्म्य।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महात्मा मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुन पाण्डवोंने फिर प्रश्न किया, कि हे भगवन्! हमने महाभाग ब्राह्मणोंके चरित्र सुने, अब आप महात्मा राजाओंके चरित्र कहिये। महा- ऋषि मार्कण्डेय बोले, कि अब आप लोग महात्मा राजाओंके चरित्र सुनिये। कुरुवंशमें एक सुहोत्र नामक राजा हुए थे, वे एकदिन महर्षियोंके दर्शन करनेको गये उन्होंने मार्गमें बैठे हुए राजा उशीनरके पुत्र राजा शिविको अपने आगे खड़ा हुआ देखा। उन दोनोंने परस्पर अवस्था और गुणके अनुसार पूजा की। उन दोनोंने अपनेको दूसरेके समान जाना; इस लिये एकने दूसरेको मार्ग न दिया; तब वहां भगवान नविषर्षि आये और कहने लगे, कि आप लोग मार्ग दूसरेके मार्ग रोके क्यों खड़े हैं? तब वे दोनों नारदसे कहने लगे, कि हे भगवन्! पहले कर्म्म करनेवाले महात्माओंने कहा है जो उत्तम हो अथवा समर्थ हो उसी का मार्ग देना चाहिये और हम लोग परस्पर समभावापन्न हो गये हैं; इस लिये विचारसे हमें जान नहीं पड़ता, कि कौन किसे मार्ग दे। इनके वचन सुन नारदने सुहोत्रको सम्बोधन कारके यह तीन श्लोक पढ़े; हे कौरव! क्रूर कोमलसे क्रूरता, कोमल क्रूरसे कोमलता, साधु असाधुसे साधुता करते हैं और साधु साधुसे उत्तम कर्म्म क्यों नहीं कर सकते हैं? देवताओंमें क्या यह नियम नहीं है, कि किये हुए कामके बदले सौगुना उपकार करे, अवश्य है। तुम दोनोंमें उशीनरके पुत्र शिवि साधु शीलवान हैं। मनुष्यको उचित है कि कृपणको दानसे, झूंठेको सत्यसे, दुष्टको क्षमासे और कठोरको सीधे कर्म्मसे जीते। तुम दोनों उदार हो; अब तुम लोगोंमें जो श्रेष्ठ हो, वह पहले चला जाय। ऐसा कह नारद चुप होगये। तब राजा सुहोत्रने उशीनरके पुत्र राजा शिविकी प्रदक्षिणा की और उनके बहुत शुभकर्म्मोंकी प्रशंसा कर मार्ग देके चले गये। हमने यहँ नारदका कहा हुआ राजन्यमाहात्म्य कहा।

१९४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अब हम दूसरे राजाका चरित्र कहते हैं। महाराज नहुषके पुत्र महाराज ययाति हुए। वे अपने राज-सिंहासन पर अपने नगरनिवासियोंसे घिरके बैठे थे, उसी समय एक ब्राह्मण आया और कहने लगा, कि हे राजन्! हम गुरुके लिए आपसे एक प्रतिज्ञारूपी भीख मांगते हैं, राजा बोले, कहो क्या प्रतिज्ञा चाहते हो?

ब्राह्मण बोले, हे राजन्! इस लोकमें भिक्षा मांगनेसे बहुत लघुता होती है, सो हम आपसे पूछते हैं, कि आप हमारी प्यारी वस्तुको कैसे दीजियेगा? राजा बोले, मैं जो वस्तु देता हूं, और जो नहीं देना चाहता, उसको सुनता नहीं हूं, जो वस्तु प्राप्त होने योग्य हो उसे सुनकर और देकर बहुत प्रसन्न होता हूं, मैं तुम्हे एक हजार गौ दूंगा क्योंकि मुझे मांगनेवाला ब्राह्मण बहुत प्रिय लगता है, मुझे मांगनेवाले पर क्रोध कभी नहीं होता, जिस वस्तुको देता हूं उसका सोच नहीं करता, ऐसा कह कर राजाने उस ब्राह्मणको गौवें दे दिया।

१६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! ऐसा सुन फिर युधिष्ठिर बोले कि हे मार्कण्डेय! आप हमसे फिर राजाओंके भाग्यका वर्णन कीजिये। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज! वृषदर्भ और सेदुक नामक दो राजा हुए; वे दोनोही नीति और अस्त्र जाननेवाले थे, तिनसें राजा सेंदुकको यह ज्ञान हुआ, कि राजा वृषदर्भ बाल्यावस्थासे यह जानता है कि ब्राह्मणको सोने और चांदीके सिवाय कुछ नहीं देना चाहिये। एकदिन एक वेदपाठी ब्राह्मण राजा सेदुकके पास आया और आशी-र्व्वाद देकर गुरुके निमित्त भिक्षा मांगी। ब्राह्मण बोला, हे राजन्! आप हमको एक सहस्र घोड़े दीजिये। उनसे राजा सेदुक बोले, हमारी शक्ति हजार घोड़े देनेकी नहीं है, इस लिये आप राजा वृषदर्भके पास जाइये, वह राजा बहुत धर्म्मके जाननेवाले और ब्राह्मणोंके भक्त हैं, आप उनसे भिक्षा मांगिये, वह अवश्य देंगे उनका यही प्रण है। अनन्तर वह ब्राह्मण राजा वृषदर्भके पास गया और उनसे हजार घोड़े मांगे, परन्तु राजाने उसे कोड़ेसे पीटा। ब्राह्मणने उनसे कहा, कि तुम निरपराध मुझको क्यों मारते हो; अनन्तर उस ब्राह्मणने राजाको शाप देना चाहा; तब राजाने कहा हे विप्र! जो अपना धन दूसरेको न दे उसको शाप देना क्या ब्राह्मणका कर्म्म है। ब्राह्मण बोले, हे राजाधिराज! मुझको आपके पास राजा सेदुकने भीख मांगनेको भेजा था, उनको आज्ञासे मैंने आपसे भीख मांगी, राजा बोले, हे ब्राह्मण! हमको आज जो कुछ करमें मिलेगा सो सब तुमको देदेंगे, जिसको हमने कोड़ेसे मारा है, उसको हम प्रसन्न क्यों न करेंगे? ऐसा कहकर राजाने उस ब्राह्मणको एक दिनमें जितना धन प्राप्त किया सब दे दिया। वह धन एक सहस्र घोड़ोंसे अधिक था।

महाराज और एक इतिहास सुनिये। एक समय देवतोंने विचारा कि हम लोग पृथ्वीपर चलकर राजा उशीनरके पुत्र शिविकी परीक्षा करें, ऐसे कहके अग्नि और इन्द्र वहां आये, अग्निने कबूतरका रूप धारण किया और मांस खानेकी इच्छा करके इन्द्र बाजका रूप धारण करके उसके पीछे दौड़े, कबूतर दिव्य सिंहासन पर बैठे हुए राजाकी गोदमें जा पड़े, तब पुरोहित राजासे बोले, कि हे राजन्! बाजके डरसे यह कबूतर रक्षाके लिये आपकी गोदमें आपड़ा है आप इसे प्राणदान दीजिये, आप धन दान कीजिये, क्योंकि कबूतरका गिरना बहुत बुरा है। तब कबूतर राजासे बोला, कि हे राजन्! मैं बाजसे डरकर प्राण रक्षाके लिये आपके पास आया हूं, मैं मुनि हूं, ऋषि हूं, कबूतर होकर प्राण रक्षाके लिये आया हूं, आपही मेरे प्राण हैं, मैं वेद पढ़नेवाला ब्रह्म-चारी हूं, तपस्वी, इन्द्रियोंको जीतनेवाला, आचार्य्यका प्रिय करनेवाला और पाप रहित हूं, वेदको स्वरसे पढ़ता हूं, छन्दोंको जानता हूं, सम्पूर्ण वेदोंका मैंने अक्षर अक्षर पढ़ा है, वेदपाठीको दान देना बड़ा पुण्य है, आप मुझे

बाजको मत दें, अपने अङ्गोंको त्यागकर कबूतरके अङ्गोंमें प्राप्त होकर तुम्हारे पास प्राण रक्षाके लिये आया हूं, तब बाज राजासे बोला, हे राजन्! संसारकी गति ऐसी है, कि कभी कोई किसीका पुत्र और वही उसका पिता हो जाता है, हो सकता है कि यह कबूतर पूर्व सृष्टिमें तुम्हारा पिता था, अब तुम इसे अपना पिता समझके मेरे भोजनमें विघ्न मत करो। राजा बोले, ऐसी बात कबूतर और बाजको बोलते हुए किसीने नहीं देखा था। यह दोनो कौन हैं, इनको जानकर कोई काम करना चाहिये, जो डरे हुए शरणागतको शत्रुको देता है, उसके राज्यमें वर्षा ऋतुमें जल नहीं बरसता, बोया हुआ अन्न उत्पन्न नहीं होता, समयके ऊपर यदि वह किसीसे रक्षा चाहे, तो रक्षा नहीं मिलती है, उसके बालक थोड़ी ही अवस्थामें मर जाते हैं,उसके माता पिता अधिक नहीं जीते। । जो डरे हुए शरणागतको शत्रुको देता है, उसकी पूजा देवता लोग ग्रहण नहीं करते हैं, वह उदारता-रहित हो जाता है, और उसका अन्न नष्ट हो जाता है, स्वर्गलोकसे शीघ्र पतित होता है, जो डरे हुए शरणागतको शत्रुको देता है, उसपर इन्द्रादिक देवता वज्र मारते हैं। हे बाज! मैं तुम्हें मांस और भात पकाकर खिलाऊंगा पर इस कबूतरको नहीं दूंगा। बाज बोला,हे राजन्! मैं मांससहित भात खाना नहीं चाहता और इस कबूतरसे अधिक मांस भी नहीं चाहता, देवतोंने मेरे वास्ते आज यह भोजन भेजा है, इस लिये इसे तुम मुझे दे दो, क्योंकि और पक्षी नहीं मिलता है। राजा बोले, हे बाज! तुम बैल मुझसे लेजाओ परन्तु इस डरे हुए दुबले पतले कबूतरको मत मारो, हे बाज! यह कबूतर सोमयुक्त ऋतुकी भांति प्रतिपालन योग्य है, यह मुझे निश्चय बोध होता है। मैं प्राणको दे सकता हूं, पर इस शुभ गुणयुक्त कबूतरको मत मारो, तुम जानते हो कि यह कबूतर बड़ा महात्मा है, तुम मुझे क्लेश मत दो, हम कबूतर नहीं देंगे, जिस रीतिसे मेरी शिविदेशके निवासी प्रशंसा करें वैसेही तुमको कहना चाहिये, कहो मैं तुम्हारा क्या प्रिय कार्य्य करूं? बाज बोला हे राजन्! इस कबूतरके बराबर अपनी दहिनी जङ्घाका मांस मुझे दो, तो यह कबूतर छूटे, शिविदेशी तुम्हारी प्रशंसा करें और मेराभी प्रिय कार्य्य हो। तब राजाने अपनी दहिनी जांघका मांस काटकर तराजूपर रखा, पर कबूतर भारी हुआ। फिर और मांस काटकर चढ़ाया, तौभी कबूतर भारी हुआ। ऐसेही राजाने अपने सब शरीरका मांस काटकर चढ़ाया; परन्तु कबूतर भारी हुआ, तब राजा आपही तराजूपर बैठ गया, राजाका यह चरित्र बुरा नहीं हुआ। राजाके इस वृत्तान्तको देखकर 'शिविराजसे कपोतकी रक्षा हुई' ऐसा कहके बाज अन्तर्द्धान हो गया। राजा कबूतरसे बोले,कि शिविदेशवासी जानें कि तुम कौन हो और बाज कौन था, क्योंकि ईश्वरके सिवाय कोई ऐसा काम नहीं कर सकता, हे भगवन! आप मेरे प्रश्नका उत्तर दीजिये। कबूतर बोला, हे राजन्! मैं धूमकेतु अग्नि हूं और वज्रधारी इन्द्र बाज हैं, हे सुरथाके पुत्र! हम तुम्हारे शीलको जाननेके लिये यहां आये थे, जो तुमने तलवारसे काटकर मेरे वास्ते मांस दिया है, यह मैं तुम्हारे अंगका चिन्ह शुभ मनोहर बनाये देता हूं। यह सब सुवर्णका हो जायगा और सुगन्धियुक्त होगा, तुम यशके साथ इन प्रजाओंका पालन करो; देवता, ऋषि तुम्हारा आदर करेंगे, तुम्हारे कटे हुए स्थानसे कपोतरोम नामक पुत्र उत्पन्न होगा। कपोतरोम बहुत बड़ा तेजस्वी और तुम्हारे कुलका यश बढ़ानेवाला होगा।

शिविचरित और १९६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरने मार्कण्डेय मुनिसे फिर प्रश्न किया,कि आप हमसे फिर राजाओंका चरित्र कहिये। मार्कण्डेय मुनि बोले विश्वामित्रके पुत्र राजा अष्टकको अश्वमेध यज्ञमें उनके भाई प्रतर्द्दन वसुमना,और औशीनर आये थे। जब राजाका यज्ञ समाप्त हुआ,तब वे अपने भाइयोंके साथ रथ पर बैठ कर चले और मार्गमें आते हुए नारदको प्रणाम करके बोले, कि हे भगवन! आप इस रथ पर चढ़िये, नारद मुनि उनके वचन सुनकर रथपर चढ़े। तब राजाके एक भाईने नारदसे कहा कि हे भगवन्! मैं आपको प्रसन्न करके कुछ पूछना चाहता हूं, नारद बोले पूछो। राजाके भाईने कहा,कि हम सब लोग आयु और गुणसे पूर्ण हैं सो बहुत समय तक रहने योग्य स्वर्ग को जाते हैं; सो आप कहिये कि हम सबमेंसे पहले पृथ्वीपर कौन गिरेगा? नारद बोले पहले अष्टक गिरेगा। राजाके भाईने पूछा, इसका कारण क्या है? नारद बोले, एक समय हम अष्टकके घरमें रहते थे, उसी समय एक दिन मैं और अष्टक रथमें बैठ कर घूमनेको गये थे, वहां मैंने एक सहस्र गौ इकट्ठी देखकर अष्टकसे पूछा कि यह सहस्र गौ किसकी हैं; इन्होंने कहा, कि मेरी हैं और हमने इनको उत्सर्गकर छोड़ दिया है। अष्टकने अपनी बहुत प्रशंसा की, इसीलिये यह पहले स्वर्गसे गिरेगा। राजाके भाई बोले, कि जो हम तीनों स्वर्गको जायं तो पहले कौन गिरेगा? नारद बोले कि सबसे पहले प्रतर्द्दन गिरेगा; इसका यह कारण है कि मैं पहले इसके घर पर रहा था, एकदिन इसके रथपर चढ़कर घूमने गया, तब एक ब्राह्मण मिला और उसने कहा, कि तुम अपने घोड़े मुझे देदो, इसने कहा कि मैं जब घर लौट आऊंगा तब तुमको घोड़े दे दूंगा। तब ब्राह्मणने कहा कि अभी दो। तब इन्होंने दहना घोड़ा देदिया, इतने हीमें दूसरा ब्राह्मण घोड़ा मांगनेको आगया, तब इन्होंने बायां घोड़ा भी देदिया, उसी समय तीसरा घोड़ा मांगनेवाला एक और ब्राह्मण आया, उसी समय प्रतर्द्दनने तीसरा घोड़ा भी देदिया; उसी समय चौथा घोड़ा मांगनेवाला ब्राह्मणभी मिला; तब इसने कहा घर चल कर देंगे, उन्होंने कहा, कि अभी दो। तब इन्होंने वह घोड़ा भी उसको दे दिया और हाथसे रथको खींचने लगा और कहा,कि अब हमारे पास कुछ नहीं है जो ब्राह्मण मांगेंगे। जो देकर असूया करता है,वह स्वर्गसे गिराया जाता है। इसीसे यह पहले गिरेगा। राजाके भाईने प्रश्न किया, कि यदि हम दोनों स्वर्गको जायं तो पहले कौन गिरेगा। नारदने कहा, कि पहले वसुमना गिरेगा, उन्होंने कहा, कि क्यों? नारदने कहा, कि मैं पहले समयमें घूमता हुआ वसुमनाके घरमें गया था। वहां पुष्परथके वास्ते स्वस्तिवाचन हुआ। जब ब्राह्मण लोग स्वस्तिवाचन कर चुके, तब ब्राह्मणोंको पुष्परथ दिखाया गया। मैंने उस रथकी प्रशंसा की, राजाने कहा हे भगवन्! आपने रथकी प्रशंसा की, यह आपका ही रथ है। फिर एक बार मैं रथके प्रयोजनसे राजाके घर गया, तब भी राजाने यही कहा कि आपका ही रथ है। तब मैंने तीसरी बार स्वस्तिवाचन किया, तब राजाने ब्राह्मणोंके सम्मुख मुझसे कहा, कि आपने पुष्परथकी प्रशंसा अच्छी प्रकारसे की। इसी हेतु रथ प्रदान न करके वृथा प्रशंसा वचनके कारण यह पहले गिरेगा। राजाका भाई बोला, इस रथपर चढ़के आपके सङ्ग एक ही जा सकता है; सो कौन जायगा? नारदने कहा कि शिवि जायगा और मैं उतरता हूं। राजाने कहा, इसमें क्या कारण है? नारदने कहा, कि मैं शिविके समान नहीं हूं। क्योंकि किसी ब्राह्मणने इससे कहा था, कि मैं अन्न मांगता हूं। उस ब्राह्मणसे शिविने कहा

महाराज! कहिये मैं क्या करूं? तब इनसे उस ब्राह्मणने कहा, हे राजन्! तुम्हारा वृहद्गर्भ नामक पुत्र है, उसे काटकर पकाओ; मैं भूखे बैठा हूं, तब राजाने पुत्रको काटकर पकाया और थालीमें परसकर रखा तथा ब्राह्मणको खोजने लगे; जब राजा ब्राह्मणको खोजते थे तभी आकर किसीने राजासे कहा, कि वह ब्राह्मण तुम्हारे नगर, घर, धनके स्थान, शस्त्रके स्थान, घुड़शाल, और हाथीखानेको बड़े क्रोधसे जला रहा है, तब राजा शिविने नगरमें जाकर ब्राह्मणसे कहा, हे भगवन! अन्न तय्यार है; उस समय शिविके मुखका वर्ण वैसाही था; पर ब्राह्मणने लज्जासे शिर नीचे कर लिया और कुछ उत्तर न दिया। तब शिविने हाथ जोड़कर ब्राह्मणको प्रसन्न किया, कि महाराज! भोजन कीजिये, एक मुहूर्त्तके बाद ब्राह्मण राजा शिविसे बोला, हे राजन्! तुमही इसको खाओ; राजाने कहा, बहुत अच्छा। ऐसा कहकर ज्योंही मांस खानेको उठाया, तभी ब्राह्मणने राजाका हाथ पकड़ लिया और बोला; हे राजन! तुमने क्रोधको जीत लिया, ब्राह्मणके वास्ते तुम सब कुछ दे सकते हो। ऐसा कहकर ब्राह्मणने राजाको पूजा की। राजाने आंख उठाकर देखा तो सम्मुख राजकुमार खड़ा है। उत्तम सुगन्धि लगाये हुए, उत्तम वस्त्र पहने लड़केको देखकर ब्राह्मण वहीं अन्तर्धान हो गया। नारद बोले, कि ब्रह्माने इस रीतिसे राजा शिविकी परीक्षा ली थी, उस ब्राह्मणके अन्तर्द्धान होनेपर मन्त्रीने राजासे पूछा, आपने क्या जानकर ऐसा किया था? राजा शिवि बोले, कि हम इस कर्म्मकी यश, अर्थ और भोगकी इच्छासे नहीं करते हैं। हम केवल यह जानते हैं, कि इस कर्म्मको पापी लोग नहीं कर सकते; इसी लिये करते हैं; पण्डितलोग सदा अच्छा कर्म्म करते हैं, और हमारी बुद्धिभी सदा अच्छेही कर्म्ममें लगती है, शिविके इस परम चरित्रको हमने तुमसे कहा।

राजन्य सौभाग्य वर्णन और
१६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! समस्त ऋषियों और पाण्डवोंने मार्कण्डेय मुनिसे पूछा, कि आपसे अधिक जीनेवाला कोई है? उन्होंने कहा, कि राजा इन्द्रद्युम्न मुझसेभी अधिक जीनेवाले हैं। वे पुण्य नष्ट होनेसे जब स्वर्गसे गिराये गये; मेरे पास आये थे और कहा था, कि तुम हमको इन्द्रद्युम्न जानो, तब हमने उनसे कहा कि हम सब गावोंमें केवल एकरात निवास करते हैं; और बराबर तपसे अपने शरीरको सुखा देते हैं, इस लिये हम नहीं जानते हैं, कि यह कौन हैं। इन्द्रद्युम्नने मुझसे कहा कि आपसेभी पुराना कोई और है? मैंने कहा, मुझसेभी पुराना एक प्रावारकर्ण नामक उल्लू हिमाचलमें रहता है, वह मुझसेभी बूढ़ा है, तुम उसके पास जाओ; परन्तु वह हमसे बहुत दूर रहता है। तब वह इन्द्रद्युम्न घोड़ा हो गया और मैं उसपर चढ़कर उसके पास गया। तब राजा इन्द्रद्युम्नने उस उल्लूसे पूछा, कि तुम हमको जानते हो; तब उसने थोड़ी देर बिचार कर कहा, कि हम तुमको नहीं जानते हैं; फिर राजर्षि इन्द्रद्युम्नने उस उल्लूसे कहा, कि कहो तुम्हारे पास कोई तुससेभी ज्यादे बूढ़ा है? तब उसने कहा, कि हमसेभी बूढ़ा नाड़ीजंघ नामक बकुला है, वह इन्द्रद्युम्न नामक तलावमें रहता है, सो हमसे बहुत बूढ़ा है, तुम उसके पास जाओ और उससे पूछो। तब इन्द्रद्युम्न, मैं और वह उल्लू उस नाड़ीजङ्घ नामक बकुलेके पास गये; तब हमलोगोंने उससे पूछा कि तुम राजा इन्द्रद्युम्नको जानते हो? उसने थोड़ी देर विचारकर कहा कि

हम राजा इन्द्रद्युम्नको नहीं जानते हैं, तब हमने उससे पूंछा कि कोई तुमसे अधिक बूढ़ाभी है? उसने कहा कि इसी तालावमें एक अकूपार नामक कछुआ रहता है, वह हमसेभी अधिक बूढ़ा है। तुम लोग उसके पास जाकर पूछो कदाचित वह तुमको जानता हो। तब उस बकुलेने हमलोगोंसे और उस कछुएसे परिचय करा दिया। हम लोगोंने जाकर कहा, कि हम लोग तुमसे कुछ पूछनेको आये हैं; तुम बाहर आओ, ऐसा सुनकर कछुआ तलावसे बाहर निकला। जहां हम लोग खड़े थे, तलावके उसी किनारे आया। हम लोगोंने उसे आते देखकर पूछा, कि तुम राजा इन्द्रद्युम्नको जानते हो? उसने एक महूर्त्त ध्यान करके आखोंमें आंसू भर कर उद्विग्नचित्त होकर हाथ जोड़कर कांपते हुए कहा, कि क्या मैं इन्हें नहीं जानता हूं? इन्होंने हजार यज्ञ की थी, जो इन्होंने दक्षिणामें गौवें दी थीं, उस चक्रमणसेही यह तालाव बना है, जिसमें मैं रहता हूं। जब यह कछुवेने कहा, इसको सुनकर देवलोकसे रथ आया और शब्द हुआ, हे इन्द्रद्युम्न! तुम्हारे वास्ते स्वर्ग तैय्यार है, जहां चाहो वहां जाओ तुम कीर्त्तिवाले हो, जहां इच्छा हो वहां जाओ, पुण्य कर्म्मोका शब्द जबतक स्वर्ग और पृथ्वीपर रहता है; तबतक कर्म्म करनेवाला जोता है; जिस किसी प्राणीका अपयश जगतमें जबतक रहता है, तबतक वह नीचलोकमें रहता है; इस कारणसे मनुष्योंको सदा उत्तम कर्म्म करना चाहिये और बुरे कर्म्मोंसे चित्तको हटाकर उत्तम कर्म्मोंमें लगाना चाहिये। इसको सुनकर राजा बोले, तबतक तुम यहीं रहो, जब तक हम इन दोनों बूढ़ोंको इनके स्थान पर न पहुंचा आवें। वह राजा मुझे और प्रवारकर्ण उलूकको स्थानो पर पहुंचा कर उसी रथ पर चढ़ कर अपने योग्य स्थानपर चले गये। हे पाण्डवो! ऐसे मैंने चिरजीवितामें वृत्तान्त देखे हैं। पाण्डव बोले, आपने बहुत अच्छा किया, जो स्वर्गसे गिरे राजा इन्द्रद्युम्नको फिर स्वर्गमें पहुंचाया। मार्कण्डेय ऋषि फिर पाण्डवोंसे कहने लगे, कि इसी रीतिसे देवकीनन्दन कृष्णने नरकमें पड़े हुए राजा नृगको कष्टसे छुड़ाकर स्वर्गमें पहुंचाया था।

राजन्य माहात्म्य वर्णन और
१९८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिर राजा इन्द्रद्युम्नका वृत्तान्त महात्मा मार्कण्डेय मुनिसे सुनकर फिर उनसे पूछने लगे, हे मुने! पुरुष कौनसी अवस्थामें दान देकर इन्द्रलोकको प्राप्त होता है। वालकपनमें वा युवा अवस्था वा गृहस्थाश्रममें जैसे फल होता है, वह सब आप मुझसे कहिये। मार्कण्डेय मुनि बोले, चार मनुष्योंके दान वृथा हैं, पुत्रहीनका जन्म वृथा है, जो धर्म्मसे हीन हैं, उनका जीवन वृथा है, पराये घरमें जो खाता है जो अपने वास्ते पकाते हैं उनका भी जन्म वृथा है। धर्म्मसे पतित ब्राह्मणोंको दान देना और चोरको दान देना वृथा है, झूठ बोलनेवाले गुरुको दान देना पापीको और कृतघ्नको दान देना ग्रामयाजक (जो नौग्रहादिकके पूजन कराते हैं), वेद बेचनेवालेको, शूद्रोंके पुरोहितको दान देना वृथा है। ब्राह्मणोंमें जो नीच हैं, उनको दान देना, जिन्होंने वेश्या रखी है उनको दान देना, स्त्रियोंको दान देना सर्पिरोंको दान देना, नौकरोंको दान देन, यह सोलह दान वृथा हैं। जो अज्ञानसे, भयसे वा क्रोधसे दान को देता है, वह उसका फल गर्भस्थित होकर प्राप्त होता है। अन्य कोई गर्हित दान द्विजातियोंको देनेसे उसका फल दाता वृद्धावस्थामें भोगता है। इसवास्ते सब अवस्थाओंमें ब्राह्मणोंको दान स्वर्गकी इच्छासे देना चाहिये। राजा युधि-

ष्ठिर बोले, चारों वर्णके दान देनेमें कौन विशेषतासे मनुष्य तरते हैं? मार्कण्डेय मुनि बोले, जप, मन्त्र, होम और वेद-पाठसे मनुष्य तरता और तारता है, जो मनुष्य ब्राह्मणोंको प्रसन्न करते हैं, उनसे सब देवता प्रसन्न होते हैं, ब्राह्मणोंके वचनसे स्वर्ग प्राप्त होता है; पितर और देवतोंकी पूजासे और ब्राह्मणोंकी सेवासे तुमको अक्षय पुण्यलोक प्राप्त होगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है, जिसको स्वर्गमें जानेकी इच्छा हो, उसे चाहिये, कि जब कफसे कण्ठ घिर जाय और चेतनारहित हो जाय तब ब्राह्मणोंकी पूजा करे। श्राद्धके समयमें बुरे वर्णवाले, बुरे नाखूनवाले, कुष्ठरोगी, छली, कपटी, कुण्ड (जो स्त्रीके पति रहते हुए और से उतपन्न हुआ है) और गोलक (जो विधवा जारसे पुत्र उत्पन्न करे) तथा जो ब्राह्मण कारके जीबिका करता हो, उनको श्राद्धमें भोजन न कराना चाहिये। जो श्राद्ध निन्दित होता है, वह करनेवालेको अग्निके समान भस्म करता है, श्राद्धमें गंगे, अन्धे, आदिक वहां जो आते हैं, उन्हें वेदपाठी ब्राह्मणोंके संग भोजन न कराना, और दानभी न देना चाहिये, हे युधिष्ठिर! जो शक्तिमान वेद जाननेवाले ब्राह्मण हों; उनको दान देना चाहिये, वही दाताको तारते हैं, और अपनाभी निस्तार करते हैं, जैसे पुण्य अतिथिको भोजन करानेसे होता है, वैसा होम करनेसे, स्नान करनेसे, अग्निहोत्र करनेसेभी नहीं होता है। हे युधिष्ठिर! इस कारणसे अतिथिको भोजन करानेमें तुम सदा यत्न करो, अतिथिको जो स्थान, भोजन, जल और घी देते हैं, वह यमराजके यहां नहीं जाते हैं। देवताका स्थान स्वच्छ करने, ब्राह्मणोंके जूठ उठाने, शरीर दबाने और गन्धादि लगानेसे जो पुण्य होता है, वह गोदानसेभी अधिक होता है, कपिला गौके दान सब गौ-दानोंसे अधिक है, इसवास्ते कपिलाको आभूषण पह-

नाकर ब्राह्मणको देनी चाहिये। वेदपाठी, दरिद्र, गृहस्थ, अग्निहोत्र करनेवाले, तथा उपकारी ब्राह्मणोंको दान देना चाहिये, हे भारत! ऐसोंको दान देना चाहिये। धनवानको धनदान न करे, धनवानको दान देनेसे कोई भी फल नहीं होता है। एक गौ एकहीको दान देनी चाहिये अनेकको नहीं। यदि दान की हुई गौ पुनः दी जाती है, तो वह कुलके तीन पुरुषोंको नाश करता है। दान देनेवालेको और ब्राह्मण दोनोंको निस्तार नहीं करती। जो अस्सीरत्ती परिमित शुद्ध सुवर्णका दान करता है, उसको सौ सुवर्णके मुद्रा दान करनेका फल होता है। जो बलवान धूरमें लगाने योग्य बैलको दान करता है, वह दुःखोंको तरके स्वर्गलोकको जाता है, जो पण्डित ब्राह्मणको पृथ्वी दान देता है, उसके पीछे सब कामना पूरी होती हैं और जगतके मनुष्य उसका यश गाते हैं। मार्गमें चलते चलते जिनके शरीर थक गये हैं, पैरों पर धूल चढ़ गई हो उन थके हुओंको जो अन्न देनेका कहता है उसकोभी अन्न देनेके समान फल होता है; इसमें कुछ सन्देह नहीं, इसवास्ते तुम अन्न दानही करो। जो पका हुआ अन्न ब्राह्मणको देता है उसके समान फल जगतमें कोई नहीं पाता है। अन्नही सब जगतमें उत्तम है उससे अधिक कोई वस्तु नहीं। अन्नको प्रजापति और सम्वत्सर कहते हैं; सम्वतसर का अर्थ यज्ञ है और यज्ञहीसे सब जगत स्थिर है। इसवास्ते सब चराचरको जीव धारण करनेवाला अन्न है अन्नसे उत्तम कोई पदार्थ नहीं है। जो लोग बावड़ी, तलाव, कूवे और धर्म्मशाला बनवाते हैं अन्न दान करते हैं और मीठी वाणी बोलते हैं, वे शमनवाक्य नहीं सुनते। बड़े परिश्रमसे उत्पन्न किया अन्न और इकट्ठा किया धन जो सुशील ब्राह्मणोंको देता है, उसको सम्पूर्ण

पृथ्वी रत्नसे भरी रत्न देतो है, प्रथम अन्न देनेवाले फिर सत्य बालनेवाले उनके पोछे विना मांगे देनेवाले स्वर्गको जाते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! बड़े आश्चर्यमें आकर राजा युधिष्ठिर भाइयोंके सहित मार्कण्डेय मुनिसे फिर पूछने लगे, कि हे महामुने! मनुष्य लोकसे यमलोक कितनो दूर है, उसका कैसा मार्ग है और उसको पुरुष किस उपायसे तर सकता है। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! हे धर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ! यह प्रश्न सबसे गुप्त और पवित्र है और ऋषि लोग इसका आदर करते हैं। मैं इसको तुमसे वर्णन करता हूं। हे नरनाथ! मनुष्य लोकसे छियासी हजार योजन यमलोक है। वहां आकाश शून्य है। वह मार्ग जलरहित है; घोर वनसे भरा है; उस मार्गमें न छाया है न वृक्ष हैं जहां बैठकर मनुष्य अपनी थकाई उतारे। यमको आज्ञानुसार दूत बलसे मनुष्योंको खींचते हैं। मनुष्य, स्त्री, और पशु आदि सब प्राणी वहां दुःखी होते हैं। जिन्होंने ब्राह्मणोंको घोड़े दान दिये हैं, वे सुखसे चलते हैं, जिन्होंने छाते दान किये हैं, उनको वहां छाता मिलता है जिन्होंने अन्न दान किये हैं वे भूखसे व्याकुल नहीं होते और जिन्होंने अन्न दान नहीं किये वे भूखसे व्याकुल होते हैं। वस्त्र देनेवाले वस्त्र पहन कर और जिन्होंने वस्त्र नहीं दान दिये, वे नंगे जाते हैं। सोनेके देनवाले आभूषण पहरे हुए जाते हैं। भूमिके देनवाले सब सुखोंसे पूरित होकर, खेतोंके देनवाले क्लेशरहित और घरके देनेवाले विमानों पर बैठकर जाते हैं। जलके देनेवाले प्रसन्नचित्त और प्यासरहित जाते हैं। दीपकके दान करनेवाले मार्गको प्रकाश करते हुए सुखसे गमन करते हैं। गौके देनेवाले सब पापोंसे रहित और सुखसे जाते हैं, हंसयुक्त विमानमें बैठकर वह जाते हैं जो महीना भर व्रत करते हैं। जो छः दिन तक व्रत करते हैं वे मोरके विमानोंपर बैठकर जाते हैं, जो तीन रात्रिएकवार भोजन करके बिताते हैं, उनको यमलोकमें कोई पोड़ा नहीं होती। जो रात दिनमें एकवार भोजन करता है उसको यमलोकमें दिव्य जल प्राप्त होता है। हे राजन्! योमलोकमें पुष्पोदक नाम नदी है, उसका बहुत ठंढा और मीठा जल एक समय भोजन करनेवाले पीते हैं, वही उसी नदीका जल पापी लोगोंके वास्ते पीब हो जाता है। हे महाराज! वह नदी इच्छाको पूर्ण करनेवाली है, तुमभी यथाविधि ब्राह्मणकी पूजा करो। जो मनुष्य आशासे आये हुए अतिथिको सत्कार पूर्व्वक अन्न देता है और उसकी पूजा करता है उसके पीछे सब इन्द्रादिक देवता चलते हैं और जो अतिथिकी पूजा नहीं करता है उससे सब देवता निराश होजाते हैं, हे राजन्! तुमभी अतिथियोंकी और ब्राह्मणोंकी पूजा करो। यह मैंने तुम्हारे प्रश्नका उत्तर दिया और क्या पूछना चाहते हो।

युधिष्ठिर बोले, हे मुनि! मैं वारम्बार धर्म्म सम्बन्धी पवित्र कथा सुनना चाहता हूं। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! मैं और भी धर्म्म कथा कहता हूं, जो सब पापोंका नाश करती है तुम चित्त लगा कर उसे सुनो। जो पुष्करमें कपिला गौ दान करनेका फल होता है वही फल ब्राह्मणोंके पैर धोनेसे होता है। जबतक ब्राह्मणोंके चरणोंके जलसे पृथ्वी भींगी रहती है, तब तक पितर लोग कमलके पत्तेसे जल पीते हैं; ब्राह्मणोंका आदर करनेसे अग्निदेव प्रसन्न होते हैं; आसन देनेसे प्रजापति प्रसन्न होते हैं; जबतक बछड़ेके पैर और सिर दीखते हैं; उसी समय गौ ब्राह्मणोंको दान देना चाहिये, जबतक बछड़ा उत्पन्न नहीं होता है, तब तक गौ पृथ्वी कहलाती है—

और उसी समय गौदान करनेसे महादान करनेका पुण्य होता है, हे युधिष्ठिर! उत्पन्न होनेवाले बछड़ा और गौके जितने रोम हैं उतने हजार वर्षतक देनेवाला स्वर्गमें निवास करता है। जो सुवर्णमें नाक और खुर मढ़कर गौको तिलसे लादकर तथा सुवर्णके आभूषण पहरा-कर दान करता है, वह स्वर्गको जाता है। जो ब्राह्मण दान लेकर किसी महात्माको दे देता है, उसको सम्पूर्ण पृथ्वी दान करनेका फल प्राप्त होता है। जो ब्राह्मण जांघोंके बीचमें हाथ रखकर चुपचाप भोजन करता है, वह यजमानको तारनेमें समर्थ है, जो अपेय वस्तुओंको नहीं पीते हैं; जो वेदका पाठ नित्य करते हैं, वही ब्राह्मण तारने योग्य हैं; हव्य कव्य सबको ब्राह्मण लेनेके योग्य हैं, जो दान महात्मा ब्राह्मणको दिया जाता है, वह ऐसा होता है, जैसा जलती हुई अग्निमें होम करना। क्रोधही ब्राह्मणका शस्त्र है; ब्राह्मण शस्त्रसे नहीं लड़ते हैं; जिसपर क्रोध करते हैं, उसको ऐसा नाशकर देते हैं, जैसा इन्द्र वज्रसे राक्ष-सोंको मारते हैं, हे पाप-रहित युधिष्ठिर! मैंने तुमसे यह धर्मकी कथा कही। इस कथाको सुन कर नैमिषारण्यके तपस्वी प्रसन्न हुए थे, हे राजन्! इस कथाको सुननेवाले मनुष्य शोक, भय, और पापसे रहित हो जाते हैं।

युधिष्ठिर बोले, हे धर्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! कौनसे कर्मसे ब्राह्मण सदा पवित्र रह सकता है, मैं उसे सुननेकी इच्छा रखता हूं। मार्क-ण्डेय मुनि बोले, पवित्रता तीन प्रकारकी है; वचनकी, कर्मकी और जलकी। जो इन तीनों पवित्रताओंसे युक्त रहता है, वही स्वर्गको जाता है; जो प्रातःकाल और सायंकालकी सन्ध्यामें गायत्रीको जपते हुए उपासना करते हैं, वे पापरहित और पवित्र हो जाते हैं, वह चाहे सम्पूर्ण पृथ्वीका दान लेवें तौभी उसे कुछ दोष नहीं है, यदि सूर्य्यादिक आकाशके ग्रह बुरी दृष्टि रखते हों, तो वहभी कल्याणकारी होजाते हैं, जितने मांसभक्षी घोर जन्तु हैं, वह कोई भी उसे दुःख नहीं दे सकते हैं; वेद पढ़ाने या दान लेने और यज्ञ करानेसे ब्राह्मणोंको कुछभी दोष नहीं होता, क्योंकि ब्राह्मण जलती अग्निके समान हैं, चाहे अच्छी तरह वेद पढ़े हों वा न पढ़े हों, चाहे प्राकृतही पढ़े होंवा संस्कृत पढ़े हों उनका अपमान न करना चाहिये, क्योंकि वे राखसे ढंपी हुई अग्निके समान हैं, जैसे मर्घटमें जलनेसे अग्निको दोष नहीं लगता ऐसेही ब्राह्मणको विद्या न पढ़नेसे दोष नहीं लगता है; नगर चाहे छार्दीवारी, द्वार, अटारी आदिसे कैसाभी शोभायमान क्यों न हो, पर ब्राह्मणके बिना उसकी शोभा नहीं होती। वेदको जाननेवाले ज्ञानी, तपस्वी, ब्राह्मण जहां रहते हैं, उसीका नाम नगर है। हे राजन्! गांवमें अथवा जङ्गलमें जहां ब्राह्मण रहते हैं उसीको नगर कहते हैं, और वही तीर्थभी माना जाता है, रक्षा करने-वाला राजा और तपस्वी ब्राह्मणको नमस्कार करके मनुष्य पापोंसे छूट जाता है। पवित्र तीर्थोंमें स्नान करना पवित्र लोगोंका नाम लेना और सज्जनोंसे बातचीत करनाही उत्तम कर्म कहाता है; सज्जनोंके सङ्गसे और मीठी वाणीसे जिन्होंने अपने आत्माको पवित्र किया है, उन्होंको पवित्र कहते हैं; तीन दण्डका धारण करना, जटा बढ़ाना सिरमुड़वाना मौनी होना, छाल पहरना, मृगचर्म पहरना, व्रत करना, स्नान करना, अग्निहोत्र करना, वनमें रहना और शरीरको सुखाना, यदि भाव शुद्ध न हों तो सबही मिथ्या हैं। हे राजन्! विषय विशुद्धिके बिना इन नेत्र आदि छः इन्द्रियोंका रोकना कठिन नहीं है, किन्तु अनुपभोगरूप अमृतलही दुष्कार है, इनमें सबको विकार देनेवाले मनको रोकना

बहुतही कठिन है। जो मन बुद्धि और कर्म्मसे पाप नहीं करते, वही तपस्वी हैं, शरीरको सुखानेवाले तपस्वी नहीं हैं। जिनका अपने जाति-वालों पर दया नहीं है; उसे कुटम्ब पालनेसे धर्म्म नहीं होता है वह केवल हिंसा करता है। संसारत्यागी होना तप नहीं कहलाता है, जो घरमें रहकर पवित्र रहता है, वही मुनि है, सम्पूर्ण जीवों पर दया करनेहीसे सब पापोंसे छूट जाता है; पापकर्म्म अन्न न खानेसे नहीं छूटते अन्नके न खानेसे केवल मांस और हड्डीका पिञ्जरा शरीरही दुःख पाता है। अज्ञानसे कर्म्म करनेका केवल क्लेशही फल होता है, किन्तु पापका नाश नहीं होता है; पुण्य करनेहीसे मनुष्य शुद्ध होता है। अन्नके त्यागनेसे फल मूल और वायुके खानेसे अथवा मौन धारणसे शुद्ध नहीं होता है। न शिर मुड़ानेसे न कुटीमें रहनेसे, न जटा बढ़ानेसे न काठों पर सोनेसे, न अन्न त्याग करनेसे, न अग्निहोत्र करनेसे, न जलमें डूबनेसे और न पृथ्वी पर सोनेसे धर्म्म होता है, क्योंकि बिना ज्ञानसे और उत्तम कर्म्म करनेसे मनुष्य जरा मरण और व्याधियोंसे छूटकर उत्तम गतिको प्राप्त नहीं होता है। जैसे अग्निमें जला बीज फिर उत्पन्न नहीं होता, ऐसाही ज्ञानसे जले हुए क्लेश फिर आत्मामें नहीं आते हैं; जीवसे छूटे हुए क्लेश ऐसे नाश हो जाते हैं, जैसे समुद्रसे अलग होकर समुद्रफेन मिट जाता है। जिससे आत्मज्ञान हो उस एक श्लोक वा आधे श्लोकहीको उत्तम समझना चाहिये। कोई दो अक्षरसे कोई श्लोकके एक चरणसे कोई सौ-श्लोकोंसे और कोई हजारश्लोकोंसे मोक्षका लक्षण समझते हैं। ज्ञानके जाननेवाले वृद्ध लोग कहते हैं, कि निश्चयही मोक्षका लक्षण है, जिसको संशय है उसके इस लोक और पर-लोक दोनोंका नाश हो जाता है। वेद पढ़नेका प्रयोजन केवल ज्ञानप्राप्ति है; ज्ञानी लोग वेदसे ऐसा डरते हैं, जैसे अग्निसे मनुष्य डरते हैं। हे राजन्! तुम सूखे तर्कोंको त्याग कर श्रुति और स्मृतिको धारण करो। एक अक्षय ब्रह्महीको तर्कोंसे सिद्ध करके धारण करो। जिसके साधन उलटे हैं, उसकी बुद्धि कभी ठीक नहीं होती। पहले यत्न पूर्व्वक वेदको पढ़ना, वेद ब्रह्मका स्वरूप है, वेदही तत्व है, उसके जाननेसे जीवको ब्रह्मज्ञान होता है। वेदमें लिखा है आशीर्वाद और कर्म्म तथा प्राणियोंका प्रभाव ये सब युगके अनुसार फल देते हैं। इन्द्रियोंको निर्म्मलता और इन्द्रियोंका रोकना अनाहारादिव्रत कहलाता है। अन्नका त्यागना नहीं; इस लिये इन्द्रियोंका रोकना चाहिये। तपसे स्वर्ग मिलता है, दानसे भोग मिलता है, ज्ञानसे मोक्ष मिलता है, और तीर्थस्नानसे पाप छूटता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! महा तेजस्वी राजा युधिष्ठिर मार्कण्डेय मुनिसे बोले, हे महाराज! आप मुझसे दानकी उत्तम विधि कहिये। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजेन्द्र युधिष्ठिर! जो तुम मुझसे दानधर्म्मकी विधि पूछते हो, सो मुझे भी प्यारी है। हे राजन्! श्रुति और स्मृतिमें लिखा दानका सार है, सो मैं कहता हूं सुनो। हे युधिष्ठिर! पीपलकी छायामें वा जहां पीपलकी हवा आती हो, वहां श्राद्ध करनेसे इस कल्पतक नष्ट नहीं होता, जो मनुष्य धर्म्मशाला बनवाकर और उसमें अन्न आदि भरवाकर दान करता है, उसको सब यज्ञोंका फल होता है; जो नदीमें तैरने वा रथमें जातनेवाले घोड़े दान करता है, वह महा पापोंसे छूट जाता है। जो ग्रहण पूर्णमासी और अमावसको श्राद्ध दान करता है, उसे अक्षय फल प्राप्त होता है, पर्व्वत विशेषमें दान करनेसे दूना और ऋतु विशेषमें दान करनेसे दश गुणा फल पाता है, अयन और मेष तथा तुलाकी संक्रान्ति एवं कन्या और मीनकी

संक्रान्तिमें दान करनेसे छियासी गुणा और वध विधिमें दान करनेसे सौगुणा अधिक फल होता है। जा सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणमें दान देता है, उसको अक्षय फल होता है; ऋतुमें दान करनेसे दस गुणा, अयनमें सौ गुणा, ग्रहणमें सहस्र गुणा, मेष और तुलाकी संक्रान्तिमें अनन्त फल होता है। भूमिके देनेवाले भूमिको नहीं पाते हैं, वाहनके देनेवाले वाहन पर चढ़कर नहीं जाते हैं, किन्तु जो जो वस्तु ब्राह्मणोंको देता है, वह दूसरे जन्ममें पाता है; अग्निको सन्तान सुवर्ण है, विष्णुकी सन्तान पृथ्वी और सूर्य्यको सन्तान गौ है, जा सुवर्ण, गौ और पृथ्वी दान करता है, उसको तीनो लोक दान करनेका फल प्राप्त होता है, तीनों लोकमें दानसे बढ़कर कल्याण करनेवाला कोई धर्म्म नहीं है, इसलिये विमल बुद्धिवाले दानहीको संसारमें प्रधान मानते हैं।

२९९ अध्याय समाप्त।

मारकण्डेय समस्या प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन! महाराज युधिष्ठिर राजर्षि इन्द्रद्युम्नकी कथा महाभाग मार्कण्डेय मुनिसे सुनके तपोवृद्ध निष्पाप दीर्घायु मार्कण्डेयसे पूछने लगे, हे धर्म्मज्ञ! आप देवता, दानव, राक्षस, राजवंश, और ऋषिवंशको जानते हैं, हे द्विजोत्तम! इस संसारमें आपसे कुछ छिपा नहीं है। हे मुने! आप सर्प, मनुष्य, राक्षस गन्धर्व्व, अप्सरा, देव यक्ष और किन्नरोंकी दिव्य कथाको जानते हैं, हे द्विजसत्तम! मैं प्रसिद्ध इक्ष्वाकुवंशी राजा कुवलयाश्वकी उस कथाको ठीक ठीक सुनना चाहता हूं, जिससे वह धुन्धुमार नामको प्राप्त हुए थे। हे भृगुवंशियोंमें उत्तम! कुवलयाश्वका यह उलटा नाम कैसे हुआ आप मुझसे कहिये।

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, हे राजन्! युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुनके महामुनि मार्कण्डेयने धुन्धुमारकी कथाका आरम्भ किया। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! मैं तुमसे धर्म्म भरी राजा धुन्धुमारकी कथा कहता हूं, तुम सुनो। जैसे इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए राजा कुवलयाश्व धुन्धुमार नामको प्राप्त हुआ था, वह कथा तुम सुनो। हे कौरव! हे भारत! महर्षि उत्तङ्क एक प्रसिद्ध ऋषि थे, उनका आश्रम किसी रमणीय मरुभूमि देशमें था। हे राजन्! उत्तङ्कने विष्णुको प्रसन्न करनेकी इच्छासे अनेक वर्षतक घोर तप किया। उत्तङ्कसे प्रसन्न होकर विष्णुने साक्षात दर्शन दिये। विष्णु भगवानको देखकर उत्तङ्कने अनेक प्रकारकी स्तुति करी। उतङ्क मुनि बोले, हे देव! तुमनेही देवता दैत्य मनुष्यों सहित सम्पूर्ण प्रजाको तथा अचर और चर जगतको बनाया है, तुमने ब्रह्मा और वेदको रचा, है, हे महा प्रकाशयुक्त देव! आकाश तुम्हारा सिर, सूर्य्य और चन्द्रमा तुम्हारे नेत्र, वायु श्वास और अग्नि तेज हैं, हे अच्युत! सम्पूर्ण दिशा तुम्हारे हाथ और समुद्र कोख है; हे मधुसूदन! पर्व्वत तुम्हारी पिण्डरी और अन्तरीक्ष जङ्घा हैं; देवी पृथ्वी तुम्हारे चरण और औषधि तुम्हारे रोम हैं; हे देव! इन्द्र, चन्द्रमा, अग्नि, देवता, असुर और नाग लोग सम्पूर्ण तुम्हारी स्तुति करते हैं, हे जगत्पते! तुम सब प्राणियोंमें व्यापक हो। महापराक्रमी यागो तथा महर्षि लोग तुम्हारो स्तुति करते हैं; हे पुरुषोत्तम! तुम्हारे प्रसन्न रहनेसे जगतमें प्रसन्नता रहती हैं, और तुम्हारे क्रोध करनेसे जगतमें भय फैल जाता है; तुमही एक जगतके भयनाश करनेवाले हो। तुमही देवता और मनुष्योंके सुख देनेवाले हो, तुमहीने तीन पैरसे तीनों लोकको छीना था; बढ़े हुए दैत्योंका तुम्हीने नाश किया था; तुम्हारेही प्रतापसे देवतोंको परम पद मिला है; हे महाशोभायमान देव! तुम्हारेही क्रोधसे दैत्योंको पराजय हुई, तुमही सब

प्राणियोंके कर्त्ता और हर्ता हो; तुम्हारी आराधनासे देवतोंके सुखको वृद्धि होती है। हे राजन्! इस प्रकारसे महात्मा उत्तङ्ककी स्तुतिको सुनकर विष्णु भगवान उत्तङ्कसे बोले, हे उत्तङ्क! मैं तुमसे प्रसन्न हूं, तुम वर मांगो। उत्तङ्क बोले, हे महाराज! मुझे आपके दर्शन हुए; इसीसे सब वर प्राप्त होगया। तुमही सनातन पुरुष और जगतके रचनेहारे हो। विष्णु बोले, हे द्विजसत्तम! मैं तेरे धीर स्वभावसे प्रसन्न हुआ। तुम मुझसे अवश्य वर मांगो। हे राजन्! विष्णुके ऐसे वचन सुनके उत्तङ्कने हाथ जोड़कर वर मांगा। उत्तङ्क बोले, हे भगवन! हे कमलनयन! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं, तो यही वर दोजिये, कि मेरी बुद्धि सदा धर्म्म, सत्य, और इन्द्रियोंके जीतनेमें लगी रहे और आपकी भक्तिमें सदा अभ्यास रहे। भगवान विष्णु बोले, हे ब्राह्मण! मेरी कृपासे ऐसाही होगा, वह योगभी तुम्हें प्राप्त होगा, जिसे देवतालोग जानते हैं, इस योगके प्रतापसे तुम संसारका महा कार्य्य करोगे, हे ब्राह्मण! धुन्धुमार नामक असुर संसारका नाश करनेको महा तप करेगा; इक्ष्वाकु कुलमें महा पराक्रमो बृहदश्व राजा होगा; उसका पुत्र शुद्ध और दाता कुवलयाश्व नामका होगा। कुवलयाश्व मेरे योगका आराधन करेगा; फिर तुम्हारे शासनसे वह धुंधुमार होगा। हे राजन युधिष्ठिर! इतना कहकर विष्णु वहीं अन्तर्द्धान हो गये।

धुन्धुमारोपाख्यानमें
२०० अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! इक्ष्वाकुके वंशमें शशाद नामक राजा अयोध्यामें थे, शशादके वोर्य्यवान पुत्र ककुत्स्थ; ककुत्स्थके अनेना, अनेनाके पुत्र पृथु हुए; पृथुके पुत्र विश्वगश्व विश्वगश्वके पुत्र अद्रि, अद्रिके पुत्र श्राव हुए। हे युधिष्ठिर! श्रावहीने श्रावस्ती नगरी वसायी है, राजा श्रावके पुत्र बृहदश्व और बृहदश्वके कुवलयाश्व पुत्र हुए; राजा कुवलयाश्वके इक्कोस हजार पुत्र उत्पन्न हुए। सब पुत्र विद्या पढ़े हुए और बलवान जीतनेमें अयोग्य थे, समय प्राप्त होनेपर राजा बृहदश्वने अपने पुत्र कुवलयाश्वको शूर और धार्म्मिक समझके राज्य देदिया। राजा बृहदश्व अपने पुत्रको राज्य देकर तप करनेकी इच्छासे वनको चलेगये। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ युधिष्ठिर! राजा बृहदश्वको वनमें जाता हुआ सुनके ब्राह्मणोंमें उत्तम उत्तङ्कने निवारण किया। उत्तङ्कने कहा, हे शस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ नरोत्तम! आप प्रजाकी रक्षा कीजिये; आपकी रक्षासे हमलोग निर्भय रहते हैं, हे राजन्! तुम्हारी रक्षासे पृथ्वी निर्भय रहती है, इसलिये तुम वनको जानेके योग्य नहीं हो, प्रजाकी रक्षा करनेमें जैसा महा धर्म्म है, वैसा वनके जानेमें नहीं है; तुम अपनी बुद्धिको विपरीत मत करो। हे राजन्! प्रजापालन धर्म्मको पहले राजालोग करते आये हैं, तुम उसीको करो राजाको प्रजाकी रक्षा करनी चाहिये; हमलोग उद्विग्न होकर तप नहीं कर सकते हैं। हे राजन्! मेरे आश्रमके समीप मारवाड़ देशमें समुद्रकी बालुकासे पूर्ण उज्जालक नाम तीर्थ है, जो बहुत योजनका लम्बा और चौड़ा है; वहीं पर महा भयानक महा पराक्रमो मधु दैत्यका पुत्र धुन्धुर नामक दैत्य भूमिके भीतर रहता है। हे राजन्! उसको मारकर तुम जंगलको जाना; वह राक्षस संसारको नाश करने और देवतोंको जीतनेके वास्ते भयानक तप कर रहा है। हे राजन्! उस दैत्यको देवता, दैत्य, राक्षस, सर्प, यक्ष, और गन्धर्व्व नहीं मार सकते हैं। ब्रह्माने उसे यही वर दिया है। हे राजन्! तुम्हारा कल्याण हो, तुम उसे मारो, इससे उलटी बुद्धि मत

सहित वहां इकट्ठे होगये। विष्णुके तेजके प्रतापसे राजा कुवलयाश्व अपने पुत्रोंके सहित चारों ओर धंधुरको ढूंढने लगे। राजा कुवलयाश्व और उनके पुत्रोंने उस वालुकामें खोद खोदकर समुद्र बना दिया। सात दिनके पीछे खोदते खोदते महाबली धंधुरका शरीर उस बालुकामें मिला। उसका शरीर सूर्यके समान प्रकाशमान था। हे राजशार्दूल! उस समय धंधुर प्रलयकालकी अग्निके समान पश्चिम दिशाको सोया हुआ था। राजा कुवलयाश्वके पुत्रोंने चारों ओरसे उसे घेर लिया और तीक्ष्ण बाण, गदा, मूषल, पट्टिश, परिघ, और खड्गसे मारने लगे। उनकी मारसे क्रोध करके महाबली धन्धुर दैत्य उठा और सब अस्त्रोंको खागया। उसके मुखसे प्रलय कालके अग्निके समान अग्नि निकली और राजाके पुत्रोंको जलाने लगी मुखसे उत्पन्न हुई अग्निसे जगत ऐसे जलने लगा, जैसे कपिलके क्रोधकी अग्निसे सगरके पुत्र जले थे। हे राजन्! वह कर्म सब लोगोंको अद्भुत मालुम होने लगा। राजाके पुत्र जब अग्निसे जल गये। तब महात्मा कुवलयाश्व उस कुम्भ-कर्णके समान दैत्यपर दौड़े। जब उस राजाकी देहसे बहुत सा जल निकला, तब राजाने जल-मय निज तेजसे दैत्यकी अग्निको शान्त किया। योगी कुवलयाश्वने अपने योग-बलसे दैत्यकी अग्निकी शान्तकर उस महा पराक्रमी दैत्यको भस्म करनेके वास्ते ब्रह्मास्त्र छोड़ा। हे राजेन्द्र! हे भरतकुल श्रेष्ठ! ब्रह्मास्त्रने उस दैत्यको भस्म कर दिया। राजा कुवलयाश्व उस महासुरको भस्म करके इन्द्रके समान शोभायमान हो गये। हे राजन्! धन्धुमारके मारनेसे राजा कुवलयाश्व धन्धुमार नामसे प्रसिद्ध हुए। देवता और महर्षियोंने प्रसन्न होकर राजा कुवलयाश्वसे कहा कि हम लोग तुमसे प्रसन्न हैं, जो इच्छा हो सो वर मांगो। राजा कुवलयाश्वने हाथ जोड़ और प्रसन्न होकर कहा, महाराज! मैं यही वर मांगता हूं, कि मैं ब्राह्मणोंको दान देऊं, शत्रुओंसे न जीता जाऊं विष्णुसे मेरी मित्रता रहे; प्राणियोंसे द्वेष न करूं और धर्म्ममें प्रीति रहे तथा स्वर्गमें मुझे अक्षय वास मिले। सब देवतोंने प्रसन्न होकर कहा कि ऐसाही होगा। ऋषि, गन्धर्व, और बुद्धिमान महात्मा उतङ्कने आदरके सहित राजाको आशीर्वाद दिया। देवता और ऋषि लोगभी अपने आश्रमपर चले गये। हे राजन् युधिष्ठिर! राजा कुवलयाश्वके उस युद्धमें तीन पुत्र बच गये—एक दृढ़ाश्व, दूसरा कपिलाश्व और तीसरा चन्द्राश्व। हे राजन्! उन्हींसे इक्ष्वाकुवंशकी परम्परा चली आती है! इस प्रकारसे राजा कुवलयाश्व धंधुको मारनेके लिये धुंधुमार नामसे प्रसिद्ध हुए। यह धुंधुमार-का चरित्र पुण्यको बढ़ानेवाला और कीर्त्तिको विस्तार करनेवाला है, जो [illegible] वा सने वह पुत्रवान, धर्म्मात्मा, दीर्घायु, [illegible]वान होता है, उसको रोगोंका भय नहीं होता है, और सुखी रहता है।

धन्धुमारोपाख्यान और
२०३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब भरतश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिरने महा तेजस्वी मार्कण्डेय मुनिसे धर्म्मका कठिन प्रश्न किया कि हे भगवन्! मैं स्त्रियोंका उत्तम धर्म्म सुनना चाहता हूं, क्योंकि यह धर्म्म बहुत सूक्ष्म है, आप कृपा करके मुझसे कहिये; हे विप्रर्षि! सूर्य्य, चन्द्रमा, वायु पृथ्वी और अग्नि, ये प्रत्यक्ष देवता हैं; ऐसेही पिता, माता, भगवान और गुरुभी प्रत्यक्ष देवता हैं। जैसे ये सब गुरुलोग मान्य हैं, वैसेही पतिव्रता स्त्रीभी मानने योग्य हैं। पतिव्रताओंका धर्म्म बहुत कठिन जान पड़ता है, इस लिये आप पति-

व्रताओंका माहात्म्य हम लोगोंसे वर्णन कीजिये। हे निष्पाप! सब इन्द्रियोंको रोककर केवल पतिकोही देवता मानना और उसीका ध्यान करना मुझको बहुत कठिन जान पड़ता है। माता, पिताकी सेवा और पतिकी सेवा करना और स्त्रीधर्म्म इससे कठिन और धर्म्म नहीं दीख पड़ता है। अच्छे आचारवाली स्त्रियां जो आदरके सहित व्रत करती हैं वह बहुतही कठिन काम करती हैं। जो स्त्री सत्य बोलती है, जो दश महीने तक गर्भ धारण करती है, जो पुत्र उत्पत्तिके समय प्राणसंकट और महा दुःखको पाकर भी पुत्र उत्पन्न करती है, फिर बड़े स्नेहके साथ पुत्रको पालती है और जो स्त्री कुकर्म्ममें डूबकर बुरे काम करती है, यह सब मुझे बहुत कठिन जान पड़ते हैं। हे ब्राह्मणोत्तम! क्षत्रियोंके धर्म्मका सारभी मुझसे कहिये; महात्माओंकाभी धर्म्म करना कठिन है। हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ! इस प्रश्नको आप यथावत कहिये, मुझे सुननेकी बड़ी इच्छा है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! हे भरतश्रेष्ठ! मैं इस कठिन प्रश्नके उत्तरको कहता हूं आप सुनें; कोई आचार्य माताको अधिक कोई आचार्य्य पिताको अधिक मानते हैं। वह माता बहुत कठिन काम करती है, जो पुत्रोंका पालन करती है। तपस्या, देवताओंकी पूजा और शिक्षा आदि उपायोंसे पिता पुत्रकी उन्नति करता है, इस रीतिसे बड़े कष्टके साथ दुर्लभ पुत्रको पाकर पिता और माता यही विचार करते हैं, कि यह पुत्र कैसा होगा, हे राजन्! पिता और माता पुत्रसे यश कीर्त्ति, ऐश्वर्य्य, सन्तान और धनकी आशा रखते हैं, हे राजेन्द्र! जो उनकी आशाको पूरी करता है, वही धर्म्मका जाननेवाला है। जिससे माता और पिता सन्तुष्ट होते हैं, उसकी इस लोक और परलोकमें कीर्त्ति सदा बनी रहती है। हे राजन्! स्त्रियोंके वास्ते श्राद्ध, व्रत और यज्ञ आदि कोई क्रिया नहीं लिखी है; स्त्री जो पतिकी सेवा करती है, उसीसे उसको स्वर्ग मिलता है। हे राजन युधिष्ठिर! इसी प्रकरणमें प्रतिव्रता स्त्रीका धर्म्म कहता हूं, तुम सुनो।

पतिव्रतोपाख्यानमें
३०४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, किसी देशमें एक जातिश्रेष्ठ, वेद पढ़नेवाले, तपस्वी, धर्म्मात्मा कौशिक नामक ब्राह्मण रहते थे। वे अङ्गोंके सहित वेद पढ़ते थे। एक दिन वे किसी वृक्षके नीचे बैठे वेद पढ़ रहे थे और उस वृक्ष पर एक बगुली छिपी हुई बैठी थी। उसने ब्राह्मणके ऊपर बीट कर दी, उसको देखकर ब्राह्मणने बहुत क्रोध किया और क्रोधसे बगुलीको देखा। ब्राह्मणके देखनेसे बगुली मरकर पृथ्वीपर गिर गई। बगुलीको पृथ्वीपर गिरी देख ब्राह्मणको बहुत दया आई और सोचने लगे कि मैंने क्रोधके वशमें होकर यह बड़ा बुरा काम किया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ऐसे कहकर वह विद्वान ब्राह्मण गांवमें भीख मांगने चले गये; गांवमें जाकर उत्तम कुलोंसे भिक्षा मांगने लगे। मांगते मांगते एक उत्तम कुलके घर जाकर भिक्षा मांगी और कहा, कि कुछ दो। तब स्त्रीने कहा खड़े रहो देती हूं। वह स्त्री बरतन मांज रही थी, इतनेहीमें उसका पति भूखसे व्याकुल होकर घरमें आया और स्त्री पतिको देखकर ब्राह्मणको भीखदेना भूल गई; और अपने पतिको पाद्य, आचमन और आसन देने लगी। उस स्त्रीने अपने पतिको खानेके वास्ते भक्षण करने योग्य अन्न आदरसे दिया। हे राजन् युधिष्ठिर! वह स्त्री सदा अपने पतिका जूंठ खाती थी, पतिहीको

चित्तके अनुसार चलती थी; मन वचन, व कर्म्मसे कभी दूसरे पुरुषकी इच्छा नहीं करती थी; वह सब प्रकारसे पतिहीकी सेवा करती थी; वह उत्तम कर्म्म करनेवाली घरके कामोंमें चतुर और कुटम्बका हित करनेवाली थी और पतिका सदा हित चाहती थी। देवता और अतिथिकी सेवा और सास ससुरका अच्छीतरहसे आदर करती थी। सदाही इन्द्रियजित रहती थी। जब उसका पति भोजन कर चुका, तब उसने देखा कि ब्राह्मण बाहर खड़ा है। हे भरतसत्तम! उसे पतिकी सेवा करते करते जब ब्राह्मणकी याद आई, तब वह पतिव्रता बहुत लज्जित हुई और भिक्षा लेकर ब्राह्मणके पास गई। ब्राह्मण बोले, हे उत्तम स्त्री! तुम मुझे "खड़ा रहो" ऐसा कहकर चली गई और फिर मुझको विदा न किया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजा! ब्राह्मणका तेज और क्रोधसे जलते हुए देखकर वह पतिव्रता शान्तिपूर्व्वक बोली, हे विद्दन! आप क्षमा कीजिये, मैं पतिको देवता मानती हूं; वह भूखे थे; उनकी सेवा करने लगी। ब्राह्मण बोले, हे पतिव्रते! तैंने ब्राह्मणको छोटा और पतिको बड़ा समझा? ब्रह्माभी ब्राह्मणोंको नमस्कार करते हैं, फिर मनुष्य किस गिन्तीमें है। हे अभिमानि! तैंने वृद्धोंके वचन नहीं सुने, ब्राह्मण अग्निके समान होते हैं, पृथ्वीको जला सकते हैं। स्त्री बोली, हे विप्रर्षि! मैं बगुली नहीं हूं; हे तपोधन! आप क्रोधको छोड़िये; क्रोध करकेही मेरा क्या करेंगे? उसपर मैं ब्राह्मणका अपमान नहीं करती हूं और ब्राह्मणोंकी देवतोंके समान मानती हूं; हे पापरहित ब्राह्मण! मेरे इस अपराधको आप क्षमा कीजिये; मैं ब्राह्मणोंके तेजको जानती हूं, जिन्होंने क्रोधसे समुद्रको खारी और पीनेके अयोग्य बना दिया; मैं ऐसे आत्मज्ञानी महा तपस्वी मुनियोंकोभी जानती हूं जिनके क्रोधकी दण्डकाबनकी अग्नि अबतक नहीं बुझती है; ब्राह्मणोंके अनादरसे दुष्टात्मा महा असुर वातापी अगस्त्य ऋषिके पेटमें पच गया; हे ब्राह्मण! ब्राह्मणोंके अनेक प्रभाव सुननेमें आते हैं; ब्राह्मणका क्रोधभी भारी और कृपाभी भारी होती है; हे पापरहित! मेरी इस भूलको आप क्षमा कीजिये; हे ब्राह्मण! पतिकी सेवा करना जो धर्म्म है, वह मुझे बहुतही प्यारा है; मेरे पति देवतोंमेभी देवता हैं, उसी सामान्य धर्म्मको मैं करती हूं। हे ब्राह्मण! पतिसेवाका जैसे फल है उसको तुम देखलो। तुमने बगुलीको अपने क्रोधसे जला दिया था, उसको मैंने जान लिया; हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! क्रोधही शरीरमें रहनेवाला शत्रु है; जो क्रोध और मोहको त्याग देता है, उसीको देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं; जो संसारमें सत्य बोले, गुरुको सन्तुष्ट करे और मार खाकर नहीं मारे, उसीको देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं; जो इन्द्रियोंको जीतने वाला, वेदपाठी, पवित्र और कामदेवको जीतनेवाला है, उसीको देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं। जिस धर्म्मात्मा बुद्धिमानको अपने समान जगत दीखता हो, उस धर्म्म करनेवालेको देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं। जो वेद पढ़े और पढ़ावे, यज्ञ करे वा करावे, दान लेकर यथाशक्ति दान दे उसको देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं; जो ब्रह्मचारी सत्यवक्ता वेदपाठी ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ अपने पढ़ने पढ़ानेमें सावधान रहे, उसे देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं, ब्राह्मणके इतने कर्म्म हैं; जो सत्य बोलता हो, जिसका मन झूठमें न जाता हो, वही ब्राह्मण है। ब्राह्मणोंका धर्म्म वेद पढ़ना, मनको विषयसे रोकना, शुद्ध रहना इन्द्रियोंको जीतनाही कहते हैं। हे ब्राह्मणोत्तम! धर्म्मको जाननेवाले महात्मा लोग सत्य और

गुह्यताकोही धर्म्म कहते हैं ; धर्म्म जानना बहुतही कठिन है ; वह धर्म्म सत्यहीमें रहता है। बहुलोगोंकी आज्ञा है, कि धर्म्ममें वेदही प्रमाण है, हे ब्राह्मण ! धर्म्म बहुत प्रकारका दीखता है। आपभी वेदपाठी पवित्र और धर्म्मको जाननेवाले हैं, परन्तु मेरी बुद्धिमें आप धर्म्मको यथावत नहीं जानते ! हे ब्राह्मण ! यदि आप धर्म्मको नहींजानते हैं, तो जनकपुरीमें जाकर धर्म्मवधिकसे पूछिये। जनकपुरीमें मातापिताकी सेवा करनेवाला, सत्यवादी, इन्द्रियजित एक व्याधा रहता है, वह तुमको धर्म्मका उपदेश करेगा। हे द्विजोत्तम! हे ब्राह्मण ! तुम्हारा कल्याण हो, जो मैंने बहुत कहा ; उसकोभी आप क्षमा करने योग्य हैं। हे अनिन्दित ! हे ब्राह्मण ! स्त्री किसीकेभी मारने योग्य नहीं हैं, और तुम तो धर्म्मको जानते हो। ब्राह्मण बोले, हे कल्याणि ! मेरा क्रोध चला गया, मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं, तुमने मेरे अभिमानको दूर किया, मेरा कल्याण हुआ, तुम्हारा कल्याण हो, मैं जनकपुरी जाऊंगा और अपना कार्य्य सिद्ध करूंगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उस पतिव्रतासे विदा होकर कौशिक ब्राह्मण अपनी आत्माकी निन्दा करते हुए अपने घरको चले गये।

पतिव्रतोपाख्यान और
२०५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर ! स्त्रीके कहे हुए सम्पूर्ण वचनोंका स्मरण करके कौशिक अपने आत्माको निन्दा करते हुए, पापियोंके समान बैठ गये। सूक्ष्म धर्म्मकी चिन्ता करते हुए कौशिक ब्राह्मण बोले, कि स्त्रीके कहे बचनों पर श्रद्धा करके जनकपुरीको जाता हूं ; आत्मज्ञान और धर्म्मको जाननेवाला व्याध जिस जनकपुरीमें रहता है, मैं उन्हीं तपोधन व्याधके पास जाके धर्म्मके लक्षण पूछूंगा। ऐसे विचार कर और स्त्रीके वचनोंकी श्रद्धा करके तथा बगुलीको स्मरण करके जनक पुरीको बड़े आनन्दके साथ गये। वह बहुतसे गांव, वन, और नगरोंको लांघते हुए महाराज जनकसे रक्षित मिथिला पुरीको चले। उन्होंने धर्म्म, यज्ञ, और उत्सवोंसे भरी हुई मिथिला पुरीको देखा। उसमें महल, दुमहले, और अनेक अटारियां विराजथीं। उस रमणीय नगरीमें कौशिक मुनिने प्रवेश किया। जहां अनेक विमान घूमते फिरते थे, जहां अनेक सुन्दर सुन्दर बजार और उत्तम उत्तम मार्ग विराजमान थे ; जहां अनेक हाथी, घोड़े, रथ और योद्धा लोग घूम रहे थे ; जहां पुष्ट और प्रसन्न लोग विहार कर रहे थे ; जहां सदाही उत्सव हुआ करते थे, उस मिथिलापुरीको जाकर कौशिक मुनिने देखा। वहां जाकर उन्होंने धर्म्म-व्याधका घर पूछा और ब्राह्मणोंने बता दिया। वहां जाकर उन्होंने उत्तम नामधारी व्याधको देखा। उन्होंने देखा वह तपस्वी भैंसोंके मांसको बेच रहा है, उस समय वहांपर मांस लेनेवालोंकी महा भीड़ थी, इसलिये ब्राह्मण अलग जाकर एकान्तमें बैठ गये। उस व्याधने जाना कि एक ब्राह्मण आये हैं, तब बहुत घबराकर उठा और जहां एकान्तमें ब्राह्मण बैठा था, वहां आया और कहने लगा, हे द्विजोत्तम ! हे भगवन ! हम आपको प्रणाम करते हैं ; और आपका स्वागत करते हैं ; आपका कल्याण हो। हम व्याध हैं, कहिये आपका कौनसा काम करें ? आपसे जो एक पतिव्रता स्त्रीने कहा था, कि तुम मिथिलापुरीको जाओ ; जिस कामको आप आये हैं, सो मैं सब जानता हूं। ऐसा सुन उस ब्राह्मणको बड़ा आश्चर्य हुआ। ब्राह्मणने अपने मनमें विचार किया कि यह दूसरा आश्चर्य देखा। व्याधने कहा कि तुम्हारा

स्थान कुदेशमें है। हे पापरहित! यदि तुम्हारी इच्छा हो तो घरको चलो। ब्राह्मणने प्रसन्न होकर कहा कि बहुत अच्छा चलो। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, तब वह व्याध ब्राह्मणको आगे करके घरको चला। उसने अपने घरमें जाकर उस ब्राह्मणको आसन दिया, तब पाद्य अर्घ और आचमनसे पूजा की। ब्राह्मणने उसकी पूजाको ग्रहण किया। तब सुखसे बैठकर उस व्याधसे पूछा कि जो कर्म तुम करते हो सो हमारी बुद्धिमें तुम्हारे योग्य नहीं है; हे तात! हम तुम्हारे इस घोर कर्मको देख कर बहुत दुःख करते हैं। व्याध बोला, हे विप्र! यह हमारे पिता प्रपितामहका कर्म है और हमारे कुलके योग्य है, हम अपने कर्मको करते हैं, इस लिये आपको क्रोध नहीं करना चाहिये। ब्रह्माने पहले सब जातियोंके अलग अलग कर्म बना दिये हैं, यत्न करके हम वृद्ध पिता माताकी सेवा करते हैं; हम सत्य कहते हैं, हम कभी किसीकी निन्दा नहीं करते हैं; देवता अतिथि और सेवकोंसे जो अन्न बचता है उसे खाते हैं; बुरेकी वा बलवान कोभी निन्दा नहीं करते; हे ब्राह्मणोत्तम! पूर्वकृत कर्मका फल कर्त्ताको प्राप्त होता है। खेती, की रक्षा और व्यापार यह जगतका जीवन है; राजनीति, दण्ड, और वेद विद्यासे ही जगतकी स्थिति है; शूद्रका कर्म सेवा वैश्यका कर्म खेतीकरना, क्षत्रीका युद्ध करना और ब्राह्मणका कर्म ब्रह्मचर्य्य तपस्या, वेदपाठ और सत्य बोलना है। राजा धर्मसे प्रजाकी रक्षा करता है, इसीसे प्रजा अपने कर्म्मोंको करती है; जो अपने कर्मोंको नहीं करते हैं उन्हें दण्ड देकर राजा उनके कर्ममें लगाता है; राजासे प्रजाको सदा डरना चाहिये; राजा प्रजाको कुकर्म्मोंसे ऐसा निवारण करता है। जैसे मृगको बाणोंसे मारते हैं। हे ब्राह्मण! इस राजा जनकको नगरीमें कोई भी कुकर्म्मी नहीं है; चारों वर्ण अपने अपने कर्मको करते हैं, यह राजा जनक ऐसा धर्मात्मा हैं. कि यदि इनका पुत्र भी दुर्वृत्त वा दण्डनीय हो, तो ये उसे भी दण्ड देते हैं और किसी धर्मात्मासे ग्लानि नहीं करते। जो राजा सब प्रजाको धर्ममें लगाता है उसकी लक्ष्मी, और राज्य बढ़ता है; क्षत्रियोंका परम धर्म दण्डही है। राजा अपने धर्महीसे लक्ष्मीको बढ़ानेकी इच्छा रखते हैं, राजाही चारों वर्णोंका रक्षक होता है। हे ब्राह्मण! मैंने आपसे पशुओंको नहीं मारा, परन्तु दूसरेके मारे हुए पशुओंको बेचता हूं; मैं मांस भक्षण नहीं करता; हे ब्राह्मण! मैं ऋतु कालहीमें अपनी स्त्रीके पास जाता हूं और सदा व्रत करता हूं; केवल रात्रिमें एक समय भोजन करता हूं; हे ब्राह्मण! जो प्राणी शील रहित हैं, वह कभी शीलवान हो जाते हैं; हिंसा करनेवाला धर्मात्मा होजाता है। राजाके धर्मसे प्रजा धर्मात्मा और राजाके अधर्मसे अधर्मी होजाती है; भयानक लोग, बौने, कुबड़े बड़े सिरवाले, नपुंसक, बहरे और अन्धेलोग राजाके अधर्मसे होते हैं; इसी कारणसे यह राजा जनक प्रजाको पालते हैं; सब प्रजाके ऊपर कृपा रखते हैं, इसीसे सब प्रजा धर्ममें लगी रहती है। हे ब्राह्मण! जो लोग मेरी निन्दा करते हैं, और जो स्तुति करते हैं, उन दोनोंको अच्छे कर्मोंसे प्रसन्न करनेकी चेष्टा करता हूं। जो अपने धर्मके अनुसार सेना रखकर प्रजाके धर्मकी रक्षा करते हैं, वही राजा कहलाते हैं, और लोग चोर हैं; जो कि कुछ आजीविका उपाय नहीं करते हैं। अपनी सामर्थ्यके अनुसार अन्न दान करते हैं, वही धर्मात्मा हैं। मान्य लोगोंकी पूजा करना, सब प्राणियोंमें दया रखना और त्याग इसके समान मनुष्योंका और कोई उत्तम गुण नहीं हैं। हे ब्राह्मण! झूठको त्यागि, बिना कहेही